Website : www.akhilbharathindumahasabha.org
E-mail : editor.hindusabhavarta@akhilbharathindumahasabha.org
वर्ष-42 अंक-11-12 (संयुक्तांक) कल्पादि सम्वत् 1972949118 पृष्ठ संख्या 60

वीर सावरकर विशेषांक

प्रति अंक मूल्य :12 रूपये
वार्षिक शुल्क 150/-
प्रत्येक बुधवार को प्रकाशित

अखिल भारत हिन्दू महासभा का मुखपत्र

साप्ताहिक हिन्दू सभा वार्ता

वीर विनायक दामोदर सावरकर

135वीं जयंती (28 मई 2018)

दिनांक 30 मई से 12 जून 2018 तक (संयुक्तांक)

द्वि. ज्येष्ठ कृष्ण एकम् से द्वि. ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी सम्वत् 2075 तक

वीर विनायक दामोदर सावरकर 135वीं जयंती की चित्रावली

साप्ताहिक हिन्दू सभा वार्ता

वर्ष-42 अंक 11-12

दिनांक 30 मई से 12 जून 2018 तक

द्वि.ज्येष्ठ कृष्ण एकम् से द्वि.ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी सम्वत् 2075 तक

सम्पादक
मुन्ना कुमार शर्मा

प्रबन्ध सम्पादक
वीरेश त्यागी

पृष्ठ सज्जा
राकेश मित्तल

वर्तनी शोधन
मनमोहन जोशी

प्रकाशक
मुन्ना कुमार शर्मा

अखिल भारत हिन्दू महासभा
हिन्दू महासभा भवन, मन्दिर मार्ग
नई दिल्ली-110001

मुद्रक
स्कैन 'एन' प्रिन्ट 115, कीर्ति नगर
इन्डस्ट्रीयल एरिया, दिल्ली

इस अंक में

2. अध्यक्षीय .... चन्द्र प्रकाश कौशिक
3. सम्पादकीय .... मुन्ना कुमार शर्मा
4. स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर ....साभार क्रान्तिवीर सावरकर
6. सावरकर के सपनों का भारत .... साभार-जनज्ञान
8. हिन्दू महासभा की अखिल भारतीय स्तर पर स्थापना ..... मुन्ना कुमार शर्मा
15. हिन्दू, हिन्दुत्व और वीर सावरकर .... डॉ. हरीन्द्र श्रीवास्तव
17. अखण्ड भारत के स्वप्न द्रष्टा थे वीर सावरकर............. तेलूराम कांबोज
21. महान देशभक्त वीर सावरकर .... शुद्धि समाचार
23. वीर सावरकर ने भारत विभाजन का विरोध .... शिवकुमार गोयल
25. राष्ट्रीय अध्यक्ष चन्द्र प्रकाश कौशिक के अध्यक्षीय काल में हिन्दू महासभा द्वारा स्थापित मील के पत्थर (हिन्दू महासभा के कार्यों का लेखा-जोखा)
26. हिन्दू हृदय सम्राट वीर सावरकर .... मनमोहन गोयल
27. हैदराबाद सत्याग्रह में वीर सावरकर की भूमिका .... सत्य चक्र
29. अखिल भारत हिन्दू महासभा का गठन .... राघव मिश्र
32. अखिल भारत हिन्दू महासभा के उद्देश्य
34. सावरकर के 'आत्मार्पण' पर श्रद्धांजलि सुमन .... साभार-जनज्ञान
35. बाबाराव सावरकर की संघ को देन .... प्रो.देवेन्द्र स्वरूप
38. हिंदुत्व के प्रमुखतम अभिलक्षण .... साभार-सावरकर समग्र
39. हिंदू धर्म से हिंदू की परिभाषा करना अनुचित .... साभार-सावरकर समग्र
44. हमारी राष्ट्रभाषा संस्कृतनिष्ठ हिंदी .... साभार-सावरकर समग्र
52. अमर सेनानी वीरसावरकर .... शिवकुमार गोयल
56. सावरकर का अध्यक्षीय काल (१६३७-१६४२) .... वीरेश त्यागी

High TEch
Windows Blinds

VISHAL INTERIOR

• Window Covering • Window Blinds • Lifestyle

Vishal Gupta / 9999218163 Chanhal Khandelawal / 8826446431

B-5, Nagar Complex, New Ashok Nagar, Delhi-110096

NIKI, TECH SOLUTIONS

Design Engineering
Industrial Automations
Erestion

Sanjay. K
+91-98106-27684
+91-83689-37089

A-6, Marrum Nagar, Near V. Tyagi Parshad BJP,
Ghaziabad-201003
B-13, Roopali, Enclave, Karala, Delhi

भारत बनेगा हिन्दुस्थान

अध्यक्षीय

राष्ट्रीय उद्बोधन

चन्द्र प्रकाश कौशिक

राष्ट्रीय अध्यक्ष

स्वराज्य के लिए मुस्लिम सहयोग की आवश्यकता समझकर कांग्रेस ने जब मुसलमानों के तुष्टीकरण की नीति अपनाई तो कितने ही हिंदू देशभक्तों को बड़ी निराशा हुई। फलस्वरूप सन १६१५ में पूज्य पं० मदनमोहन मालवीय के नेतृत्व में हरिद्वार में हिंदू महासभा की स्थापना की गई। सन १६१६ में लोकमान्य तिलक की अध्यक्षता में लखनऊ में कांग्रेस अधिवेशन हुआ। तिलक जी भी मुस्लिमपोषकनीति से क्षुब्ध थे, फिर भी कांग्रेस ने ब्रिटिश अधिकारियों के प्रभाव में पड़कर एकता और राष्ट्रहित की दुहाई देकर मुस्लिम लीग से समझौता किया। जिसके कारण सभी प्रांतों में मुसलमानों को विशेष अधिकार और संरक्षण प्राप्त हुए। अंग्रेजों ने भी अपनी कूटनीति के अनुसार चेम्सफोर्ड योजना बनाकर मुसलमानों के विशेषाधिकार पर मोहर लगा दी। हिंदू महासभा ने सन १६१७ में हरिद्वार में पं० मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में अपना अधिवेशन करके कांग्रेस–मुस्लिम लीग समझौते तथा चेम्सफोर्ड योजना का तीव्र विरोध किया। किंतु हिंदू बड़ी संख्या में कांग्रेस के साथ थे। अतः सभा के विरोध का कोई परिणाम न निकला। अंग्रेजों ने स्वाधीनता आंदोलन का दमन करने के लिए रौलट ऐक्ट बनाकर क्रांतिकारियों को कुचलने के लिए पुलिस और फौजी अदालतों को व्यापक अधिकार दिए। कांग्रेस की तरह हिंदू महासभा ने भी इसके विरुद्ध आंदोलन चलाया, पर मुसलमान आंदोलन से दूर थे। उसी समय गांधी ने तुर्की के खलीफा को अंग्रेजों द्वारा हटाए जाने के विरुद्ध तुर्की के खिलाफत आंदोलन के समर्थन में भारत में भी खिलाफत आंदोलन चलाया। हजारों हिंदू इस आंदोलन में जेल गए परंतु खिलाफत का मुद्दा समाप्त होते ही मुसलमानों ने पुनः कोहाट, मुलतान और मालावार आदि में मार–काट कर सांप्रदायिकता की आग भड़काई। हिंदू महासभा भी राष्ट्रीय एकता समर्थक है किंतु उसका मत यह रहा है कि देश की बहुसंख्यक जनता हिंदू है, अतः उसका हित ही वस्तुतः राष्ट्र का हित है। सभा इसे सांप्रदायिकता नहीं समझती। मुसलमान इस देश में न रहें, यह उसका लक्ष्य है। अखिल भारत हिन्दू महासभा भारत का सबसे पहला राजनीतिक दल है। यह एक राष्ट्रवादी हिन्दू संगठन है। इसकी स्थापना सन १६१५ में हुई थी। विनायक दामोदर सावरकर इसके अध्यक्ष रहे। केशव बलिराम हेडगेवार इसके उपसभापति रहे। सन १६२३ के अगस्त मास में हिंदू महासभा का अधिवेशन काशी में हुआ, जिसमें सनातनी, आर्य समाजी सिक्ख, जैन, बौद्ध आदि सभी संप्रदाय के लोग बड़ी संख्या में एकत्र हुए। हिंदू महासभा के इस अधिवेशन ने हिंदुओं को सांत्वना एवं साहस प्रदान किया और वे पूज्य मालवीय जी, स्वामी श्रद्धानंद, लाला लाजपत राय के नेतृत्व में हिंदू महासभा द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलने पर प्रयत्न करने लगे। अंग्रेजों ने कांग्रेस–लीग गठ–बंधन को असफल बनाने एवं मुसलमानों का राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में विद्रोह और विद्वेष फैलाए रखने के लिए अपनी ओर से असंबलियों में मुसलमानों के लिए स्थान सुरक्षित कर दिए। इस बात की चेष्टा होने लगी कि हिंदू सीटों पर कट्टर हिंदू सभाइयों के बजाय ढुलमुल मुस्लिम समर्थक कांग्रेसी ही चुने जाएँ। जब अंग्रेजों का साइमन कमीशन, रिफार्म ऐक्ट में सुधार के लिए भारत आया, तो हिंदू महासभा ने भी कांग्रेस के कहने पर इसका बहिष्कार किया। लाहौर में हिंदू महासभा के अध्यक्ष लाला लाजपत राय हिंदू महासभा के हजारों स्वयं सेवकों के साथ काले झंडे लेकर कमीशन के बहिष्कार के लिए एकत्र हुए। पुलिस ने बहुत ही निर्दयता से लाठी प्रहार किया, जिसमें लाला जी को भी काफी चोट आई और वह फिर बिस्तर से न उठ सके। थोड़े ही समय में लाहौर में उनका स्वर्गवास हो गया। सन १६३७ में जब हिंदू महासभा काफी शिथिल पड़ गई थी और हिंदू जनता गांधी जी की ओर झुकती चली जा रही थी। तब भारतीय स्वाधीनता के लिए अपने परिवार को होम देनेवाले तरुण तपस्वी स्वातंत्र्य वीर सावरकर कालेपानी की भयंकर यातना एवं रत्नागिरि की नजरबंदी से मुक्त होकर भारत आए। उन्होंने घोषणा की कि हिमालय से कन्याकुमारी और अटक से कटक तक रहने वाले वह सभी धर्म, संप्रदाय, प्रांत एवं क्षेत्र के लोग जो भारत भूमि को पुण्यभूमि तथा पितृभूमि मानते हैं। खानपान, मतमतांतर, रीतिरिवाज और भाषाओं की भिन्नता के बाद भी एक ही राष्ट्र के अंग हैं क्योंकि उनकी संस्कृति, परंपरा, इतिहास और मित्र और शत्रु भी एक हैं। उनमें कोई विदेशीयता की भावना नहीं है। वीर सावरकर ने अहिंदुओं का आवाह्न करते हुए कहा कि हम तुम्हारे साथ समता का व्यवहार करने को तैयार हैं परंतु कर्तव्य और अधिकार साथ–साथ चलते हैं। तुम राष्ट्र को पितृभूमि और पुण्यभूमि मानकर अपना कर्तव्य पालन करो, तुम्हें वे सभी अधिकार प्राप्त होंगे जो हिंदू अपने देश में अपने लिए चाहते हैं। हिन्दू महासभा हिन्दू राष्ट्र और हिन्दू संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए भारत में वैधानिक रीति से हिन्दू राज्य स्थापित कर हिन्दू महासभा के उद्देश्यों को पूरा करने का हर संभव प्रयास करेगा। अखिल भारत हिन्दू महासभा हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्थान की रक्षा का कार्य पूर्ण तत्परता व सक्रियता पूर्वक कर रही है। अयोध्या में भगवान श्रीराम के जन्म स्थान पर भव्य श्री राम मंदिर के निर्माण के लिये न्यायालय में मुकदमा लड़ रही है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के लखनऊ बेंच द्वारा विजय श्री प्राप्त हो चुकी है। अब मुकदमा सुप्रीम कोर्ट में चल रहा है। यहां से जीत मिलते ही मंदिर का निर्माण तेजी शुरू कर दिया जायेगा। श्रीराम सेतु की रक्षा, गंगा नदी की अविरल धारा को सुरक्षित रखने, धारा–३७० को समाप्त कराने, विदेशी बैंकों में जमा कालाधन को वापस भारत में लाने, महिलाओं की सुरक्षा के लिये अपराध कानून में परिवर्तन लाने हेतु विशेष अभियान अखिल भारत हिन्दू महासभा द्वारा पूरे देश में चलाया जा रहा है।

E-mail : chandraprakash.kaushik@akhilbharathindumahasabha.org

स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर

संपादकीय

राष्ट्रीय आह्वान

मुन्ना कुमार शर्मा
राष्ट्रीय महासचिव

जीवन वृत्त

विनायक दामोदर सावरकर का जन्म महाराष्ट्र (तत्कालीन नाम बम्बई) प्रान्त में नासिक के निकट भागुर गाँव में हुआ था। उनकी माता जी का नाम राधाबाई तथा पिता जी का नाम दामोदर पन्त सावरकर था। इनके दो भाई गणेश (बाबाराव) व नारायण दामोदर सावरकर तथा एक बहन नैनाबाई थीं। जब वे केवल नौ वर्ष के थे तभी हैजे की महामारी में उनकी माता जी का देहान्त हो गया। इसके सात वर्ष बाद सन् १८९९ में प्लेग की महामारी में उनके पिता जी भी स्वर्ग सिधारे। इसके बाद विनायक के बड़े भाई गणेश ने परिवार के पालन–पोषण का कार्य सँभाला। दुःख और कठिनाई की इस घड़ी में गणेश के व्यक्तित्व का विनायक पर गहरा प्रभाव पड़ा। विनायक ने सन् १९०१ में नासिक से मैट्रिक की परीक्षा पास की। बचपन से ही वे पढ़ाकू तो थे ही अपितु उन दिनों उन्होंने कुछ कविताएँ भी लिखी थीं। आर्थिक संकट के बावजूद बाबाराव ने विनायक की उच्च शिक्षा की इच्छा का समर्थन किया। इस अवधि में विनायक ने स्थानीय नवयुवकों को संगठित करके मित्र मेलों का आयोजन किया। शीघ्र ही इन नवयुवकों में राष्ट्रीयता की भावना के साथ क्रान्ति की ज्वाला जाग उठी। सन् १९०१ में रामचन्द्र त्रयम्बक चिपलूणकर की पुत्री यमुनाबाई के साथ उनका विवाह हुआ। उनके ससुर जी ने उनकी विश्वविद्यालय की शिक्षा का भार उठाया। मैट्रिक की पढ़ाई पूरी करके उन्होंने पुणे के फर्ग्युसन कालेज से बी. ए. किया।

लन्दन प्रवास

सन् १९०४ में उन्होंने अभिनव भारत नाम एक क्रान्तिकारी संगठन की स्थापना की। १९०७ में बंगाल के विभाजन के बाद उन्होंने पुणे में विदेशी वस्त्रों की होली जलाई। फर्ग्युसन कॉलेज; पुणे में भी वे राष्ट्रभक्ति से ओत–प्रोत ओजस्वी भाषण देते थे। बाल गंगाधर तिलक के अनुमोदन पर १९०६ में उन्हें श्यामजी कृष्ण वर्मा छात्रवृत्ति मिली। इंडियन सोशयोलाजिस्ट और तलवार नामक पत्रिकाओं में उनके अनेक लेख प्रकाशित हुये, जो बाद में कलकत्ता के युगान्तर पत्र में भी छपे। सावरकर रूसी क्रान्तिकारियों से ज्यादा प्रभावित थे।

१० मई, १९०७ को इन्होंने इंडिया हाउस, लन्दन में प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की स्वर्ण जयन्ती मनाई। इस अवसर पर विनायक सावरकर ने अपने ओजस्वी भाषण में प्रमाणों सहित १८५७ के संग्राम को गदर नहीं, अपितु भारत के स्वातंत्र्य का प्रथम संग्राम सिद्ध किया।

जून, १९०८ में इनकी पुस्तक द इण्डियन वार ऑफ इण्डिपेण्डेंसः १८५७ तैयार हो गयी परन्तु इसके मुद्रण की समस्या आयी। इसके लिये लन्दन से लेकर पेरिस और जर्मनी तक प्रयास किये गये किन्तु वे सभी प्रयास असफल रहे। बाद में यह पुस्तक किसी प्रकार गुप्त रूप से हॉलैंड से प्रकाशित हुई और इसकी प्रतियाँ फ्रांस पहुँचायी गयीं। इस पुस्तक में सावरकर ने १८५७ के सिपाही विद्रोह को ब्रिटिश सरकार के खिलाफ स्वतन्त्रता की पहली लड़ाई बताया। मई १९०९ में इन्होंने लन्दन से बार एट ला (वकालत) की परीक्षा उत्तीर्ण की , परन्तु उन्हें वहाँ वकालत करने की अनुमति नहीं मिली।

लाला हरदयाल से भेंट

लन्दन में रहते हुये उनकी मुलाकात लाला हरदयाल से हुई जो उन दिनों इण्डिया हाऊस की देखरेख करते थे। १ जुलाई, १९०९ को मदनलाल ढींगरा द्वारा विलियम हट कर्जन वायली को गोली मार दिये जाने के बाद उन्होंने लन्दन टाइम्स में एक लेख भी लिखा था। १३ मई, १९१० को पैरिस से लन्दन पहुँचने पर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया परन्तु ८ जुलाई, १९१० को एस. एस. मोरिया नामक जहाज से भारत ले जाते हुए सीवर होल के रास्ते ये भाग निकले। २४ दिसंबर, १९१० को उन्हें आजीवन कारावास की सजा दी गयी। इसके बाद ३१ जनवरी, १९११ को इन्हें दोबारा आजीवन कारावास दिया गया। इस प्रकार सावरकर को ब्रिटिश सरकार ने क्रान्ति कार्यों के लिए दो–दो आजन्म कारावास की सजा दी, जो विश्व के इतिहास की पहली एवं अनोखी सजा थी। सावरकर के अनुसार–

'मातृभूमि! तेरे चरणों में पहले ही मैं अपना मन अर्पित कर चुका हूँ। देश-सेवा ही ईश्वर-सेवा है, यह मानकर मैंने तेरी सेवा के माध्यम से भगवान की सेवा की।'

सेलुलर जेल में

सेलुलर जेल, पोर्ट ब्लेयर, जो काला पानी के नाम से कुख्यात थी नासिक जिले के कलेक्टर की हत्या के लिए नासिक षडयंत्र काण्ड के अंतर्गत इन्हें ७ अप्रैल, १९११ को काला पानी की सजा पर सेलुलर जेल भेजा गया। उनके अनुसार यहां स्वतंत्रता सेनानियों को कड़ा परिश्रम करना पड़ता था। कैदियों को यहां नारियल छीलकर उसमें से तेल निकालना पड़ता था। साथ ही इन्हें यहां कोल्हू में बैल की तरह जुत कर सरसों व नारियल आदि का तेल निकालना होता था। इसके अलावा उन्हें जेल के साथ लगे व बाहर के जंगलों को साफ कर दलदली भूमि व पहाड़ी क्षेत्र को समतल **शेष पृष्ठ 28 पर**

E-mail : munna.sharma@akhilbharathindumahasabha.org

स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर

क्रान्तिवीर सावरकर से साभार

जीवन वृत्त : विनायक दामोदर सावरकर का जन्म महाराष्ट्र (तत्कालीन नाम मुम्बई) प्रान्त में नासिक के निकट भागुर गाँव में हुआ था। उनकी माता जी का नाम राधाबाई तथा पिता जी का नाम दामोदर पन्त सावरकर था। इनके दो भाई गणेश (बाबाराव) व नारायण दामोदर सावरकर तथा एक बहन नैनाबाई थीं। जब वे केवल नौ वर्ष के थे तभी हैजे की महामारी में उनकी माता जी का देहान्त हो गया। इसके सात वर्ष बाद सन १८९९ में प्लेग की महामारी में उनके पिता जी भी स्वर्ग सिधारे। इसके बाद विनायक के बड़े भाई गणेश ने परिवार के पालन–पोषण का कार्य संभाला। दुःख और कठिनाई की इस घड़ी में गणेश के व्यक्तित्व का विनायक पर गहरा प्रभाव पड़ा। **विनायक ने सन १९०१ में नासिक से मैट्रिक की परीक्षा पास की। बचपन से ही वे पढ़ाकू तो थे ही अपितु उन दिनों उन्होंने कुछ कविताएं भी लिखी थीं।** आर्थिक संकट के बावजूद बाबाराव ने विनायक की उच्च शिक्षा का समर्थन किया। **इस अवधि में विनायक ने स्थानीय नवयुवकों को संगठित करके मित्र मेलों का आयोजन किया। शीघ्र ही इन नवयुवकों में राष्ट्रीयता की भावना के साथ क्रान्ति की ज्वाला जाग उठी।**

सन १९०१ में रामचन्द्र त्रयम्बक चिपलूणकर की पुत्री यमुनाबाई के साथ उनका विवाह हुआ। उनके ससुर जी ने उनकी विश्वविद्यालय की शिक्षा का भार उठाया। मैट्रिक की पढ़ाई पूरी करके उन्होंने पुणे के फर्ग्युसन कॉलेज से बी.ए. किया।

लन्दन प्रवास : सन् **१९०४ में उन्होंने अभिनव भारत नामक एक क्रान्तिकारी संगठन की स्थापना की। १९०७ में बंगाल के विभाजन के बाद उन्होंने पुणे में विदेशी वस्त्रों की होली जलाई।** फर्ग्युसन कॉलेज, पुणे में भी राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत ओजस्वी भाषण देते थे। **बाल गंगाधर तिलक के अनुमोदन पर १९०६ में उन्हें श्यामजी कृष्ण वर्मा छात्रवृत्ति मिली। इंडियन सोशियोलाजिस्ट और तलवार नामक पत्रिकाओं में उनके लेख प्रकाशित हुए, जो बाद में कलकत्ता के युगान्तर पत्र में भी छपे।** सावरकर रूसी क्रान्तिकारियों से ज्यादा प्रभावित थे।

१० मई, १९०७ को इन्होंने इंडिया हाउस, लन्दन में प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की स्वर्ण जयन्ती मनाई। **इस अवसर पर विनायक सावरकर ने अपने ओजस्वी भाषण में प्रमाणों सहित १८५७ के संग्राम को गदर नहीं, अपितु भारत के स्वातन्त्र्य का प्रथम संग्राम सिद्ध किया।**

जून, १९०८ में इनकी पुस्तक **'द इण्डियन वार ऑफ इण्डिपेण्डेंस : १८५७'** तैयार हो गई परन्तु इसके मुद्रण की समस्या आई। इसके लिए लन्दन से पेरिस और जर्मनी तक प्रयास किए गए किन्तु वे सभी प्रयास असफल रहे। बाद में यह पुस्तक किसी प्रकार गुप्त रूप से हॉलैंड से प्रकाशित हुई और इसकी प्रतियाँ फ्रांस पहुँचाई गई। **इस पुस्तक में सावरकर ने १८५७ के सिपाही विद्रोह को ब्रिटिश सरकार के खिलाफ स्वतन्त्रता की**

पहली लड़ाई बताया। मई १९०६ में उन्होंने लंदन से बार एट ला (वकालत) की परीक्षा उत्तीर्ण की, परन्तु उन्हें वहाँ वकालत करने की अनुमति नहीं मिली।

लाला हरदयाल से भेंट : लन्दन में रहते हुए उनकी मुलाकात लाला हरदयाल से हुई जो उन दिनों इण्डिया हाऊस की देखरेख करते थे। १ जुलाई, १९०९ को मदनलाल ढींगरा द्वारा विलियम हट कर्जन वायली को गोली मार दिए जाने के बाद उन्होंने लन्दन टाइम्स में एक लेख भी लिखा था। **१३ मई, १९१० को पेरिस से लन्दन पहुँचने पर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया परन्तु ८ जुलाई, १९१० को एस.एस. मोरिया नामक जहाज से भारत ले जाते हुए सीवर होल के रास्ते ये भाग निकले। २४ दिसम्बर, १९१० को उन्हें आजीवन कारावास की सजा दी गई। इसके बाद ३१ जनवरी १९११ को इन्हें दोबारा आजीवन कारावास दिया गया। इस प्रकार सावरकर को ब्रिटिश सरकार ने क्रान्ति कार्यों के लिए दो-दो आजन्म कारावास की सजा दी,** जो विश्व के इतिहास की पहली एवं अनोखी सजा थी। सावरकर के अनुसार–**''मातृभूमि! तेरे चरणों में पहले ही मैं अपना मन अर्पित कर चुका हूँ। देश-सेवा ही ईश्वर-सेवा है, यह मानकर मैंने तेरी सेवा के माध्यम से भगवान की सेवा की।''**

सेलुलर जेल में : सेलुलर जेल, **पोर्ट**

ब्लेयर, जो कालापानी के नाम से कुख्यात थी। नासिक जिले के कलेक्टर जैकसन की हत्या के लिए नासिक षडयन्त्र काण्ड के अन्तर्गत इन्हें **७ अप्रैल, १६११ को काला पानी की सजा पर सेलुलर जेल भेजा गया। उनके अनुसार यहाँ स्वतन्त्रता सेनानियों को कड़ा परिश्रम करना पड़ता था।** कैदियों को यहाँ नारियल छीलकर उसमें से तेल निकालना पड़ता था। साथ ही इन्हें **यहाँ कोल्हू में बैल की तरह जुत कर सरसों व नारियल आदि का तेल निकालना होता था।** इसके अलावा **उन्हें जेल के साथ लगे व बाहर के जंगलों को साफ कर दलदली भूमि व पहाड़ी क्षेत्र को समतल भी करना होता था। रुकने पर उनकी कड़ी सजा व बेंत व कोड़ों से पिटाई भी की जाती थी।** इतने पर भी उन्हें भरपेट खाना भी नहीं दिया जाता था। सावरकर ४ जुलाई, १६११ से २१ मई, १६२१ तक पोर्ट ब्लेयर की जेल में रहे।

स्वतन्त्रता संग्राम : १६२१ में मुक्त होने पर वे स्वदेश लौटे और फिर ३ साल जेल भोगी। जेल में उन्होंने **हिन्दुत्व पर शोध ग्रन्थ** लिखा। इस बीच ७ जनवरी, १६२५ को इनकी पुत्री, प्रभात का जन्म हुआ। **मार्च, १६२५ में उनकी भेंट राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक, डॉ. हेडगेवार से हुई।** १७ मार्च, १६२८ को इनके बेटे विश्वास का जन्म हुआ। फरवरी, १६३१ में इनके प्रयासों से बम्बई में पतित मन्दिर की स्थापना हुई, जो सभी हिन्दुओं के लिए समान रूप से खुला था। **२५ फरवरी, १६३१ को सावरकर ने बम्बई प्रेसीडेंसी में हुए अस्पृश्यता उन्मूलन सम्मेलन की अध्यक्षता की।**

१६३७ में वे अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के कर्णावती (अहमदाबाद) में हुए १६वें सत्र के अध्यक्ष चुने गए, जिसके बाद वे पुनः सात वर्ष के लिए अध्यक्ष चुने गए। **१५ अप्रैल, १६३८** को उन्हें मराठी साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष चुना गया। **१३ दिसम्बर, १६३७** को नागपुर की एक जन–सभा में उन्होंने अलग पाकिस्तान के लिए चल रहे प्रयासों को असफल करने की प्रेरणा दी थी। **२२ जून, १६४१ को उनकी भेंट नेताजी सुभाष चन्द्र बोस से हुई।** ६ अक्टूबर, १६४२ को भारत की स्वतन्त्रता के निवेदन सहित उन्होंने चर्चिल को तार भेज कर सूचित किया। सावरकर जीवन भर अखण्ड भारत के पक्ष में रहे। **स्वतन्त्रता प्राप्ति के माध्यमों के बारे में गाँधी और सावरकर का एकदम अलग दृष्टिकोण था।**

१६४३ के बाद दादर, बम्बई में रहे। १६ मार्च, १६४५ को इनके भ्राता बाबूराव का देहान्त हुआ। १६ अप्रैल, १६४५ को उन्होंने अखिल भारतीय रजवाड़ा हिन्दू सभा सम्मेलन की अध्यक्षता की। इसी वर्ष ८ मई को उनकी पुत्री प्रभात का विवाह सम्पन्न हुआ।

अप्रैल १६४६ में बम्बई सरकार ने सावरकर के लिखे साहित्य पर से प्रतिबन्ध हटा लिया। १६४७ में इन्होंने भारत विभाजन का विरोध किया। महात्मा रामचन्द्र वीर नामक (हिन्दू महासभा के नेता एवं संत) ने उनका समर्थन किया।

स्वातन्त्र्योपरान्त जीवन : १५ अगस्त, १६४७ को उन्होंने **भारतीय तिरंगा एवं भगवा, दो-दो ध्वजारोहण किए।** इस अवसर पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए, उन्होंने **पत्रकारों से कहा कि मुझे स्वराज्य प्राप्ति की खुशी है, परन्तु वह खण्डित है, इसका दुःख है। उन्होंने यह भी कहा कि राज्य की सीमाएँ नदी तथा पहाड़ों या सन्धि-पत्रों से निर्धारित नहीं होतीं, वे देश के नवयुवकों के शौर्य, धैर्या, त्याग एवं पराक्रम से निर्धारित होती हैं।**

५ फरवरी, १६४८ को गाँधी–वध के उपरान्त उन्हें प्रिवेन्टिव डिटेन्शन एक्ट धारा के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। १६ अक्टूबर, १६४६ को इनके अनुज नारायणराव का देहान्त हो गया। **४ अप्रैल, १६५० को पाकिस्तानी प्रधानमन्त्री लियाकत अली खान के दिल्ली आगमन की पूर्व सन्ध्या पर उन्हें सावधानीवश बेलगाम जेल में रोक कर रखा गया।**

मई, १६५२ में पुणे की एक विशाल सभा में अभिनव भारत संगठन को उसके उद्देश्य (भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति) पूर्ण होने पर भंग किया गया। **१० मई, १६५७ को भारत की राजधानी दिल्ली में आयोजित हुए, १६५७ के प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के शताब्दी समारोह में वे मुख्य वक्ता रहे।**

अक्टूबर, १६४६ को उन्हें पुणे विश्वविद्यालय ने डी.लिट. की मानद उपाधि से अलंकृत किया। ८ नवम्बर, १६६३ को इनकी पत्नी यमुनाबाई चल बसीं।

सितम्बर, १६६६ से उन्हें तेज ज्वर ने आ घेरा, जिसके बाद उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। **१ फरवरी, १६६६ को उन्होंने मृत्युपर्यन्त उपवास करने का निर्णय लिया।**

एकाएक २६ फरवरी, १६६६ को उनकी स्थिति और भी गम्भीर हो गई। ऑक्सीजन दी गई, इंजेक्शन लगाए गए, किन्तु सब बेकार। **अन्त में ११ बजे भारत माँ की मिट्टी में जन्मा बेटा उसकी धरती में लीन हो गया। स्वातन्त्र्य वीर माँ की गोद में थककर सो गया। एक ज्योतिपुंज बुझ गया।** समस्त देश में शोक की लहर दौड़ गई।

वसीयत में भी अपनी राष्ट्रभक्ति को गूंथ दिया था यह लिखकर कि 'मेरे निधन पर हड़ताल करके, कामकाज बन्द करके राष्ट्रीय हानि न की जाए।' वीर सावरकर का समस्त जीवन जिस प्रकार प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहा, **उनकी वसीयत भी प्रेरणादायक थी।**

वीर सावरकर की अन्त्येष्टि में लाखों नर–नारियों ने भाग लिया। समस्त देश में शोक–सभाएँ करके उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गई। इनका समस्त जीवन माँ भारती की वेदी पर दीए की लौ की तरह जलता रहा। अगर **इस महान आत्मा के जीवन की कर्मठता, देश-प्रेम, त्याग, बलिदान, सहनशक्ति और साहसिक भावनाओं का प्रकाश हमें हमारा कर्तव्य-पथ दिखलाता रहे, तभी इस महान आत्मा को शान्ति मिलेगी।** और इनका बलिदान सार्थक होगा।

सावरकर के सपनों का भारत

साभार-जनज्ञान

उनकी कल्पना उन्हीं के शब्दों में

हिन्दू हृदय सम्राट स्वातन्त्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर हमारे मध्य नहीं हैं। वे दीपक बनकर जले थे। अब नक्षत्र बन चुके हैं। हिन्दू राष्ट्रवाद के उद्‌गाता सावरकर के महान त्याग और तपस्या के समक्ष नागराज हिमालय भी नतमस्तक था, जिनकी प्रबल वीरता को देखकर पौरुष और पराक्रम को भी आश्चर्य होता रहा, वह विश्व के अद्वितीय क्रान्तिकारी, महान दिशानायक एवं राष्ट्र निर्माता (२६ फरवरी १९६६ को) अपनी नश्वर काया की स्वेच्छया समर्पण कर अपनी आकांक्षा और अपने सपनों की विरासत देश के जन-जन को सौंप गए थे। मौत की छाया में पला यह महापुरुष मृत्युंजय बन चुका है। उनकी पार्थिव प्रतिमा हमारे मध्य नहीं है किन्तु उनके शाश्वत विचार आज भी हमारे मार्गदर्शक हैं। प्रस्तुत है वीर सावरकर की भारत के सम्बन्ध में कल्पना उन्हीं के शब्दों में....

"मेरे सपनों का भारत एक ऐसा लोकतन्त्रीय राज्य है, जिसके सभी धर्मों और मत–मतान्तरों के अनुयायियों के साथ पूर्ण समानता का व्यवहार किया जाएगा। किसी को दूसरे पर आधिपत्य जमाने का अवसर न रहेगा। **जब तक कोई व्यक्ति हिन्दुओं को इस पुण्यभूमि तथा मातृभूमि हिन्दुस्तान को एक राज्य मानकर, इसके प्रति अपने दायित्वों का निष्ठा सहित पालन करेगा, जो आसिन्धु-सिन्धु पर्यन्त विस्तीर्ण हैं, तब तक उसे पूर्ण अधिकार प्राप्त होंगे।** हिन्दू जातिविहीन और संगठित आधुनिक राष्ट्र का रूप ग्रहण करेंगे। **विज्ञान और औद्योगिकी को बढ़ावा मिलेगा, जिससे सभी भूमि राज्य की होगी। और कोई भी जमींदार न होगा। सभी महत्वपूर्ण उद्योगों का राष्ट्रीयकरण होगा तथा भारत खाद्यान्न, वस्त्र और प्रतिरक्षा की दृष्टि से पूर्णतः आत्मनिर्भर होगा। मेरे सपनों के भारत का वसुधैव कुटुम्बकम् के महान आदर्श में विश्वास होगा। सैनिक दृष्टि से सबल अखण्ड हिन्दुस्तान की विदेश नीति होगी, तटस्थता और शान्ति की। शक्तिशाली और अखण्ड हिन्दुस्तान की विश्व में स्थाई शान्ति और समृद्धि की दिशा में प्रभावी योगदान दे सकता है।"**

हिन्दू सहिष्णु है

"सावधान! हिन्दुओं के बारे में यह कहा जाता है कि हिन्दू बड़े सहिष्णु हैं। परन्तु स्मरण रखिए, यह भावना दूसरों ने फैलाई है। **हिन्दुओं का वास्तविक इतिहास यदि आप देखेंगे तो आपको विदित होगा कि हिन्दू सहिष्णु है और असहिष्णु भी है।** न्याय के साथ हिन्दुओं ने सदैव सहिष्णुता का आदर किया है और अन्याय के प्रति सहिष्णुता बरती है। अतः दूसरों के धोखे में हमें नहीं आना चाहिए। सहिष्णुता मात्र को ही सद्‌गुण समझकर अपने बड़प्पन की रक्षा में धर्म तथा राष्ट्र का घात हमें सहन नहीं करना चाहिए। **हिन्दू सहिष्णु हैं, यह भावना फैलाकर और हिन्दुओं को औषधि शिक्षा, आर्थिक सहायता और भोजन देकर उन्हें बड़ी योजना सहित धर्मान्तरित किया जाता रहा है।** इस अवस्था में हिन्दू महासभा व आर्यसमाज सरीखी हिन्दू संस्थाओं को यह घोषित करना चाहिए कि आगामी कुछ ही वर्षों में हम भारत को इस भयानक संकट से मुक्त करेंगे।"

धर्म की परिभाषा

"क्या धर्म अर्थात् पारमार्थिक चर्चा द्वैत–अद्वैत का वाद–विवाद या चेतन–अचेतन की खोज है अथवा केवल भावना है जो व्यक्ति शून्य हो? नहीं। **विशेष रूप से हमारा धर्म महान होने से हम धर्म को ही राष्ट्र धर्म कहते हैं। हमारा इतिहास ही धर्म है। इतना ही नहीं अपितु हमारा दैनिक व्यवहार जो इतिहास समाज और राष्ट्र को पुष्ट करता है वही हमारा धर्म है।** धर्म की यह परिभाषा विधर्मी स्टालिन जैसे कम्युनिस्टों को भी माननी पड़ी थी। अमरीका का राष्ट्रपति बाइबिल हाथ में लिए बिना राष्ट्रपति पद की शपथ ग्रहण नहीं कर सकता, इंग्लैंड का सम्राट यदि प्रोटेस्टैन्ट न हो तो उसे राज्य के पद से त्याग पत्र देना पड़ता है। **यदि छोटे-से-छोटे पाश्चात्य देश में हम जाएँ हमें यही दिखाई देगा कि वह राष्ट्र किसी न किसी धर्म का अनुयायी होगा।** हम हिन्दू हैं और हमने दुनिया देखी है। देश, इतिहास और व्यवहार के विशुद्ध न्यायपूर्ण बरताव को ही धर्म कहते हैं। इसलिए धर्म में महान शक्ति होती है। हम, हमारा देश, इतिहास और व्यवहार हिन्दुस्तान के वैभव को बढ़ाने वाला है। इस प्रकार व्यक्तिगत और सामाजिक भावनाओं में व्याप्त प्रेरणा को ही हम धर्म कहते हैं।"

भारतभूमि कदापि दिवालिया न होगी

"स्वतन्त्रता के अनेक वर्ष उपरान्त भी हम लोगों को निराश, हताश विक्षुब्ध और नैतिकता से गिरता हुआ देख रहे हैं। आज जनसाधारण जो पेट की रोटी और अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं, बड़ी योजनाओं ने आपको तनिक भी प्रभावित नहीं किया है। **किन्तु इतने पर भी एक क्षण के लिए यह सोचना कि यह तो देश खण्डित हो जाएगा, पागलपन ही होगा। एक ऐसा देश जिसने चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, शालिवाहन और शिवाजी जैसे महान राजनीतिज्ञों को गोदी में खिलाया है, वह कभी भी राजनीतिक दृष्टि से दिवालिया नहीं हो सकता है।** सहस्रों वर्षों के इतिहास में हिन्दुस्तान पर जब–जब संकट के घन लहराए हैं तब ही किसी ने किसी महापुरुष ने उसका नेतृत्व

कर राष्ट्र को सम्बल दिया है। जैसा अतीत में हुआ है, भविष्य में भी ऐसे लोग होते रहेंगे जो देश का दिशा निर्देशन करेंगे, इसकी सेवा के लिए जिएँगे और मरेंगे।"

सैनिक महाविद्यालय हो नगर-नगर में

"आने वाले दस वर्षों में 'सीनेट' बनाने वाला एक भी युवक पैदा न हुआ तो चलेगा। पुनः पुनः साहित्य सम्मेलन न हुए तो हानि नहीं, परन्तु दस–दस सहस्र युवक सैनिकों की कन्धों पर नई राइफलें रखकर राष्ट्र के मार्गों में; शिविर में टप–टप करते हुए संचलन करती दृष्टिगोचर होनी चाहिए। **कम से कम ग्रन्थालयों की संख्या के बराबर नगर-नगर में सैनिक महाविद्यालय भी व्यस्त अवस्था में दिखाई देने चाहिए।** फिर कभी–कभी उन्होंने एक दो उपन्यास अथवा प्रेम गीत पढ़ा अथवा 'सीनैट' बनाया तो कोई बुराई नहीं।" "नेपोलियन भी रणभूमि में मनोरंजन के लिए सीटी बजा दिया करता

था। दिल्ली के बादशाह का मान–मर्दन करके लौटने के पश्चात मस्तानी के अन्तःपुर में प्रथम बाजीराव पेशवा यदा–कदा एकाध पान खा लेते थे। परन्तु जीवन पर्यन्त केवल वृक्ष के पत्ते ही चूसने वाला और तमाशों में खड़कने वाले तबले सुनने वाले द्वितीय बाजीराव के ब्रह्मावर्त का स्वरूप राष्ट्र को प्राप्त हो यह मेरी आँखों से नहीं देखा जाएगा।"

अकेले रहो तो भी

"गत ५० वर्षों में जिन्होंने मुझको नेता मानकर अपमान और दरिद्रता को सहकर भी हिन्दू समाज को बलवान बनाने हेतु कष्ट उठाए उनको मैं कुछ भी नहीं दे सका। अपना सब कुछ बलिदान करके भी मेरे साथ रहे। आपकी दृढ़ता देखकर मैं प्रसन्न हूँ। **इस हिन्दू ध्वज को कंधे पर रखकर आगे बढ़ते रहो। मैं जानता हूँ कि यह पथ आसान नहीं है। लेकिन मेरे मन में आशा है।** आप लोग भी इसी विश्वास के साथ आगे बढ़ते रहिए। **अन्तिम विजय हमारी होगी।** प्रत्येक कार्यकर्ता अपने ध्येय पर अटल रहे। मैं चाहता हूँ कि आप में से प्रत्येक **शेष पृष्ठ 22 पर**

वीर सावरकर का १३५ वां जयंती समारोह हर्षोल्लास के साथ मनाया गया, विशेषांक का विमोचन हुआ

नई दिल्ली, २८ मई २०१८, मंदिर मार्ग, नई दिल्ली स्थित हिन्दू महासभा भवन में अखिल भारत हिन्दू महासभा, द्वारा स्वातंत्र्य वीर सावरकर की १३५ वीं जयंती समारोह हर्षोल्लास पूर्वक मनाई गई। अखिल भारत हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री चन्द्रप्रकाश कौशिक व राष्ट्रीय महामंत्री श्री मुन्ना कुमार शर्मा ने दीप प्रज्वलीत कर समारोह का शुभारंभ किया। मंच संचालन राष्ट्रीय कार्यालय मंत्री वीरेश त्यागी ने किया। समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री श्याम जाजू उपस्थित थे। समारोह से पूर्व हवन–पूजन किया गया। समारोह के अवसर पर हिन्दू सभा वार्ता समाचार पत्र के वीर सावरकर विशेषांक का विमोचन किया गया। समारोह में प्रख्यात गायक एस.डी.सिंह एंड पार्टी द्वारा धार्मिक व राष्ट्रगीतों पर आधारित कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। गायक–गायिकाओं ने भजन तथा राष्ट्रीय गीतों से उपस्थित सैकेडों लोगों का मन मोह लिया। सरस्वती वंदना, गणेश वंदना तथा वीर सावरकर पर आधारित गीत प्रस्तुत किया गया। इस अवसर पर मध्यप्रदेश के अध्यक्ष मोहनलाल वर्मा, केरल प्रदेशाध्यक्ष किशन सीजें, उत्तर प्रदेश के प्रदेशाध्यक्ष योगेन्द्र वर्मा, मोहन कोरेमोरे (महाराष्ट्र), तमिलनाडु प्रदेशाध्यक्ष ए. रामनाथन, कन्हैया लाल रैकववार (इटारसी), गुजरात प्रदेशाध्यक्ष महेन्द्रभाई परमार, राघव मिश्र (गोररवपुर), अनिल कुमार एवं दिनेश त्यागी (गाजियाबाद), प्रवीन त्यागी (दिल्ली), यशवीर त्यागी (रामपुर), मनीष शर्मा (मुज्जफरनगर), विनोद शर्मा (पीलीभीत), चन्द्रप्रकाश त्रिपाठी (कानपुर) अनुराग प्रताप सिंह (रायबरेली), दीपेन्द्र (सिंह कानपुर), साक्षी वर्मा (मुज्जफरनगर), हिमांशु शर्मा (सहारनपुर), पं० अशोक शर्मा (मेरठ), दीपक रोहिल्ला (शमाली), अशोक पांडेय (अलीगढ़) सहित सैकडों हिन्दू महासभा कार्यकर्ता व विद्वतजन उपस्थित थे। राष्ट्रीय अध्यक्ष चन्द्रप्रकाश कौशिक ने सभी उपस्थितजनों को वीर सावरकर जयंती की हार्दिक शुभकामनाएं दीं तथा कहा कि हमें वीर सावरकर के सपनों का भारत बनाने का संकल्प लेना चाहिए। राष्ट्रीय महामंत्री मुन्ना कुमार शर्मा ने कहा कि वीर सावरकर एक अद्वितीय स्वतंत्रता सेनानी, क्रातिकारियों के प्रेरणाश्रोत, लेखक व विचारक थे। उन्होंने देश की आजादी के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। हमें उनकें विचारों को अपनाकर अखंड हिन्दू राष्ट्र का निर्माण करना है। मुख्य अतिथि श्री श्याम जाजू ने सावरकर जयंती समारोह आयोजित करने के लिये हिन्दू महासभा को शुभकामनाएं दी तथा कहा कि हमें वीर सावरकर के सपनों का भारत बनाना है। सभी उपस्थितजनों ने उनके चित्र पर पुष्प अर्पित कर श्रद्वासुमन अर्पित किया।

हिन्दू महासभा की अखिल भारतीय स्तर पर स्थापना

✍ मुन्ना कुमार शर्मा

पंजाब के हिन्दू जागरण को देखकर हिन्दू नेताओं के मन में यह विचार आया कि हिन्दू सभा का गठन अखिल भारतीय स्तर पर हो, इस उद्देश्य से हिन्दू सभा की शाखाओं का विस्तार सबसे पहले उत्तर प्रदेश में किया गया। दिसम्बर १९१० में हिन्दू नेताओं की एक बैठक इलाहाबाद में सम्पन्न हुई और वहाँ यह निर्णय लिया गया कि एक अखिल भारतीय हिन्दू महासभा का गठन होना चाहिए और उसका मुख्य कार्यालय इलाहाबाद में होगा। मयूख रंजन सर्वाधिकारी जी अपनी पुस्तक हिन्दू सभा का संक्षिप्त इतिहास में लिखते हैं, "जब सभा अखिल भारतीय बनी तो 'हिन्दू सभा' के स्थान पर 'हिन्दू महासभा' का नामकरण हुआ। इलाहाबाद के १९१० वाले हिन्दू सम्मेलन में 'हिन्दू महासभा' नाम निश्चित किया गया किन्तु प्रादेशिक स्तर पर पुराना नाम 'हिन्दू सभा' ही था।

उत्तर प्रदेश में हिन्दू सभा की स्थापना के पूर्व एक हिन्दू संस्था जिसका नाम 'भारत धर्म मण्डल' था, वह १९०२ में मथुरा में स्थापित हो गयी। महाराजा दरभंगा एवं पं० मदनमोहन मालवीय इसके प्रमुख कार्यकर्ताओं में से थे। इसका मुख्य उद्देश्य सनातन धर्म का उत्थान था परन्तु इस संस्था से हिन्दू संगठन सम्भव नहीं हो पा रहा था। कारण यह था कि सनातन हिन्दुओं की विचार धाराओं से अन्य हिन्दू समाज सहमत नहीं थे।

महामण्डल ने स्वामी जनानन्द के मार्गदर्शन में ऐंग्लो हिन्दू मासिक और बहुत सी प्रादेशिक पत्रिकाओं के प्रकाशन किये, स्वामी जी १९१० में अवकाश प्राप्त हुए थे। थोड़े से समय में महामण्डल महत्वपूर्ण हिन्दू सम्प्रदाय एवं धार्मिक संस्था के रूप में सम्पूर्ण हिन्दू समुदाय का प्रतिनिधित्व करने लगा था। भारत धर्म मण्डल से मात्र सनातन धर्म का प्रचार किया जाता था परन्तु जिला बोर्डों और म्यूनिसिपैल्टियों (उ० प्र०) में जो हिन्दू हितों पर कुठाराघात हो रहा था साथ ही अलीगढ़ी आंदोलन द्वारा मुस्लिम साम्प्रदायिकता को बढ़ावा मिल रहा था उससे संघर्ष करने के लिये हिन्दू सभा की प्रबल रूप से आवश्यकता थी। इसलिए उत्तर प्रदेश में हिन्दू सभा की स्थापना के पश्चात् कुछ हिन्दू नेता जो महामण्डल के कार्यकर्ता थे अब हिन्दू सभा के क्रियाकलापों में रुचि लेने लगे। ये नेता मदनमोहन मालवीय, दीनदयाल शर्मा आदि थे। इनके अतिरिक्त कुछ राजा–महाराजाओं ने भी हिन्दू सभा में प्रवेश किया। महासभा के नेता जहाँ एक तरफ मुस्लिम लीग एवं ब्रिटिश सत्ता की उन नीतियों का विरोध करते थे जिससे हिन्दू हितों पर चोट पहुंचती थी, वहीं हिन्दू–मुस्लिम एकता के भी समर्थक रहे।

हिन्दू-मुस्लिम सम्मेलन (इलाहबाद)

राष्ट्रीय कांग्रेस की नीति में कुछ परिवर्तन आया, परिणामस्वरूप हिन्दू समर्थक लोगों को भी कांग्रेस में आश्रय मिलने लगा कि कांग्रेस मंच पर भी हिन्दू हितों के लिए प्रश्न उठाया जा सकता है। सर विलियम बेडरबर्न की अध्यक्षता में १९१० में एक सम्मेलन कांग्रेस की तरफ से आयोजित किया गया, जिसमें हिन्दू और मुसलमानों के प्रमुख नेता उपस्थित हुए। ये नेता सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, गोपाल कृष्ण गोखले, सर सुन्दर लाल, पं० मदनमोहन मालवीय, तेज बहादुर सप्रू, पंडित मोतीलाल नेहरू, लार्ड सिंहा, दरभंगा के महाराजा, नवाब वगरठल मुल्क, मौ० अली जिन्ना और हकीम अली खान थे। जिसमें हिन्दू –उर्दू विवाद, राष्ट्रीय शिक्षा, आर्य समाज आंदोलन, मस्जिद के सामने बाजे बजने का प्रश्न तथा गोवध के प्रश्न पर विस्तृत वाद–विवाद हुए।

हिन्दू–मुस्लिम एकता के सतत प्रयासों के बावजूद अभी तक हिन्दू–मुस्लिम एकता का वातावरण नहीं बन पाया था क्योंकि मुस्लिम साम्प्रदायिकता को बढ़ाने में ब्रिटिश सरकार मदद दे रही थी। मुस्लिम लीग की स्थापना का उद्देश्य ही दो सम्प्रदायों को अलग–अलग रखने का था। ब्रिटिश शासक इस उद्देश्य में सफल हो गये।

हिन्दू महासभा १९१० में उत्तर प्रदेश में स्थापित अवश्य हो गयी। परन्तु महासभा का प्रभाव उत्तर प्रदेश में कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रहा। वह भी हिन्दू धार्मिक स्थानों इलाहाबाद, बनारस और हरिद्वार आदि जगहों तक ही सीमित था, केवल पंजाब में हिन्दू महासभा का विस्तार विभिन्न शहरों में हो गया था। वर्ष १९१५ तक महासभा पंजाब में ज्यादा प्रभावशाली रही। डॉ. आर. सी. मजूमदार लिखते हैं:

Four more Hindu Conferences were held during the year 1911 to 1914 at Amritsar, Delhi, Ferojpur and Ambala while a special one was held at Lahore in 1914. These were superseded by an All India Hindu Maha Sabha.

इस बात से स्पष्ट है कि हिन्दू महासभा भारत के पंजाब प्रान्त में ही मुख्य रूप से प्रभावशाली रही। पंजाब हिन्दू सभा का चरित्र भी उत्तर प्रदेश हिन्दू सभा से भिन्न था। यह दोनों प्रान्तों के नेताओं पर निर्भर

करता था। पंजाब हिन्दू सभा मुस्लिम साम्प्रदायिकता का सीधे विरोध करती थी। वहीं पर उत्तर प्रदेश के हिन्दू नेता मदनमोहन मालवीय आदि हिन्दू–मुस्लिम एकता के प्रबल समर्थक थे।

प्रान्तीय विधान परिषद् में हिन्दुओं के साथ अन्याय

पंजाब हिन्दू सभा के प्रतिनिधि ने 'लेजिस्लेटिव काउंसिल ऑफ हिज हानर दि लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ऑफ पंजाब' के सामने सप्रमाण यह प्रस्ताव रखा कि पंजाब में अल्पसंख्यक एवं महत्वपूर्ण हिन्दुओं की जनसंख्या के साथ विधान परिषद् (लेजिस्लेटिव काउंसिल) के सदस्यों का चुनाव करके अन्याय किया गया है। हिन्दू सभा ने यह भी दावा किया कि पंजाब के हिन्दुओं का वह प्रतिनिधित्व करती है। सभा ने जो आपत्ति उठायी वह इस प्रकार है:

'इम्पीरियल (साम्राज्यवादी लेजिस्लेटिव) में वर्तमान में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक व्यक्ति चुना गया। दूसरा सदस्य जो जमींदारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया गया है वह भी संयोगवश मुसलमान ही है। एक तीसरा व्यक्ति जो कार्यालय के अतिरिक्त (नॉन ऑफिशियल द्वारा) चुना जाना है, वह भी प्रान्तीय विधान परिषद् की सहानुभूति से मुसलमान ही चुने जाने की सम्भावना है।

प्रान्तीय विधान परिषद् में वर्तमान में जो सदस्य चुने गये हैं वह इस प्रकार हैं: १४ 'नॉन ऑफिशियल' सदस्यों में से ७ मुसलमान, २ सिख, २ यूरोपियन और ३ हिन्दू चुने गये। इसका कारण यह है कि दिसम्बर १९११ में जो इम्पीरियल काउंसिल सदस्यों का चुनाव नॉन ऑफिशियल ऑफ प्राविंशियल कौंसिल के सदस्यों द्वारा किया गया था उसमें यूरोपियनों ने मुसलमान सदस्यों के लिए वोट दिये। दोनों (मुसलमान एवं यूरोपियनों) में यह समझौता हुआ था कि दोनों के प्रतिनिधि मुसलमान ही होंगे। इसका परिणाम यह निकला कि वर्तमान में इम्पीरियल कौंसिल के सभी तीनों सदस्य पंजाब से मुसलमान ही चुने गये हैं।

हिन्दू सभा की कार्यकारिणी समिति हिन्दू हितों की रक्षा के दृष्टिकोण से सरकार से यह अनुरोध करती है कि नॉन ऑफिशियल सदस्यों के लिए दो सीटें सुरक्षित रखनी चाहिए, साथ ही चुनाव पद्धति में भी परिवर्तन हो ताकि पंजाब का महत्वपूर्ण हिन्दू अल्पसंख्यक समुदाय अपने लिए कम से कम एक सीट बचा सके। नगर पालिका के चुनाव में भी हिन्दुओं के खिलाफ पक्षपात होने की सम्भावना है। कार्यकारिणी समिति यह मांग करती है कि पंजाब में हिन्दू हितों की रक्षा के लिए तथा हिन्दुओं के आर्थिक विकास, शिक्षा तथा हिन्दुओं के साम्प्रदायिक क्रियाकलापों के लिए प्रान्तीय विधान परिषद में उनके सदस्य मुसलमानों के सदस्यों से कम नहीं होने चाहिए। पहले जो चुनाव हुए थे वह हिन्दुओं के पक्ष में नहीं थे। इसलिए नियम से संशोधन किया जाये और पर्याप्त संख्या में हिन्दुओं के नियुक्ति की व्यवस्था की जाये। हिन्दू सभा के सचिव की उपरोक्त माँगों का उत्तर, पंजाब सरकार के मुख्य सचिव ऑनरेबल मि० सी. बर्रेन (सी. आइ. ई. आइ. सी. एस.) ने ठीक एक माह पश्चात् अर्थात् ८ अगस्त १९१२ को दिया।

पंजाब सरकार का मुख्य सचिव, पंजाब हिन्दू सभा के महासचिव को सम्बोधित करते हुए पत्र लिखता है, 'आपके पत्र ८ जुलाई १९१२ के जवाब में जिसमें पंजाब हिन्दू सभा की कार्यकारिणी समिति कहती है कि इम्पीरियल और प्रान्तीय विधान परिषद में सदस्यों के चुनाव और नामांकन में नियमों का संशोधन हो और हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए बड़ी संख्या में हिन्दू भेजे जायें। मैं सीधे आपके पत्र का उल्लेख करता हूं जिसमें प्रतिनिधित्व के लिए प्रबल रूप से इंगित किया गया है। यह अच्छी तरह समझा जाता है कि चुनाव १९०९ में सम्पन्न हुए जिसमें नगरपालिका के प्रतिनिधियों द्वारा किये गये मतदान में इतनी गोपनीयता थी कि परिणामों को आसानी से समझा नहीं जा सकता था। परिणाम उल्टा हुआ जिसमें तीन हिन्दुओं के चुनाव होने के बजाय तीन मुसलमान चुन लिए गये।

नगरपालिका के मतदान के अधिकार पर विचार करने के लिए पंजाब सरकार ने देर से अनुमोदन दिया। पंजाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर को कोई ऐसा कारण नहीं दिखाई पड़ रहा है कि हिन्दुओं को अच्छे अनुपात में क्यों नहीं चुना जाना चाहिए था।

जहां तक इम्पीरियल काउंसिल के सदस्यों की चुनाव प्रणाली का प्रश्न है इस सम्बन्ध में मैं कहता हूं कि यह विषय भारत सरकार का है। इस सम्बन्ध में कार्यवाही के लिए भारत सरकार उपयुक्त हो सकती है। मैं आप के पत्र के न्यायोचित तथ्यों का पुनः उल्लेख करता हूं। इम्पीरियल काउंसिल के लिए निम्नलिखित आदेश दिए हैं कि जमींदारों के सदस्य के चुनाव के लिए पंजाब सरकार बारी –बारी से एक मुसलमान, एक हिन्दू अथवा एक सिख की नियुक्ति करेगी। इस प्रकार तीन वर्षों के बाद मुसलमानों के अलावा हिन्दू या सिख पंजाब के जमींदारों को भी प्रतिनिधित्व मिलेगा।

Again the first member elected by the non-official members of the Punjab Legislative Council, the late Sardar Pratap Singh] was a Sahjdhari Sikh who the Sabha would no doubt calaim as a Hindu and it is difficult to understand how it can be said that no non-Mohammedan has a chance of election. Further the Governor General selected a Punjab Sikh as a Fourth member for the Punjab which during the past three years has been represented on the Imperial Council by two Mohammedans and two non-Mohammedans.

जमींदारों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में हिन्दू सभा ने पंजाब सरकार के आदेश पर आपत्ति प्रकट की और उसमें परिवर्तन करने के लिए अनुरोध किया कि (अ) जमींदारों के प्रतिनिधियों की नामांकन प्रणाली में परिवर्तन किया जाना चाहिए। (ब) चुनाव एक स्थान की जगह दो स्थानों पर कराया जाएँ। पंजाब काउंसिल के नॉन ऑफिशियल सदस्यों द्वारा चुनाव खुले रूप में किये जाने चाहिए। पंजाब सरकार ने हमारे पास बिना किसी अनुमोदन के पत्र भेजा है।

पंजाब सरकार की नीति हिन्दुओं के प्रति साफ नहीं थी। इसलिए हिन्दू सभा पंजाब की हिन्दू हितों की रक्षा के लिए संघर्ष करना पड़ा। सभा इस नाममात्र के

परिवर्तन से संतुष्ट न थी। वह हिन्दुओं के पूरे अधिकारों की मांग करती थी परन्तु अंग्रेज सरकार का झुकाव मुस्लिम समुदाय के प्रति अधिक था इसलिए हिन्दुओं की आवश्यक मागों पर कभी गम्भीरता से विचार नहीं किया गया।

पंजाब हिन्दू सम्मेलन (द्वितीय) दिल्ली १६१२

पंजाब हिन्दू सम्मेलन १६०६ (लाहौर) के बाद एक बड़े पैमाने पर दिल्ली में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता सर शादीलाल ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा "पिछले चार–पाँच वर्षों की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया कि आशंकाओं के दुःख से परे रहकर यह संस्था समूचे हिन्दुओं की नेतृत्व करने वाली अधिकार पूर्वक भाषा बोल सकी और मुस्लिम लीग के हिन्दू विरोधी कार्य में प्रतिरोध लगाने में सफल हुई। हिन्दू जो वर्तमान में दुःख का अनुभव कर रहे हैं कि वे भविष्य में नहीं कर सकेंगे। मैं पंजाब के हिन्दुओं से निवेदन करता हूं, हिन्दुस्तान के हिन्दुओं से निवेदन करता हूं कि हिन्दू संगठित हों तथा देश के भविष्य के लिए एक-जुट होकर शक्तिशाली हो जाएं।

मुस्लिम लीग एवं ब्रिटिश शासकों की नीतियों में परिवर्तन १६१३

प्रथम विश्व युद्ध के बादल मंडरा रहे थे। ब्रिटिश शासकों को हिन्दुओं से सहयोग की आवश्यकता पड़ी। इसलिएं उनका दृष्टिकोण हिन्दू विरोधी न रहकर हिन्दुओं के प्रति सौहार्दपूर्ण होते दिखना लगा। इसके पीछे ब्रिटिश सरकार का बहुत बड़ा स्वार्थ निहित था। उन्हें भारी संख्या में सेना में भर्ती करने के लिए भारतीय सिपाहियों की आवश्यकता पड़ी थी। इसलिए उत्तर प्रदेश के सर तेज बहादुर सप्रू जैसे महत्वपूर्ण व्यक्ति को भारत सरकार का लॉ मैम्बर बनाया गया।

अभी तक ब्रिटिश सरकार एवं मुस्लिम लीग में जो मिलीभगत चल रही थी अब वह धूमिल होती दीखने लगी। इसका मुख्य कारण था कि दुनिया की राजनैतिक परिस्थिति में एक जबरदस्त परिवर्तन आया। "बालकन राज्य जो एक या दो सदी से यूरोप के मुर्गों के लड़ने का अखाड़ा बन गया था, फिर एक बार नयी लड़ाइयों का मैदान बन गया। तब १६१३ में नवाब सैयद मुहम्मद बहादुर ने जो कराची कांग्रेस के सभापति थे, यूरोप में तुर्क–साम्राज्य की नींव उखाड़ने और ईरान के दम घोंटने के प्रयत्नों की ओर ध्यान दिलाया। तुर्की साम्राज्य को लगे उस धक्के को जिस दुःख के साथ मुसलमानों ने महसूस किया उसी को उन्होंने वहां प्रदर्शित किया। अन्त में उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों को अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए कन्धे से मिलाकर काम करने पर बहुत जोर दिया। ऐसी परिस्थितियां थीं जिनमें १६१३ की कराची कांग्रेस में हिन्दू और मुसलमानों ने अपने भेदभाव मिटा दिए और मुस्लिम लीग के विचार को, कि ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत भारतवासियों को स्व–शासन दिया जाए, पसन्द किया गया तथा हिन्दू और मुसलमानों के बीच मेल एवं सहयोग का भाव बढ़ाने वाले मुस्लिम लीग के कथन को पसन्द किया। मुस्लिम लीग की नीतियों में हिन्दुओं के प्रति सौहार्दपूर्ण नीति होने का उपरोक्त कारण था। इस प्रकार मुस्लिम लीग, कांग्रेस एवं हिन्दू महासभा के परस्पर मतभेदों में कमी आयी। कई बार हिन्दू सभा कांग्रेस की सहयोगिनी भी बनी रही और कांग्रेस एवं महासभा के अधिवेशन भी कभी–कभी एक मंच पर होने लगे।

मुस्लिम लीग ने जो संविधान एवं नियम दिए उससे साफ दिखता है मुस्लिम लीग का दृष्टिकोण १६१३ में हिन्दुओं के प्रति सहयोगपूर्ण थे।

The league has now definitely joined hands with Congress in including in their objective the attainment of self Government and of thus confusing it as an indefinite ideal with a visible goal and practical steps towords which will only mean at the present stage of Indian develpment conflict, with authority and violent political agitation. **R.H.Dock.**

१६१३ के मुस्लिम लीग के उद्देश्यों का अध्ययन करने से पता चलता है कि उसके उद्देश्य अभी सौहार्दपूर्ण थे जो सभी देशवासियों के हित में इस प्रकार थे : (१) ब्रिटिश सत्ता के प्रति देशभक्ति की भावनाओं को जो यहाँ के देशवासियों में बढ़ रही है, उसकी सन्तुलन बनाये रखना, (२) भारतीय मुसलमानों के राजनैतिक अधिकारों की रक्षा करना, (३) भारत के मुसलमानों एवं अन्य समुदायों के बीच मित्रता एवं संगठन में वृद्धि करना। यहाँ स्पष्ट है कि अभी तक मुस्लिम लीग के कोई उद्देश्य ऐसे नहीं थे जो हिन्दू विरोधी थे। मुस्लिम लीग एवं नरम दलीय कांग्रेस में अन्तर सिर्फ इतना था कि कांग्रेस के मंच से हिन्दू अधिकारों की चर्चा नहीं होती थी जब कि मुस्लिम लीग मुस्लिम हितों की मांग खुलकर करती थी। जहाँ कांग्रेस अपने को एक हिन्दू संगठन के रूप में प्रस्तुत नहीं करती थीं वहीं मुस्लिम लीग खुलकर मुसलमानों का प्रतिनिधि का दावा करती थी। किन्तु ब्रिटिश शासकों की निगाह में था कि कांग्रेस हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करती थी और मुस्लिम लीग मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करती थी।

यहाँ यह कहना पर्याप्त होगा कि मुसलमानों के विचारों में अब काफी परिवर्तन आया। बंग–भंग के समय मुसलमानों ने राष्ट्रीय आदर्शों से अलग हटकर नौकरशाही पर अपना विश्वास जमा रखा था। '१६१३ में उन्होंने भी ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्व–शासन के ध्येय को स्वीकार किया। मुस्लिम लीग ने गत अधिवेशन में बड़े जोर के साथ यह विश्वास भी प्रकट किया कि 'देश का राजनैतिक भविष्य दो महान जातियों (हिन्दू और मुसलमानों) के मेल, सहयोग और सहबुद्धि पर निर्भर है।

जुलाई १६१४ में महासमर छिड़ गया और नवम्बर में जब जर्मनी फ्रांस का दरवाजा खटपटा रहा था, लार्ड हार्डिंग ने भारतवर्ष से सेना बाहर भेज दी। इंग्लैंड बड़ी आफत में था। भारत में फौज इसलिए रखी गयी कि वह इंग्लैण्ड के लिए भारत की सुरक्षा कर सके। लेकिन यदि इंग्लैण्ड खुद खतरे में हो तब भारत में ठहरी हुई सेना से लाभ ही क्या? मार्सेल्स में एक दिन भी आराम किये बिना भारतीय फौज फ्लांडर्स रणक्षेत्र में जहाँ अग्निवर्षा हो रही थी भेज दी गयी। उस फौज ने मित्र राष्ट्रों को उस भारी विपत्ति से बचा दिया, जो उसके न पहुंचने पर १६१५ के फरवरी–मार्च में उस पर आ जाती। १६१४ में

बाल गंगाधर तिलक को रिहा कर दिया गया। वह अपनी पूरी सजा काटकर माण्डले जेल से बाहर आ गये। इसके बाद स्वराज की मांग फिर बढ़ गयी। श्रीमती बेसेन्ट ने लार्ड पेन्टबैन्ड के समय में होमरूल का महान आँदोलन उठाया। वही पुराना कार्यक्रम स्वदेशी, बहिष्कार और राष्ट्रीय शिक्षा तथा होमरूल पुनजीर्वित किया गया।

१६१५ में मतभेद का अन्त होते दिखने लगा। इस दौरान भारतीय राजनीति में एक नये युग का श्रीगणेश हुआ। १६ फरवरी १६१५ को गोपालकृष्ण गोखले का स्वर्गवास हो गया। इसलिए कांग्रेस का संगठन अब उतना सबल नहीं रह गया। तिलक जी ने कांग्रेस में मेलजोल बढ़ाने का प्रयत्न अवश्य किया परन्तु उनकी उम्र ६० वर्ष की हो गयी थी। प्रायः वह अस्वस्थ रहा करते थे। उन्होंने राष्ट्रीय संगठन करके होमरूल आंदोलन चलाने के कार्यक्रम पर विशेष बल दिया। कांग्रेस के दोनों दलों में मेलजोल की भावना के आसार दिखने लगे। इस प्रकार सब तरफ मेलजोल का वातवरण पैदा हो गया। इसी बीच हिन्दू महासभा ने भी कांग्रेस से अपना मेलजोल स्थापित कर लिया और परिणामस्वरूप मदनमोहन मालवीय जैसे कांग्रेस एवं हिन्दूनिष्ठ नेता का महासभा के मंच पर अमन १६१५ में हरिद्वार अधिवेशन में हुआ।

फिर भी जहाँ कांग्रेस के आंदोलन सिर्फ राजनैतिक थे, वहीं हिन्दू महासभा अभी मुख्य रूप से धार्मिक संगठन थी। १६१५ में हिन्दू महासभा की वार्षिक रिपोर्ट का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि अब न वह ब्रिटिश सत्ता की विरोधी थी और न कांग्रेस की। हिन्दू महासभा के सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अध्ययन से पता चलता है कि उसके सांस्कृति कार्यक्रम जो ५–६ वर्ष पूर्व हुआ करते थे, वैसे ही १६१५ में भी सम्पन्न हुए। हिन्दू सभा (पंजाब) की गतिविधियाँ उसकी वार्षिक रिपोर्ट से स्पष्ट हैं।

(१) कार्यकारिणी समिति की बैठक

१६१५ के दौरान कार्यकारिणी समिति की २५ बैठकें सम्पन्न हुई जिनमें हिन्दू समुदाय की रक्षा के लिए किये जाने वाले उपायों के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा की गयी।

(२) सभा की सामान्य बैठक

सभा की दो सामान्य बैठकें इस वर्ष सम्पन्न हुईं, जिसमें से एक २५ अप्रैल, १६१५ को, जो सभा के वार्षिक उत्सव के उपलक्ष्य में आगामी वर्ष के लिए कार्यकारिणी समिति के चुनाव के लिए आयोजित की गयी थी और दूसरी बैठक जून को सम्पन्न हुई जो विशेष अधिवेशन पंजाब हिन्दू सभा लाहौर में आयोजित करने हेतु, प्रतिनिधियों के चुनाव के लिए की गयी थी।

(३) हिन्दू त्यौहारों के समारोह

हिन्दू त्यौहारों पर उत्सव का आयोजन करना पंजाब हिन्दू सभा के मुख्य कार्यक्रमों में से एक था। वर्षों से जो बसन्त पंचमी एवं होली के त्यौहार हिन्दू सभा द्वारा सम्पन्न किये जा रहे थे, वे इसके सराहनीय कार्य थे। बसन्त पंचमी का उत्सव धर्मवीर वीर हकीकत राय की समाधि पर खुले मैदान में सम्पन्न हुआ। वह अपने में एक रोचक आयोजन था जो भजन, गीत और खेलकूद के माध्यम से आयोजित हुआ था। होली पर्व के उपलक्ष्य में हिन्दू सभा द्वारा एक जनसभा आयोजित की गयी जिसमें हिन्दुओं के सभी धर्मों एवं विचारधाराओं के व्यक्ति सम्मिलित हुए। इस पर्व का उत्सव स्थानीय भजन मण्डली के गीत एवं संगीत द्वारा तथा रंग एवं गुलाल की क्रीड़ा के माध्यम से सम्पन्न हुआ।

भद्रकाली का मेला एक महत्वपूर्ण हिन्दू मेला जो लाहौर में आयोजित होता था, वहाँ के स्थानीय अधिकारियों ने हैजे के प्रकोप की आशंका से मेले को स्थगित करने का आदेश दे दिया। यह बात जब हिन्दू सभा के सामने आयी तो कार्यकारिणी समिति ने लाहौर सम्भाग के कमिशन के पास एक टेलीग्राम भेजा जो इस प्रकार है–

The orthodox Hindu public of Lahore was agitated at the stoppage of the Bhadrakali fair, the greatest Hindu festival. where religious tonsure and sacred thread ceremonies are performed. The punjab Hindu Sabha respectfully prays that the order stopping the fair be kindly with drawn. The sabha prepared to co-operate with the authorities in sanitary measures.

हिन्दू सभा पंजाब के टेलीग्राम के जवाब में सम्भागीय कमिश्नर ने जो उत्तर भेजा वह इस प्रकार है:

The Commissioner much regrets the necessity of stopping the Bhadrakali fair, but he is satisfied that the danger of the spread of cholera renders the stoppage wise and necessary. He acknowledges the offer of coperation of the Sabha in sanitary measures and in investigation the possibility of arrangements which will make the fair ground safe for use in future years.

हिन्दू सभा पंजाब के टेलीग्राम का प्रभाव प्रशासन पर अवश्य ही पड़ा और आगामी वर्ष में भद्रकाली मेली आयोजन हेतु मेला मैदान को हैजे के प्रकोप से सुरक्षित रखने का वायदा किया।

अकाल राहत कार्य

१६१४–१५ के दौरान पंजाब प्रान्त दुर्भिक्ष का शिकार हो गया था। वहाँ की जनता भूख से तड़प–तड़प कर मौत का शिकार हो रही थी। ऐसी विषम परिस्थिति में पंजाब हिन्दू सभा अकाल पीड़ितों की रक्षा के लिए आगे आयी। पंजाब में अनाज की कमी एवं खाद्य पदार्थों के बढ़ते मूल्यों को दृष्टि में रखते हुए हिन्दू सभा ने गरीबों को सहायता पहुंचाने के लिए सस्ते अनाज की दुकानें खुलवायीं लेकिन श्री जयगोपाल टंडन द्वारा संचालित (हिन्दू अकाल राहत फण्ड' के माध्यम से यह महत्वपूर्ण कार्य पहले से ही किया जा रहा था जिसमें सभी सम्प्रदाय के वर्गों का समर्थन प्राप्त था साथ ही लेफ्टिनेन्ट गवर्नर ऑफ पंजाब का संरक्षण भी प्राप्त था। पंजाब हिन्दू सभा ने इस योजना में सहयोग देने का निर्णय लिया तथा उसने अलग से नये फण्ड शुरू करने के इरादे बदल दिये। इस प्रकार हिन्दू सभा जहाँ एक सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनैतिक दल के रूप में पंजाब में अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही थी, वहीं सेवा संस्था के रूप में सभा का योगदान सराहनीय रहा।

मृत्यु शोक

हिन्दू सभा ने देश के महान नेताओं एवं महान व्यक्तियों की मृत्यु पर शोक प्रकट किये। उन नेताओं के नाम सर्वश्री गोपाल कृष्ण गोखले, म्यूनिसिपल कमिश्नर, लाला

मूलचन्द हिन्दू सभा के उपाध्यक्ष एवं महत्वपूर्ण नेता श्री रामस्रन दास की धर्मपत्नी आदि थे।

जार्ज पंचम (राजा) का जन्म दिन

देश की सभी छोटी–बड़ी पार्टियों की तरह हिन्दू सभा की नीति भी ब्रिटिश सभा के प्रति राजनैतिक सद्–व्यवहार पूर्ण थी। हिन्दू सभा ने ३ जून १६१५ को जार्ज पंचम का जन्म महोत्सव सोल्लास आयोजित किया एवं ब्रिटिश शासन को भारत में अधिक दिन कायम रहने की कामना भी की थी, यहाँ पर सभा की नीति कांग्रेस की नरम पंथी विचारधारा से मिलती –जुलती है। सभा की नीति यहाँ यह सिद्ध करती है अभी इसका दृष्टिकोण भारत की आजादी के लिए नहीं बन पाया था। सभा ने जार्ज पंचम के जन्मदिन के अवसर पर जो रूपक प्रस्तुत किया वह इस प्रकार हैः

''सबसे मंगलकारी जन्मदिन सम्मानीय सम्राट श्री जार्ज पंचम का था जो हिन्दू सभा द्वारा ३ जून को प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी सम्पन्न किया गया। इस उपलक्ष्य में हिन्दू सभा कार्यालय में एक विशेष बैठक आयोजित हुई तथा सम्मानीय सम्राट के दीर्घजीवी होने के लिए प्रार्थना के साथ ही साथ भारत में ब्रिटिश शासन के सतत् कायम रहने की कामना की। हिन्दू सभा ने प्रचण्ड युद्ध के समाप्त होने तथा मित्र राष्ट्रों की पूर्ण सफलता के लिए भी प्रार्थना की। इस उत्सव में राजधानी के महत्वपूर्ण हिन्दू नेताओं ने भाग लिया। जार्ज पंचम का जन्मोत्सव एक राजनैतिक सद्–व्यवहार अधिक था, इसे महासभा के नेताओं ने संस्कारोत्कर्ष करने वाले त्यौहारों की श्रेणी में कभी नहीं रखा।

महारानी वर्दवान बालिका हाईस्कूल

हिन्दू सभा पंजाब की देख–रेख में कई शिक्षण संस्थायें खोली गयीं। जिनमें ''महारानी वर्दवान बालिका हाईस्कूल' प्रमुख था। यह संस्था प्रबन्ध समिति की व्यवस्था में कार्यरत सतत् प्रगति के मार्ग पर अग्रसर थी। विद्यालय की वार्षिक रिपोर्ट से ज्ञात होता है इस विद्यालय ने चौतरफा विकास किया।

हिन्दू सभा पंजाब का विशेष अधिवेशन

लाहौर २७ जून १६१५ को पंजाब हिन्दू सभा के संविधान के सम्बन्ध में फिरोजपुर हिन्दू सम्मेलन में विभिन्न प्रश्न उठाए गये। इस प्रश्न पर पुनः विचार करने के लिए २७ जून १६१५ को लाहौर के श्री रायबहादुर रामचरण दास की लाल कोठी में हिन्दू सभा का विशेष अधिवेशन आयोजित किया गया। जो संविधान, सभा के इस अधिवेशन में स्वीकार किये गये थे, उसे कार्यरूप देने के लिए सम्मेलन ने अलग से रिपोर्ट घोषित की।

झांग डकैती

सभा की कार्यकारिणी समिति मुल्तान, झाँग मुजफ्फरगढ़ में डकैती से त्रस्त हिन्दुओं को राहत देने के लिए एक सेवा संस्था के रूप में प्रतिनिधित्व करने के लिए आगे बढ़ी। इस सम्बन्ध में दो प्रतिनिधि मण्डलों ने पंजाब के सम्मानीय लेफ्टिनेन्ट गर्वनर जनरल से भेंट की। एक प्रतिनिधि मण्डल हिन्दू सभा ने भेजा जो प्रभावित जिलों में डकैती के दौरान हुई क्षति पूर्ति करने तथा अकाल पीड़ितों के लिये सामग्री एकत्र करने के लिये कारगर कदम उठाये।. ......

शामती हिन्दुओं का सुधार

हिन्दू सभा की कार्यकारिणी समिति ने शामती हिन्दुओं के जीवन सुधार के सम्बन्ध में विचार–विमर्श करने के लिए अनेक बैठकें बुलाईं जिनमें इस पन्थ के नेता भी लाहौर में उपस्थित हुए। फिर भी हिन्दू सभा कोई खास महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत नहीं कर सकी। अतः सुधार कार्य के लिए एक उप समिति गठित की गई।

सभा का संविधान

हिन्दू सभा का एक विशेष अधिवेशन जून १६१५ में सम्पन्न हुआ, जिसमें सभा ने नये संविधान को स्वीकार किया था। जो प्रतिनिधि फिरोजपुर सम्मेलन में चुने गये थे उनमें से मात्र पांच को कार्यकारिणी समिति या परिषद में सम्मिलित किया गया। उन महानुभावों के नाम इस प्रकार थेः (१) लाला गोपाल चन्द्र, अधिवक्ता लाहौर, (२) लाला मुकन्द लाल, अधिवक्ता, फिरोजपुर, (३) लाला तारा चन्द, अधिवक्ता, अम्बाला, (४) लाला फकीर चन्द, अधिवक्ता, होशियारपुर, (५) डॉ० पारसनाथ, चिकित्सक, फिरोजपुर।

हिन्दू सभा का वार्षिक हिसाब-किताब

पंजाब हिन्दू सभा अपने आय–व्यय का हिसाब–किताब व्यवस्थित ढंग से रखती थी। आय का मुख्य स्रोत चन्दा था जो हिन्दू सभा के प्रति सहानुभूमि रखने वाले लोगों से प्राप्त किया जाता था। हिसाब को जांचने के लिए योग्य ऑडिटरों की नियुक्तियाँ की जाती थी। सभा की आमदनी पिछले वर्ष की अवशेष धनराशि और बिल्डिंग फण्ड को मिलाकर रु० १२७७८–१३–६ थी। खर्च रु० १८७१–१२–६ हुए और अवशेष राशि रु० १०६०७–१–३ रही। सभा का तुलन पत्रक योग्य ऑडिटर द्वारा जांच किया गया था। महारानी वर्दवान बालिका हाईस्कूल का हिसाब–किताब अलग से रखा गया जिसे स्कूल की वार्षिक रिपोर्ट में प्रकाशित किया गया।

हिन्दू सभा वार्षिक रिपोर्ट के अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि पंजाब में हिन्दू सभा का प्रारूप राजनैतिक कम तथा सांस्कृतिक, सामाजिक एवं धार्मिक अधिक था। वैसे १६१५ का वर्ष भारतीय राजनीति में काफी शिथिल रहा था। विभिन्न समुदायों के बीच भेदभाव कम हो गया था। मुस्लिम लीग की नीतियों में भी कुछ राजनैतिक कारणों से परिवर्तन दिखने लग गया। ऐसी परिस्थितियों में हिन्दू सभा के दृष्टिकोण में भी कुछ परिवर्तन अवश्य दीखा। सभा अब ब्रिटिश सत्ता की विरोधी नहीं थी बल्कि वह नरमपंथी कांग्रेस के पदचिन्हों पर चलने लग गयी। यही कारण है कि सभा ने १३ जून १६१५ को जार्ज पंचम के जन्मदिन का आयोजन किया, साथ ही ब्रिटिश शासन के लम्बी अवधि की कामना की। हिन्दू सभा के आन्दोलन ने भले ही अभी तक स्वतन्त्रता आन्दोलन में योगदान न दिया हो फिर भी हिन्दू त्यौहारों जैसे बसन्त पंचमी, होली और हकीकतराय बलिदान दिवस के माध्यम से राष्ट्रवादी चेतना को जगाने में सहायक हो रही थी। इसके अतिरिक्त सभा ने अकाल पीड़ित लोगों को राहत पहुंचा कर आर्य समाज की तरह सेवा संस्था के रूप में अपने को सिद्ध किया। अछूत हिन्दुओं के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने में भी सभा की महत्वपूर्ण भूमिका रही। भारत के महत्वपूर्ण नेताओं की मृत्यु पर शोक व्यक्त करना इस बात का परिचायक है कि हिन्दू नेताओ के प्रति सभा की सहानुभूति थी। सभा का संविधान था

जिसके संवैधानिक दायरे में रहकर हिन्दू सभा के, सदस्य अनुशासित रूप में कार्य करते थे। सभा का वार्षिक हिसाब भी होता था जैसा कि १९१० एवं १९१५ की वार्षिक रिपोर्ट के अध्ययन से ज्ञात होता है। सभा की आय का मुख्य स्रोत चन्दा था अर्थात् यह चन्दा पर आधारित संस्था थी जिसकी आय का स्रोत सहानुभूति तथा समर्थन रखने वालों का योगदान था।

हिन्दू महासभा का अखिल भारतीय स्तर पर पहला अधिवेशन अप्रैल १९१५ हरिद्वार

हिन्दू महासभा का अखिल भारतीय स्तर पर यह अधिवेशन जो हरिद्वार में सम्पन्न हुआ वह राष्ट्रीय स्तर पर पहला अधिवेशन था। कासिम बजार नरेश महाराजा मनीन्द्र चन्द नन्दी के सभापतित्व में हरिद्वार में सभा का महासम्मेलन अनुष्ठित किया गया तब से आज तक प्रति वर्ष देश के विभिन्न प्रदेशों में वार्षिक आयोजन क्रम से चला आ रहा है। इससे हिन्दू संगठन की दिशा में देश सचेत होने लगा। इसी वर्ष हिन्दू महासभा का मुख्य कार्यालय इलाहाबाद से स्थानान्तरित करके हरिद्वार ले आया गया। इस सम्बन्ध में श्री आर० सी० मजूमदार लिखते हैं:

The organizers used to convene the annual sessions of the Akhill Bhartiya Hindu conference at Hardwar generally on the occasion of certain annual fairs. Henceforth an annual session of the Akhil Bharatiya Hindu Mahasabha took place at Hardwar and its headquarter was located there.

इस प्रकार १९१५, १९१६, १९१७ तक लगातार ३ अधिवेशन हरिद्वार में ही सम्पन्न हुए। इसी वर्ष सनातन धर्म के नेता मदनमोहन मालवीय एवं देवरतन शर्मा ने भी महासभा में प्रवेश किया। दोनों नेताओं ने हरिद्वार में सनातन धर्म सभा के मुख्य केन्द्र की स्थापना की थी। जिस प्रकार पंजाब के प्रमुख आर्य समाजी नेताओं ने हिन्दू सभा में पदार्पण किया था उसी प्रकार संयुक्त प्रान्त के सनातनी नेताओं का आगमन तेजी के साथ हुआ। सनातनी, आर्यसमाजी, बौद्ध, जैन आदि अन्य पन्थ के लोग इस मंच पर आये जिसके कारण बिखरा हुआ हिन्दू समाज अब संगठित होते दीखने लगा। पं० मदनमोहन मालवीय जी के साथ अन्य कांग्रेसी नेता, बाबू राजेन्द्र प्रसाद, डॉ० मुंजे, मोतीलाल नेहरू, यहाँ तक कि महात्मा गाँधी भी महासभा के अधिवेशनों में समय–समय पर सम्मिलित हुए। मदनमोहन मालवीय हिन्दू महासभा में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। उन्होंने दिसम्बर १९१५ में महासभा के विशेष अधिवेशन बम्बई की अध्यक्षता की।

हिन्दू-मुस्लिम पेक्ट दिसम्बर १९१६, लखनऊ

बालकन युद्ध और महायुद्ध के फलस्वरूप अंग्रेजों द्वारा टर्की के सुल्तान के प्रति अपनायी गयी नीति के कारण भारत में अंग्रेजों और मुसलमानों के बीच कटुता पैदा हो गयी। उस समय टर्की का सुल्तान पूरे विश्व के मुसलमानों का खलीफा कहा जाता था, जिसका असर भारतीय मुसलमानों पर पड़ा। मुसलमानों का दबाव अब ब्रिटिश सरकार की तरफ न रहकर हिन्दुओं के प्रति होने लगा। परिणामस्वरूप १९१६ में हिन्दू एवं मुसलमानों ने बीच की कटुता समाप्त करने के लिए लखनऊ में कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग में समझौता हुआ। कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के इस ऐतिहासिक समझौते को हिन्दू–मुस्लिम पेक्ट के नाम से जाना जाता है। लखनऊ में इस कांग्रेस के सभापति श्री अम्बिकाचरण मजूमदार चुने गए। यह कांग्रेस अपने ढंग की अद्वितीय थी। एक तो उसमें हिन्दू–मुस्लिम पेक्ट हुआ, दूसरे स्वराज्य की योजना पेश हुई और कांग्रेस के दोनों दलों में जो कि १९०७ से पृथक्–पृथक् थे, एक हो गए। वास्तव में यह दृश्य देखते बनता था। लोकमान्य तिलक और खापड़ें, रास बिहारी घोष और सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, एक साथ एक ही स्थान पर बराबर बैठते थे। श्री मती बेसेन्ट भी अपने दो सहयोगी अरण्डेल और वाडिया साहब के साथ जिनके हाथों में होमरूल के झण्डे थे, वहीं बैठी थी। मुसलमानों में नवाब महमूदाबाद, मजहरूल हक और जिन्ना साहब भी उपस्थित थे। गांधी और मिस्टर पोलक भी वहीं विराजमान थे। कांग्रेस लीग योजना पर, जिसे कांग्रेस ने पारित किया था, तुरन्त ही मुस्लिम लीग ने भी अपनी मुहर लगा दी।

The Congress-League Pact of 1916 according to which the Congress leadership gave it stactic approval to the British policy of seperate electroates and communal representation for Muslims as a price for the Muslim Leagues co-operation with the 'Hindu Congress.

इस संधि में मुस्लिम लीग ने अपना भावी कार्यक्रम भी निर्धारित किया। उसके कर्णधारों ने सीखा कि पृथकतावाद उनके लिए लाभकारी है। मुसलमानों की इस अनुभूति ने उन्हें भारत के राजनीति रूपी बाजार में एक ऐसी सहचरी सी विक्रय वस्तु बना दिया कि उसको अंग्रेज और हिन्दू दोनों अपनाना चाहते थे। लीग ने यह समझ लिया कि वह दोनों को बारी–बारी से निचोड़ सकती है।

लखनऊ संधि के विरोध में हिन्दू सभा का द्वितीय अधिवेशन हरिद्वार १९१६

कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग की संधि का विरोध हिन्दू महासभा के सचिव देवरत्न शर्मा ने तत्काल किया। इस सम्बन्ध में मयूख रंजन सर्वाधिकारी अपनी पुस्तक 'हिन्दू महासभा का संक्षिप्त इतिहास' में लिखते हैं, 'लखनऊ में कांग्रेस द्वारा १९१६ में कुख्यात साम्प्रदायिक संधि द्वारा भारत विभाजन का बीजारोपण किया। अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के सचिव पं० देवरत्न शर्मा ने तत्काल वहीं पर संधि का विरोध किया। परिणामस्वरूप १९१६–१७ में महासभा के महामंत्री सुखवीर सिंह ने संधि जनित परिस्थिति पर गम्भीरता पूर्वक विचार–विमर्श के लिये अधिवेशन बुलाया। अधिवेशन की अध्यक्षता पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने की। आर. सी. मजूमदार लिखते हैं–

Hence forth an annual session of the Akhil Bharatiya Hindu Mahasabha took place at Hardwar...... It received a great impetus from Lucknow Pact of 1916 and the new reference under the Act 1919 of both of which were regreted by a large body of Hindu outside of Congress as a curtailment of the just rights and interests of the Hindu.

लखनऊ समझौते के विरोध में एक विशेष अधिवेशन लखनऊ में भी इसी वर्ष दिसम्बर में सम्पन्न हुआ जिसकी अध्यक्षता श्री वी. पी. माधवराधो ने की।

हिन्दू महासभा का तृतीय अधिवेशन

हिन्दू महासभा का यह अधिवेशन भी हरिद्वार में सम्पन्न हुआ। इसकी अध्यक्षता पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने की। सन् १९१७ वाले अधिवेशन में राजा नरेन्द्रनाथ के नायकत्व में ३८ सदस्यीय

शिष्टमण्डल ने तत्कालीन राज्यमंत्री मि० मान्टेंग्यू से भेंट की और हिन्दुओं के दावे को उसके सामने ज्वलन्त रूप से प्रस्तुत किया तथा लखनऊ संधि का तीव्रतम विरोध किया।

इस अवधि में हिन्दू महासभा संयुक्त प्रान्त में अधिक प्रभावशाली थी। महासभा के अधिवेशनों से ज्ञात होता है कि १६१५ तक के जो ३ अधिवेशन राष्ट्रीय स्तर पर हुए थे वह सं० प्र० के हरिद्वार में ही सम्पन्न हुए। इस बीच दो विशेष अधिवेशन भी आयोजित किये गये थे, उसमें से एक १६१५ का अधिवेशन बम्बई और १६१६ का विशेष अधिवेशन लखनऊ समझौते के विरोध में लखनऊ में ही सम्पन्न हुआ। हिन्दू महासभा का रजिस्ट्रेशन १६१७ में एक संस्था के रूप में हुआ।

हिन्दू महासभा का नामांकन एक संस्था के रूप में

हिन्दू महासभा ११ दिसम्बर १६१७ में एक्ट १८६० के अधीन संस्था के ज्ञापन पत्र के अनुसार एक संस्था के रूप में रजिस्टर्ड हुई। संयुक्त प्रान्त के Joint stock companies के रजिस्टर में जो हिन्दू महासभा को नामांकन प्रमाण पत्र दिया है वह इस प्रकार है :

I hereby certify that pursuant to the provisions of Act XXXI of 1860 the Memorandum of Association and a copy of the Rules and Regulations of the All India Hindu Mahasabha have this day been field and that the said society has been registered under the above Act.

Given under my hand and seal this eleventh day of December one thousand nine hundred and seventeen fee Rs.50/- Fifty only.

Sd/-R.W.D. Willoughtby I.C.S.
Registrar, Joint Stock Companies
Lucknow, United Provinces

हिन्दू महासभा का चौथा अधिवेशन दिल्ली

२६, २७,२८ दिसम्बर १६१८ को इस विशाल सम्मेलन की अध्यक्षता राजा सर रामपाल ने की थी जिसमें भारत के विभिन्न प्रान्तों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

हिन्दू महासभा की स्थापना के प्रथम दशक के कार्यों का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि हिन्दू महासभा के कार्य दो रूपों में विभक्त थे। हिन्दू महासभा एक तरफ जहाँ धार्मिक एवं सांस्कृतिक आयोजनों द्वारा हिन्दू चेतना को जागृत करती थी, वहीं दूसरी तरफ चुनावों सम्बन्धी मामलों में जहाँ हिन्दुओं के प्रति सौतेले व्यवहार होते थे, के प्रति ब्रिटिश सरकार से संघर्ष करती थी। हिन्दू महासभा के धार्मिक आयोजन यद्यपि एक सांस्कृतिक कार्यक्रम के रूप में थे परन्तु उसका एक राष्ट्रीय महत्व था। गुरुगोविन्द सिंह जयन्ती का आयोजन, दशहरा महोत्सव, बसन्त पंचमी, होली, वीर हकीकतराय बलिदान दिवस आदि प्राचीन भारतीय गौरव को बनाये रखने में सहायक की भूमिका निभा रहे थे। ये उत्सव उसी रूप में आयोजित किये गये थे जिस प्रकार लोकमान्य तिलक गणपति उत्सव एवं शिवाजी जयन्ती आदि का आयोजन किया करते थे। बाल गंगाधर का शिवाजी जयन्ती एवं हिन्दू महासभा द्वारा वीर हकीकत राय बलिदान दिवस मनाये जाने का उद्देश्य धार्मिक तो था ही परन्तु साथ ही मुगलिया हुकूमत के समय में जो मुगल शासकों द्वारा हिन्दुओं पर किये अत्याचारों के इतिहास की याद को ताजा करने का कार्य कर रहा था। साथ ही यह सचेत कर रहा था कि मुसलमानों की निगाह में हर हिन्दू काफिर है और कुरान के अनुसार हर काफिर का कत्ल करना इस्लामी सिद्धान्त के अनुकूल है। इसलिये भारत में बढ़ते हुए इस्लामीकरण को रोककर भारत में पुनः प्राचीन गौरव को स्थापित करना, ऐसा उद्देश्य उन धार्मिक आयोजनों में अप्रत्यक्ष रूप में विद्यमान था। हिन्दू सभा पंजाब में असेम्बलियों के चुनाव में मुसलमानों को लाभ पहुंचाए जाने के विरोध में राजनैतिक भाषा अवश्य बोलने लग गयी थी। परन्तु राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दू महासभा का राजनैतिक महत्व नगण्य था। पंडित मदनमोहन मालवीय जो एक राष्ट्रीय नेता के रूप में उभर कर आये थे वे महासभा में अवश्य आ गये थे परन्तु वे महासभा के आयोजनों को एक धार्मिक रूप में करना चाहते थे। इसलिए मालवीय जी के साथ जितने भी कांग्रेसी नेता महासभा में आये सभी ने महासभा को कांग्रेस का पिछलग्गू बनाने की कोशिश की। महासभा के कई अधिवेशन कांग्रेस के साथ हुए परन्तु उनका कोई ऐतिहासिक महत्व नहीं था।

भारतीय नरेश भारतीय राजनीति के दो गुटों में बँटे थे। जहाँ मुस्लिम नवाबों ने मुस्लिम लीग को अपना राजनैतिक मंच चुना वहीं हिन्दू राजाओं ने हिन्दू महासभा को अपना राजनैतिक एवं धार्मिक मंच माना। हिन्दू महासभा के प्रति हिन्दू राजाओं की सहानुभूति थी। इसका कारण तीव्र हिन्दू चेतना रियासतों के शासकों में थी, उन्हीं के पूर्वजों ने हाड़ा बून्दी और राजस्थान की रियासतें दी हैं जिन्होंने यवन आक्रमणों का सामना किया। अभी तक जिन हिन्दू राजाओं ने हिन्दू मंच को सुशोभित किया था वे राजा थे, महाराजा दरभंगा, काशी नरेश, काशिम बाजार नरेश महाराजा मनीन्द्रचंद्र नन्दी, राजा सर रामपाल, महाराजा नरेन्द्रनाथ आदि। इन हिन्दू महाराजाओं का इस मंच पर आने का एक कारण यह भी था कि पंडित मदनमोहन मालवीय जी के हिन्दू राजाओं से अच्छे सम्बन्ध होना। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना पंडित जी ने तो १६१५ में की, उसके निर्माण हेतु मदद करने में हिन्दू राजाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

हिन्दू सभा की स्थापना के प्रथम दशक तक अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दू महासभा का गठन हो चुका था, परन्तु सबसे ज्यादा प्रभावशाली वह पंजाब में रही। दूसरे नंबर पर इसका प्रभाव उत्तर प्रदेश में था जहाँ महासभा के लगातार १६१५ से १६१७ तक तीन अधिवेशन सम्पन्न हुए। इस दौरान उत्तर प्रदेश में महासभा का मुख्य कार्यालय भी रहा। दिल्ली, बम्बई और कलकत्ता में महासभा का प्रभाव हल्का था प्रथम विश्व युद्ध जोरों पर था। अंग्रेजों के कूटनीतिक उत्साहवर्धन से मुसलमान पृथकतावादी की भूमिका अदा कर रहे थे और उनमें पेन इस्लामिज्म का नारा घर कर गया। इस बीच प्रमुख हिन्दू नेताओं का ध्यान विश्वयुद्ध की तरफ खिंचा हुआ था। इसलिए हिन्दू महासभा एक आंदोलनकारी संस्था के रूप में गति नहीं ले पा रही थी। सब मिलाकर अखिल भारतीय स्तर पर अभी तक महासभा का प्रभाव नगण्य था। लखनऊ संधि के बाद हिन्दू सभा का एक आंदोलनकारी संस्था के रूप में उभरने का संकेत अवश्य ही दीखने लगा था।

कई वर्षों में (या कई दशकों में) किसी एक शब्द विशेष को लेकर इतना घमासान नहीं हुआ होगा, जितना **'हिन्दू'** अथवा **'हिन्दुत्व'** को लेकर। यद्यपि इन दोनों शब्दों की गहनता, गम्भीरता और गरिमा को देखते हुए शब्द की संज्ञा का प्रयोग बहुत उपयुक्त या पर्याप्त नहीं है।

संसद से लेकर सड़क तक दूरदर्शन/रेडियो के स्टूडियो से लेकर चौपाल और चायखानों तक, पत्र-पत्रिकाओं से लेकर सभा, सम्मेलनों तक बस एक ही शब्द की धुन सुनाई देती है—हिन्दू, हिन्दुत्व, हिन्दूवाद, हिन्दूधर्म, हिन्दू समाज, हिन्दू राज्य,

हिन्दू, हिन्दुत्व और वीर सावरकर

✍ डॉ. हरीन्द्र श्रीवास्तव

हिन्दू–एकता, हिन्दू ध्वज, हिन्दू जनमानस, हिन्दू चेतना, हिन्दू मानसिकता, हिन्दू उदारता, हिन्दू सहिष्णुता आदि, आदि। और अब गुजरात चुनाव के बाद तो इस विशाल हिन्दू तरु में कई कोपलें भी फूट आई हैं। जैसे—**हिन्दू वोट बैंक, हिन्दू आक्रोश, हिन्दू फैक्टर, हिन्दू प्रतिशोध, हिन्दू लहर...** और भी न जाने क्या–क्या। मजे की बात यह है कि इस सारी **'हिन्दू महाभारत'** में सबसे रोमांचक तथ्य यह उभरता है कि स्वयं हिन्दू (चाहे वह किसी भी अर्थ में हिन्दू हो, जिसकी व्याख्या हम आगे करेंगे) **इन शब्दों को लेकर इतना परेशान नहीं है, जितने वह जो हिन्दू नहीं** हैं या फिर कच्चे या आधे हिन्दू हैं।

अर्थात्.... **वे लोग जो हिन्दू होते हुए भी एक सीमा के बाद अपने को हिन्दू कहते हुए डरते हैं।** यही उलटबांसी आज की सबसे घिनौनी विडम्बना है। **'हिन्दू' शब्द का प्रयोग सबसे पहली बार कब और किस सन्दर्भ में हुआ, इसका कोई प्रामाणिक उल्लेख नहीं मिलता।** पर हाँ, ग्यारहवीं शताब्दी में कवि चन्दबरदाई रचित **'पृथ्वीराजरासो'** में इसका धड़ल्ले से प्रयोग हुआ और वह भी बड़ी शान से, शूरवीर के अर्थ में, जैसे—

'जब हिन्दू दल जोर हुआ छुट्टी
मीरधर भ्रम
असमय अरबस्तान चला करन
उद्धसाक्रम'

(**हिन्दुत्व** : वीर सावरकर), (लाहौर संस्करण **पृ.** ४६)

शहाबुद्दीन को बार–बार हराने के बाद जब विजयश्री हिन्दुओं के हाथ लगी तो शहाबुद्दीन फिर न आने की शपथ लेकर भाग गया, परन्तु एक बार फिर अपना वचन भंग कर दिल्ली पर चढ़ाई कर दी। तब चन्दबरदाई ने लिखा—

निर्लज्ज, मलेच्छ को लाज नहीं, हम
हिन्दू लजवान',

इसके बाद से भूषण सरीखे कितने ही कवियों ने छत्रसाल और शिवाजी के पराक्रम में कितना साहित्य लिखा। भूषण की ये पंक्तियाँ भला किसने नहीं सुनी—

'राखी हिन्दुवानी, हिन्दुवान के
तिलक राख्यो,
स्मृति और पुराण राख्यो, वेद
विधिसुनी मैं
राखी रजपूती राजधानी राखी
राजन की,
धरा में धरम राख्यो, राख्यो गुण
गुणी में।'

सिखों के नवें गुरु श्री गुरु तेगबहादुर और दसवें गुरु श्री गुरु गोविन्दसिंह जी ने भी हिन्दुत्व की रक्षा का बीड़ा उठाया था और इसी यज्ञ में अपने प्राणों की आहुति भी दे दी। इस्लाम स्वीकार करने की बात पर वे सिंह की तरह गरजे थे।

'सकल जगत में खालसा पंथ गाजे,
जगे धर्म हिन्दू सकल भंड बाजे'

छत्रपति शिवाजी और राणा प्रताप की हिन्दू-निष्ठा और हिन्दू साम्राज्य के संकल्प को लेकर कुछ भी बताने की आवश्यकता है क्या?

और यहाँ यह भी जोड़ देना अप्रसांगिक न होगा कि **ये सभी शूरवीर हिन्दू धर्म से भी अधिक हिन्दू साम्राज्य अथवा हिन्दू राष्ट्र के निर्माण के लिए कृतसंकल्प थे। आज के पिलपिले, बिना रीढ़ के केंचुए हिन्दुओं की तरह नहीं जो कहने को जन्म से तो हिन्दू हैं, (अतः नाम, गोत्र, संस्कार हिन्दुओं वाले) या कर्म से हिन्दू हैं** (वे होली, दीवाली, दशहरा, रक्षाबंधन, संक्रान्त आदि धूमधाम से मनाते हैं)।

कुछ लोग और आगे बढ़कर हिन्दू धर्म मानने का दावा करते हैं, इसीलिए... घर–आंगन में तुलसी का बिरवा लगाते हैं, देवी–देवताओं के चित्र लगाते हैं, मन्दिरों, तीर्थस्थानों में नियमित रूप से जाते हैं, कथा, प्रवचन आदि बड़े भक्ति–भाव से सुनते हैं, यदा–कदा ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं, घर में गीता, रामायण सहेज कर रखते हैं, कई पशु–पक्षियों की पूजा करते हैं.... और बस हिन्दू होने का दायित्व पूरा हुआ। उनके लिए हिन्दू जन्म, धर्म और कर्म से परे कुछ भी नहीं। अर्थात **राष्ट्रीयता के स्तर पर उनका हिन्दुत्व से कुछ लेना देना नहीं, मुसलमानों के पचास से ऊपर मुस्लिम राष्ट्र हों, इससे उन्हें क्या अन्तर पड़ता है।** चालीस लाख यहूदियों के लिए इज्राइल जैसा प्रबल राष्ट्र है, यह बात इन **'धर्म-निरपेक्ष'** हिन्दुओं के गले नहीं उतरती, क्योंकि वह (उनके शब्दों में) भारत की गौरवपूर्ण परम्परा के विरुद्ध है, अतः हिन्दू धर्म की रक्षा कैसे करूँ? **हिन्दुओं पर होते हुए निरन्तर अत्याचार को कैसे रोकें?** बलपूर्वक या छलपूर्वक किए जा रहे धर्म–परिवर्तन को कैसे रोकें? हिन्दू–संगठन को कैसे प्रबल करें?

हिन्दू पूजा स्थलों पर निरन्तर होते हुए आक्रमणों को शास्त्रों के साथ–साथ शस्त्रों

से भी कैसे रोकें? **घरों में लगे हुए सभी देवी-देवताओं के चित्रों में, धर्म की सुरक्षा के लिए, उनके पास शत्रु दिखाए गए हैं, तो फिर ऐसा हम क्यों नहीं कर सकते?**

यह क्षमा–शीलता और उदारता वीरों पर ही फबती हैं। **इन लिजलिजे हिन्दुओं को धर्म की इतनी विकृत परिभाषा दी गई है कि 'सहो, और कुछ न कहो', 'एक थप्पड़ खाओ, दूसरा गाल बढ़ाओ।' इन्हें अक्षरधाम की आतंकवादी घटना से थोड़ा दुख हुआ हो तो हो,** (ऐसा गुजरात चुनाव के परिणामों से लगता है) **पर गोधरा काण्ड से ये विशेष विचलित नहीं होते। और यदि आप इन्हें हिन्दू बनने को कहते हैं तो आप कट्टरवादी कहलाते हैं**–धर्मान्ध, उन्मादी और साम्प्रदायिक भी। ऐसे तनावपूर्ण वातावरण में भी हिन्दू और हिन्दुत्व की सबसे सटीक, तर्कसंगत, प्रासंगिक और व्यावहारिक भाषा के लिए हमें रत्नागिरि में १६२४ में लिखी गई, वीर सावरकर की पुस्तक **'हिन्दुत्व'** की याद आती है, **जिसकी व्याख्या उन्होंने पहली बार १६३७ में अहमदाबाद (कर्णावती) में अखिल भारतीय हिन्दू-महासभा के १६वें अधिवेशन में दी थी,** और जो आज भी हर दृष्टि से अद्वितीय और अकाटय है। क्योंकि वह धार्मिक नहीं, **राष्ट्रीय है।**

'आसिन्धु सिन्धुपर्यन्ता यस्य भारतभूमिका।
पितृभूः पुण्यभूश्चैव स वै हिन्दुरिति स्मृतः'।।

अर्थात सम्पूर्ण हिन्दू वही है, जो सिन्धु सरिता से सिन्धु–सागर तक फैले हुए प्रदेश को अपनी पितृ–भूमि और पुण्य–भूमि मानता हो, **जिसकी शिराओं में पूर्वजों की आन-बान-शान का लहू पछाड़े मारता हो, जो हिन्दू जाति की संस्कृति को पैतृक धरोहर के रूप में अपनाता हो, जो इस सिन्धुस्तान (कालान्तर में हिन्दुस्तान) को अपनी पुण्यभूमि और ऋषि-मुनि अथवा पैगम्बरों की पुनीत जन्मभूमि मानता हो।**

'एक-राष्ट', 'एक-राष्ट्रीयता' और **'एक-संस्कृति'** हिन्दुत्व के यही तीन तत्व हैं और इस स्वीकारोक्ति मे किसी का निजी धर्म आड़े नहीं आता। **सावरकर के ही शब्दों**

स्वातन्त्र्य वीर सावरकर

कष्टों का नाम सुना होगा, सामना कष्ट का किया नहीं।
सुविधा के मार्ग गहे होंगे, संकट का जीवन जिया नहीं।।
होता स्वरूप कष्टों का क्या? यदि इसे देखना चाहे मन।
तो दूर नहीं जाना होगा, पढ़ लो सावरकर का जीवन।।

इतने पर भी सावरकर, निशि–भर साहित्य रचा करते।
ईंटों के टुकड़े, दीवारें, लेखन–साहित्य हुआ करते।।
तब देशभक्त नव–युवकों में लेखनी प्रेरणा भरती थी।
सरकार, पता चल जाये तो, प्रतिबिन्धित भी करती थी।।

कितनी विपदाएं झेली थी, तब जाकर आजादी आई।
लेकिन सत्ता के लालच में, खण्डित स्वतंत्रता मिल पाई।।
गद्दी के गिद्ध प्रसन्न हुए, पर माँ के बेटे रोये थे।
कुछ घायत अंग हुए माँ के, कुछ अंग पूर्णतः खोये थे।।

तब रोया था सावरकर भी, शोणित के अश्रु बहा करके।
हे माँ! तुमको न बचा पाये, हम असहनीय भी सह करके।।
इससे भी उबर न पाये थे, गाँधी हत्या दुर्भाग्यमयी–
कर गई, पुनः सावरकर को, संघर्षमयी –संघर्षमयी।।

सत्ता पर बैठे गिद्धों ने, निर्दोष विनायक फँसा दिया।
कारा के भीतर बेचारा, वह बूढ़ा शेर निरुद्ध किया।।
जो किया यहाँ अंग्रेजों ने, उससे न थका सावरकर था।
स्वाधीन देश में घटित सभी, पापों का मूल जवाहर था।।

था महाकाल बनकर आया, सावरकर घोर गुलामी का।
खा गया दास्ता चबा–चबा, वह अपौरुषेय संग्रामी था।।
लेकिन अपनों से लड़ता क्यों? यह जीवन का सिद्धान्त नहीं।
यह कथा महासागर जैसी, इसका होगा क्या अन्त कहीं।।

इतिहास समझने की क्षमता, इतिहास बनाने की ऊर्जा।
अवसर की गहरी परख उसे, इसलिए न उस जैसा दूजा।।
क्योंकि चुनौती स्वीकारी, विपदाएं बदली अवसर में।
यह शिवा–छत्रपति का गुण था, स्वातन्त्र्य वीर सावरकर में।।

सब कुछ अर्पित भारत माँ को, सारा कुटुम्ब भारत माँ का।
जिससे प्रेरित अनगिन जवान, तारुण्य खिला भारत माँ का।।
दे गये, चढ़े तख्तों पर थे, माँ को आजाद कराने को।
सावरकर का सुस्मरण करें, सावरकर–सा बन जाने को।।

हर कष्ट झेलते माता का, जो सदा समर्पित रहता है।
हर समय देश के कार्यों में, चिन्तन में डूबा रहता है।।
रुक कर न कभी, थक कर न कभी, तेजस्वी यात्रा करता है।
संघर्षशील उस मानव को, जन–जन सावरकर कहता है।।

डॉ. श्रीकान्त

में कहें, तो 'बोहरे, खोजे, ईसाई और मुसलमान,, जो कभी हमारे ही भाई-बन्धु थे, उनके लिए यही स्वर्णिम अवसर है कि हमसे मिल जाएं और 'हिन्दुत्व शब्द के राष्ट्रीय अर्थ के साथ खींचा-तानी न करें।'**

पूर्ण हिन्दू केवल जन्म, कर्म व धर्म से नहीं, मर्म से होता है। **आस्था की आत्मा से उपजी, इस राष्ट्र समर्पित अवधारणा की कसौटी पर कुछ विरले ही खरे उतर पाते हैं। यूं तो लाला राधाकिशन और पं. सीताराम हर गली दुकान पर रहते हैं, पर काकोरी कांड के शहीद अशफाक उल्ला का फांसी से पहले पं. रामप्रसाद 'बिस्मिल' से यह कहना कि 'यार मुल्क की आजादी का सेहरा किसी मुसलमान के सर भी बंधने दोगे, या सारा श्रेय तुम लोग ही ले लोगे?' उसे लाखों, करोड़ों हिन्दुओं से ऊपर खड़ा कर देता है.** जो दरअसल हिन्दुओं के नाम पर कलंक है....

ऐसे हिन्दू.... दान में भले ही सबसे आगे हों पर बलिदान में सबसे पीछे हैं।

अखण्ड भारत के स्वप्न द्रष्टा थे वीर सावरकर

✍ तेलूराम कांबोज

खेद का विषय है कि विश्व के महानतम् क्रांतिकारियों के शिरोमणि, अनूठे व्यक्तित्व के धनी विनायक दामोदर सावरकर के सम्बंध में आज की नई पीढ़ी बिल्कुल भी नहीं जानती इसलिए उनके जीवन पर मैं थोड़ा सा प्रकाश डालने का प्रयास कर रहा हूँ। श्री सावरकर जी का जन्म २३ मई १८८३ को नासिक जिले के एक ग्राम में हुआ था। किशोरावस्था में उन्होंने पूना में एक सभा को सम्बोधित करते हुए कहा था स्वतंत्रता साध्य है और सशस्त्र क्रांति साधन है। तभी उन्होंने विदेशी माल का बहिष्कार कर जलाने का अभियान चलाया। जिससे उन्हें कालेज से निकाल दिया गया। इसके बाद वह बम्बई चले गये। वहां पर उन्हें जानकारी मिली कि लंदन में श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा भारत की आजादी के लिए अभियान चलाकर भारत के राष्ट्रभक्त युवकों को अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति का प्रबंध करते थे। श्री सावरकर जी ने लंदन जाने के लिए लोकमान्य तिलक जी की सिफारिश पर छात्रवृत्ति प्राप्त कर लंदन जाने का कार्यक्रम बनाया और वहाँ पहुंचकर श्यामजी कृष्ण वर्मा द्वारा संचालित इंडिया हाउस जो क्रांतिकारियों का केंद्र बन गया था वहीं पर सावरकर जी ठहर गए। सर्वप्रथम सावरकर जी ने ही भारत के लिए पूर्ण स्वराज्य की मांग की थी। पचास साल की कैद पाने वाले वह पहले और अकेले क्रांतिकारी थे। वह पहले ऐसे भारतीय बैरिस्टर थे जिन्हें शिक्षा पूरी कर लेने और परीक्षा पास करने के बावजूद उन्हें क्रांतिकारी विचारों के कारण डिग्री देने से इंकार कर दिया था। सावरकर जी पहले ऐसे लेखक थे जिनकी पुस्तक १८५७ का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के प्रकाशन से पूर्व ही २ देशों इंग्लैंड और भारत ने रोक लगा दी थी। श्री सावरकर जी पहले ऐसे कैदी थे जिन्होंने कालापानी की सेलूलर जेल की कालकोठरी में कील से दीवारों पर क्रांतिकारी कविताएं लिखीं। वह पहले ऐसे कैदी थे जिनकी रिहाई के लिए हेग की अंतराष्ट्रीय अदालत में मुकदमा चला। श्री सावरकर जी एकमात्र ऐसे क्रांतिकारी थे जिन्होंने उच्चकोटि के काव्य, नाटक, कहानी निबंध आदि के अतिरिक्त इतिहास और राजनीति पर भी पांडित्य पूर्ण ग्रन्थों की रचना की। २७ वर्षों तक अंडमान और रत्नागिरी की जेलों में अपना सर्वस्व होम करने वाले सावरकर जैसा क्रांतिकारी विश्व में दूसरा नहीं हुआ।

जब अंग्रेज उन्हें गिरफ्तार करके इंग्लैण्ड से जहाज द्वारा भारत ला रहे थे तो रास्ते में ही फ्रांस के तट के समीप हथकड़ी से जकड़े हुए सावरकर ने जहाज से समुद्र में छलांग लगाकर एक नया इतिहास रचा था। वह सशस्त्र क्रांति और भारत के सैन्यकरण के समर्थक थे। शहीदे आजम भगत सिंह ने अदालत में देशभक्ति की प्रेरणा उन्हें सावरकर से प्राप्त हुई यह स्वीकार किया था। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने भी सावरकर जी से प्रेरणा प्राप्त करने की बात कही थी। सावरकर जी ने उन्हें कहा था अंग्रेजों की जेल में सड़ सड़कर मरने से यह अच्छा होगा कि देश से फरार होकर विदेश जायें और वहां भारत से अंग्रेजों को मार भगाने के लिए सेना में भर्ती की जाये। नेताजी ने यह भी रहस्योद्घाटन किया था कि आजाद हिंद फौज की कल्पना भी सावरकर जी के निर्देश पर की गई थी। सावरकर के मन में एक यही भावना थी हे मातृभूमि! तेरे लिए मरना ही जीना है और तुझे भूलकर जीना ही मरना है। सावरकर जी के विचारों से किसी का मतभेद हो सकता है किन्तु उनकी देशभक्ति पर अंगुली उठाना सूर्य पर धूल उड़ाने के समान है। श्री सावरकर जी छत्रपति शिवाजी, कौटिल्य, और महर्षि दयानन्द के विचारों से गहरे तक पैठ रखते थे। सम्पूर्ण सावरकर वाग्मय में ढूंढे से भी कहीं कोई ऐसी पंक्ति नहीं मिलती जिसमें मुसलमानों का उत्पीड़न एवम् प्रताड़ित करने का समर्थन किया गया हो। श्री सावरकर जी हिंदू समाज की समरसता के प्रबल समर्थक थे। ऐसे महान क्रांतिकारी, शिरोमणि, अनूठे साहित्य मनीषी तथा समाज सुधारक थे। गाजियाबाद नगर की **शहीद स्मृति फाउंडेशन जिसके संयोजक श्री हरविलास गुप्ता हैं। शहीद स्मृति फाउंडेशन के प्रयास में** शास्त्री नगर रजापुर रेलवे फाटक के ऊपर निर्मित सेतू का नामकरण वीर सावरकर सेतु किये जाने पर तथा वहीं पास ही राष्ट्रीय स्वयं सेवक कार्यालय पर वीर सावरकर जी का विशाल प्रतिमा का अनावरण मेरे द्वारा कराकर वीर सावरकर जी को उनकी पुण्यतिथि पर भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गई है।

शेष पृष्ठ 55 का **अमर सेनानी.....**

कर समुद्र में कूद पड़े। जैसे ही पुलिस अधिकारियों को जहाज में इस रोमांचकारी घटना का पता लगा, वे काँप उठे। एक भारतीय युवक के इस प्राकर के अदम्य साहस व अनुपम बहादुरी को देखकर गोरे अधिकारियों ने आश्चर्य से दाँतों तले अंगुली दबा ली। सावरकर तैरते हुए, डुबकी लगाते हुए किनारे की ओर बढ़ने का प्रयास करने लगे। उधर गोरे सावरकर पर गोलियों की बौछार कर रहे थे, किन्तु सावरकर एक विजयी सिंह की भाँति मीलों तैरने के बाद सागर तट पर आ गये। सागर तट फ्रांस की सीमा में था। उन्होंने तट के पास खड़े हुए एक फ्रांसीसी सिपाही से खुद को गिरफ्तार कर लेने को कहा। उधर गोरे सिपाही व अधिकारी सावरकर का पीछा करते हुए तट पर आ पहुंचे। गोरों ने चोर–चोर का शोर करके उनका पीछा किया। फ्रांसीसी सिपाही ने अंग्रेजों के प्रभाव में आकर सावरकर को उन्हें सौंप दिया। सावरकर ने गोर सिपाहियों से गुत्थमगुत्था भी की, किन्तु वह अकेले उनका कब तक सामना कर सकते थे। अंत में गोरों ने उन्हें हथकड़ी–बेडियों से जकड़कर जहाज पर चढ़ाया और भारत की ओर ले चले। सावरकर के अदम्य साहस की यह रोमांचकारी घटना पूरे विश्व में बिजली की तरह फैल गयी। ब्रिटिश साम्राज्य के ही नहीं अपितु विश्व भर के समस्त समाचार पत्रों के मुख्य पृष्ठ पर प्रमुखता के साथ इस रोमांचकारी समाचार को छापा गया। अनेक पत्रों ने एक भारतीय युवक के इस अदम्य साहस को दैवी घटना तक लिखा। अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस व रूस आदि देशों के समाचार पत्रों ने तो यहां तक लिखा कि सावरकर जब फ्रांस की सीमा में पहुंच गये तो उन्हें पुनः गिरफ्तार करने का अंग्रेजों को कोई भी अधिकार नहीं था। अंग्रेजों ने यह अवैधानिक कार्य किया है। फ्रांस की भूमि में गिरफ्तारी वैध थी अथवा अवैध? इस प्रश्न पर निर्णय के लिए हेग के अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में मुकदमा गया, किन्तु निर्णय सावरकर के विरुद्ध गया।

दो आजन्म कारावासों का दण्ड

मुंबई के एक विशेष न्यायाधिकरण में श्री सावरकर पर मुकदमा चलाया गया। १५ दिसंबर, सन् १६१० को मुकदमा प्रारम्भ हुआ। उन पर तीन अलग–अलग मुकदमे चलाये गये। पहले मुकदमे में ३८ अभियोगी थे तथा दूसरे में सावरकर जी तथा श्री गोपालराय पाटणकर थे। तीसरे मुकदमे में अकेले सावरकर ही अभियोगी थे। मुकदमे में सावरकर आदि की ओर से श्री गोविन्दराय गाडगिल, श्री चित्रे इत्यादि विधिज्ञों ने पैरवी की और सरकार की ओर से एडवोकेट जनरल जार्डिन, श्री वेलिंगकर तथा मि. निक्सन आदि ने मुकदमा लड़ा।

सावरकर जी को पहले अभियोग में आजन्म कारावास का दण्ड सुनाया गया। साथ ही जैक्सन की हत्या की प्रेरणा देने के आरोप में दूसरा मुकदमा भी चलाया गया। २३ जनवरी, सन् १६११ को मुकदमा प्रारम्भ हुआ और ३१ जनवरी को उन्हें पुनः आजीवन कारावास का दण्ड सुना दिया गया। जजों ने अपने निर्णय में सावरकर को अंग्रेजी साम्राज्य के लिए भयंकर षड्यंत्रकारी, महान चतुर एवं दुस्साहसी बताते हुए यह भी लिखा कि सावरकर को फांसी का दण्ड भी कम था, किन्तु हम आजन्म कारावास दण्ड ही देते हैं। जिस समय न्यायालय ने सावरकर को दो जन्मों (५० वर्ष) का कारावास का दण्ड सुनाया तो उन्होंने हंसते हुए कहा– "मुझे बहुत प्रसन्नता है कि ईसाई (ब्रिटिश) सरकार ने मुझे दो जीवनों का कारावास दण्ड देकर पुनर्जन्म के हिन्दू सिद्धांत को मान लिया है।" अदालत के बाहर सावरकर जी के मुकदमे का निर्णय सुनने के लिए हजारों व्यक्ति एकत्रित थे।

सावरकर जी ने निर्णय सुनने के बाद अपने एक साथी से कहा–"तप, बलिदान एवं त्याग से ही स्वातन्त्र्य–लक्ष्मी प्रसन्न होगी। भारतीयों को अब अपना सर्वस्व मातृभूमि के चरणों में निछावर कर देना चाहिए, तभी हम अंग्रेजी साम्राज्य के ध्वस्त करने में सफल होंगे।" युवक सावरकर ने बैरिस्ट्री का काला गाउन पहनने के बदले कैदियों के कपड़े स्वीकार किये। उन्होंने सुख–संपत्ति के मार्ग को छोड़कर सिर पर कांटों का ताज पहना। हथकड़ी–बेड़ियों से जकड़कर उन्हें कालापानी भेजने से पूर्व डोंगरी कारावास में भेज दिया गया। डोंगरी जेल में उन्हें उसी ऐतिहासिक बैरक में रखा गया, जिसमें श्री लोकमान्य तिलक को दो बार रखा गया था। वीर सावरकर को दो आजन्म कारावास का दण्ड दिये जाने के समाचार से समस्त देश में क्षोभ की लहर दौड़ गयी। ब्रिटिश सरकार के पास कई हजार विरोध पत्र भेजकर सावरकर को मुक्त करने की मांग की गयी। किन्तु सरकार अपने निर्णय से टस से मस नहीं हुई।

बंदी जीवन

डोंगरी जेल में सावरकर जी को रस्सी कूटने का काम दिया गया। जेल में सावरकर जी ने महाकाव्य रचने का निर्णय किया। महाकाव्य लिखने की उनकी बचपन से ही इच्छा थी। किन्तु लेखन सामग्री के अभाव में किस प्रकार कुछ लिखा जाए, यह समस्या आई। उन्होंने निर्णय किया कि दस–बीज कविताएं रचकर उन्हें कंठस्थ कर लिया जाये और फिर आगे रची जायें। वीर सावरकर जी ने गुरु गोविन्दसिंह पर कवितायें रचनी प्रारम्भ कर दीं। उन्होंने काफी कविताएं लिखकर कंठस्थ कर डालीं।

एक दिन अचानक सावरकर जी की १६ वर्षीया पत्नी श्रीमती यमुनाबाई एवं साला डोंगरी जेल में उनसे भेंट करने आये। पत्नी ने देखा कि लोहे के मोटे–मोटे सींखचों के पीछे उनके पति कैदियों के मोटे कपड़े एवं हथकड़ियों–बेड़ियों के आभूषण पहने खड़े हैं। चार वर्ष पूर्व जब पत्नी अपने पति को विदेश के लिए विदा करने बन्दरगाह पर पहुंची थी, तो यह कल्पना की थी कि चार–पांच वर्ष बाद वह बैरिस्टरी की पदवी धारण कर वापस लौटेंगे। किन्तु आज पति को कैदियों के वेश में लोहे के जंजीरों में जकड़ा देखकर आंखों से अश्रुधारा प्रवाहित हो उठी। सावरकर ने अपनी कोमल–सी नन्ही पत्नी को आंखों में अश्रुधारा देखी तो वह स्वयं विह्वल हो उठे। उन्होंने धीरज बंधाते हुए कहा–"क्या तुमने मुझे देखकर पहचान लिया? ये कपड़े केवल बदल दिये गये हैं, मैं तो वही हूं। इन मोटे कपड़ों से तो ठंड तक नहीं लग पाती, बड़े सुखदायी कपड़े हैं ये!" सौ० यमुना महान् पतिव्रता एवं देशभक्त हिन्दू नारी थीं। उन्होंने पति–भक्त एवं देशभक्ति दोनों का ही जीवन का लक्ष्य बनाया हुआ था। जहां पति को कष्ट में देखकर

उन्हें भारी दुःख होता था, वहीं उनके मातृभूमि के लिए कष्ट सहन करने पर भारी गौरव का अनुभव होता था।

सावरकर ने अपनी तरुणा पत्नी को धीरज बंधाते हुए कहा—"चिंता न करो, यदि ईश्वर की कृपा हुई तो पुनः भेंट होगी ही, तब तक यदि सामान्य संसार का भय होने लग जाये तो ऐसा विचार करो कि बेटे—बेटियों की संख्या बढ़ाना तथा चार तिनके (लकड़िया) जमा करके घर बांधना ही यदि संसार कहलाता है तो ऐसा संसार तो कौवे, चिड़ियां भी बसाती रहती हैं। परन्तु यदि परिवार का महान् अर्थ 'मानव का परिवार' लेना हो तो उसे सजाने संवारने में तो हम पूर्ण सफल हुए हैं। माना कि अपना सुखी जीवन हमने अपने हाथों ही ध्वस्त कर डाला, किन्तु भविष्य में सहस्रों घरों में, परिवारों में सुख की वर्षा होगी। क्या तब हमें अपना बलिदान सार्थक न लगेगा? सुखी संसार की कल्पना करने वाले अनेक लोग प्लेग के शिकार बन जाते हैं, उनका घर बेचिराग हो जाता है। विवाह मंडप तक से पति—पत्नी को काल दबोचकर ले जाता है। अतः संकटों का सामना करना सीखो, धैर्य रखो।"

तरुण पत्नी ने अपनी वीर पति के मुख से उपर्युक्त वीरतापूर्ण शब्द सुने तो उसका हृदय गर्व से उछलने लगा। उसने लोहे के सीखचों में हाथ देकर अपने पूज्य पति के चरण स्पर्श किये। वीर पत्नी ने दृढ़ता से कहा—"आप चिंता न करें। मुझे क्या यह कम सुख है कि मेरा वीर पति मातृभूमि की सेवा के लिए कठोर साधना कर रहा है।"

पति—पत्नी की वह भेंट बड़ी रोमांचकारी थी। डोंगरी जेल से सावरकर जी को भायखला जेल ले जाया गया। भायखाला जेल में भी उनसे रस्सी कुटवाई जाती, परिश्रम करवाया जाता। जेल की दीवार पर पत्थर के नुकीले टुकड़े से उन्होंने कई कविताओं की रचना की। दीवार पर लिखी रचनाओं को उन्होंने भी कंठस्थ कर लिया। भायखला जेल से सावरकर जी को ठाणे के बंदीगृह में भेज दिया गया। ठाणे बंदीगृह के कष्टों का वर्णन सावरकर जी ने 'माझी जन्मठेप' पुस्तक में निम्न प्रकार किया है—

"ठाणे बंदीगृह में मुझे जिस कमरे में रखा गया था, उस पर दुष्टों में प्रख्यात पठान वार्डन रखे गये थे। एकदम एकांत। भोजन भी आया, कौर भी निगल न सका। बाजरे की बेकार रोटी, न मालूम कैसी खट्टी तरकारी! मुंह में रखना भी कठिन। रोटी का टुकड़ा काटा जाए, थोड़ा चबाया जाए, ऊपर घूँट—भर पानी पिया जाए और उसी के साथ कौर निगल लिया जाए। इस रीति से कुछ कौर निगल पाता।"

तीनों भाई जेल में

ठाणे के कारागृह में सावरकर जी यातनाएँ सहन कर रहे थे कि एक दिन वार्डन से गुप्त रूप से उन्हें समाचार मिला कि उनके छोटे भाई डा. नारायण दामोदर सावरकर भी इसी बंदीगृह की एक कोठरी में यातनाएँ सहन कर रहे हैं। २० वर्षीय डा. नारायण दामोदर सावरकर अहमदाबाद में लार्ड मिण्टो पर बम फेंकने के आरोप में गिरफ्तार किये गये थे। सावरकर जी के बड़े भाई गणेश दामोदर सावरकर पहले ही कालापानी भेजे जा चुके थे।

सावरकर जी ने वार्डन के हाथों अपने भाई डा. नारायण दामोदर सावरकर को एक पत्र लिखकर भिजवाया। पत्र में उन्होंने लिखा—"यदि आगामी पांच—सात वर्षों में मुझे अण्डमान में अपने कुटुम्बियों को लाने की अनुमति मिली तो मैं उन्हें अपने साथ लेकर अपना जीवन साधना में व्यतीत करूंगा। और यदि मैं पुण्य भू भारत के किनारे पर कदम रख सका तो भी मैं जिस काव्य की रचना कर रहा हूं, उस महाकाव्य को जैसे "ततः प्राचेतसः शिष्यतै रामायणमित—स्ततः मैथिलेयौ कुशलवौ जगतुर्गसचोदितौ" की तरह ही कंठस्थ कराकर देशभर में प्रख्यात कराऊंगा। किसी एक जीवन की सफलता सम्पादन करने में यह एक ही कार्य समर्थ होगा। इस योजना को साकार देखने की लालसा से ही मैं अण्डमान में २५ वर्ष जिन्दा रहूंगा। किन्तु यदि मुझे एक जन्म का कारावास काट लेने पर भी मुक्त नहीं किया गया तो मुक्ति या मृत्यु यही परिणाम होगा। "तू मेरे बारे में चिंता बिल्कुल न कर, न मन को खिन्न बना। वाष्पयंत्र को प्रेरणा देने के लिए अपने देह का ईंधन बनाकर यदि किसी को जलते सुलगते रहना है तो वह स्थान हम ही क्यों न लें? जलते रहना भी तो एक कर्म है। इतना ही नहीं यह एक महान् कर्म है।" श्री नारायण सावरकर ने अपने बड़े भाई के कर कमलों द्वारा लिखित पत्र पढ़ा तो उनके हृदय में धैर्य व साहस की भावना दौड़ गयी।

द्वितीय परिच्छेद

आखिर एक दिन 'महाराजा' नामक जलयान से वीर सावरकर अण्डमान (कालापानी) भेज दिये गये। ४ जुलाई सन् १९११ को वे अण्डमान पहुंच गये। पोर्ट ब्लेयर की काल—कोठरी नंबर १२३ में उन्हें रखा गया। अण्डमान में बंगकेसरी क्रांतिवीर श्री आशुतोष लाहिड़ी, भाई हृदयरामसिंह, देवतास्वरूप भाई परमानंद, पं. परमानंद झाँसी आदि अनेक देशभक्तों को वीर सावरकर के साथ रहने का अवसर मिला। अण्डमान में वीर सावरकर, देवतास्वरूप भाई परमानंद एवं अन्य क्रांतिकारियों ने जो अमानवीय यातनाएँ सहन कीं, उन्हें लिखते हुए लेखनी कांप उठती है। इन महान् क्रांतिवीरों ने मातृभूमि की स्वाधीनता के लिए क्या—क्या कष्ट न सहे? वीर सावरकर ने अण्डमान की नारकीय यातनाओं का बड़ा ही रोमांचकारी वर्णन 'मेरा आजीवन कारावास' नामक अपनी आत्मकथा में किया है। उन्होंने लिखा है—

"अण्डमान में राजबंदियों को अलग—अलग तन्हाई (एकांत) कोठरियों में रखा गया था। यदि वे परस्पर बोलने का प्रयास करते तो उन्हें हथकड़ियां व बेड़ियां डाल दी जातीं। स्नान आदि के हौद पर अथवा भोजन करते समय, यदि केवल एक इशारे से भी कोई बातचीत का प्रयास करता तो उसे सात—सात दिन तक बेड़ियां—दण्डी पहनाकर खड़ा रहने का दंड दिया जाता।"

कोल्हू चलाने का वर्णन

वीर सावरकर ने अपनी कारावास कहानी में अण्डमान की यातनाओं पर प्रकाश डालते हुए कोल्हू में बैल की तरह जुत कर तेल पेरने का बड़ा ही सजीव वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है—

"हमें तेल का कोल्हू चलाने का काम सौंपा गया, जो बैल के ही योग्य माना जाता है। जेल में सबसे कठिन काम कोल्हू चलाना ही था। सवेरे उठते ही लंगोटी पहनकर कमरे में बंद होना तथा सायं तक कोल्हू का डण्डा हाथ से घुमाते रहना। कोल्हू में नारियल की गरी के पड़ते ही वह इतना भारी चलने

लग जाता कि हृदय–पुष्ट शरीर के व्यक्ति भी उसकी बीस फेरियां करते रोने लग जाते। राजनीतिक कैदियों का स्वास्थ्य खराब हो या भला, ये सब सख्त काम उन्हें दिये ही जाते थे। चिकित्सा शास्त्र भी इस प्रकार साम्राज्यवादियों के हाथ की कठपुतली हो गया। सवेरे दस बजे तक लगातार चक्कर लगाने से श्वास भारी हो जाती और प्रायः सभी को चक्कर आ जाता या कोई–कोई बेहोश हो जाते। दोपहर का भोजन आते ही दरवाजा खुल पड़ता, बंदी थाली भर लेता और अंदर जाता कि दरवाजा बंद। "यदि इस बीच कोई अभागा कैदी यह चेष्टा करता कि हाथ–पैर धोले या बदन पर थोडी धूप लगा ले तो नम्बरदार का पारा चढ़ जाता था। वह माँ–बहन की सैकड़ों गालियां देनी शुरू कर देता था। हाथ धोने को पानी नहीं मिलता था, पीने के पानी के लिए तो नम्बरदार के सैकड़ों निहोर करने पड़ते थे। कोल्हू को चलाते–चलाते पसीने से तर हो जाते, प्यास लग जाती। पानी मांगते तो पानी वाला पानी नहीं देता था। यदि कहीं से उसे एकाध चुटकी तंबाकू की दे दी तो अच्छी बात होती, नहीं तो उल्टी शिकायत होती कि ये पानी बेकार बहाते हैं जो जेल में एक बड़ा भारी जुर्म था। यदि किसी ने जमादार से शिकायत की तो वह गुस्से में कह उठता– "दो कटोरी पानी देने का हुक्म है, तुम तो तीन पी गया। और पानी क्या तुम्हारे बाप के यहां से आएगा?" नहाने की तो कल्पना करना ही अपराध था। हां, वर्षा हो तो भले ही नहा लें।

"केवल पानी ही नहीं अपितु भोजन की भी वही स्थिति थी। खाना देकर जमादार कोठरी बंद कर देता और कुछ ही देर में हल्ला करने लगता– "बैठो मत, शाम को तेल पूरा हो, नहीं तो पीटे जाओगे। और जो सजा मिलेगी सो अलग।" ऐसे वातावरण में बंदियों को खाना निगलना भी कठिन हो जाता। बहुत से ऐसा करते कि मुंह में कौर रख लिया और कोल्हू चलाने लगे। कोल्हू पेरते–पेरते, थालियों में पसीना टपकाते–टपकाते, कौर को उठाकर मुंह में भरकर निगलते कोल्हू पेरते रहते।

"सौ में से एकाध ऐसे थे जो दिन–भर कोल्हू में जुतकर तीस पौण्ड तेल निकाल पाते। जो कोल्हू चलाते–चलाते थककर हाय–हाय कर देते उन पर जमादार और वार्डन की मार पड़ती। तेल पूरा न होने पर ऊपर से थप्पड़ पड़ रहे हैं, लाठियां खा रहे हैं, आंखों से आंसुओं की धारा बह रही है।"

ज्वर में भी कोल्हू

सावरकर जी ने अण्डमान में अंग्रेज नर पिशाचों द्वारा क्रांतिवीरों पर किये गये अमानवीय अत्याचारों का आगे वर्णन करते हुए लिखा–"छात्र तथा अध्यापक श्रेणी के राजनीतिक कैदियों को भी कोल्हू पेरने को मिला तो वे बीमार हो गये। किन्तु अण्डमान की जेल में १०२ डिग्री से कम बुखार ज्वर नहीं माना जाता था। उसे न अस्पताल भेजा जाता और न ही काम से छुट्टी मिल पाती। जिस बदकिस्मत को बुखार, दस्त न होकर सिर दर्द, हृदय रोग या ऐसा कोई अप्रत्यक्ष रोग होता, उसकी तो शामत आ जाती। सिर दर्द एवं हृदय रोग आदि की शिकायत करने वाले बंदी को तुरन्त ढोंगी या बहाने बाज की पदवी दे दी जाती।

"मेरे भाई गणेश सावरकर को बचपन से ही आधे सिर दर्द की बीमारी थी। कोल्हू में जुतने एवं कष्ट सहने से उनकी बीमारी बढ़ गयी। सुबह उठकर उन्हें कोल्हू में जोता जाता, जैसे–जैसे दिन चढ़ता उनका सिर दर्द भी बढ़ता जाता। वेदनाएं फूट निकलतीं। गरमी असहय हो उठती। जैसे–जैसे दिन चढ़ता, मस्तक–शूल तीव्रतर बन जाता। उधार जमादार बुरी तरह धमका देता– "यह मेरा प्रश्न नहीं है, डाक्टर से पूछो।" डाक्टर से कहा गया तो उसने तापमान देखकर कह दिया–"कोई भी बीमारी नहीं है, बदमाशी व ढोंग है।" "एक बार डाक्टर ने गणेश पंत की असहय वेदनाएं देखीं तो उन्हें दो दिन के लिए अस्पताल भेजने का हुक्म दे दिया। गणेश पंत बिछौना उठाकर अस्पताल वार्ड की ओर चलने लगे तो इतने में ही अंग्रेज अधिकारी बारी वहां आ गया और लाठी पटक कर चिंघाडता हुआ बोला– "ऐ बम्बगोले वाला! किधर जाता है?" साथ के जमादार ने कहा– "डाक्टर के आदेश से बीमार होने के कारण इन्हें अस्पताल वार्ड ले जा रहा हूं।" तो यह सुनते ही बारी ने गरजते हुए कहा–" वह साला डाक्टर हुक्म देने वाला कौन होता है? ले जाओ इसे और कोल्हू में जुतवा दो।" श्री गणेश सावरकर को फिर कोठरी में बंद करके कोल्हू में लगवा दिया गया।

उस अधसिर का असहय शूल सहन करते हुए, दिन भर कोल्हू चलाते हुए, शाम के समय मेरे ज्येष्ठ बंधु (गणेश सावरकर) तेल नापकर, आह खींचकर, उस लकड़ी पर शरीर लिटा देते तो सारा शरीर वेदनाओं से भर जाया करता। आंखे झपक ही नहीं पाती थीं कि पुनः सवेरा हो जाता और पुनः कोठरी में कोल्हू में लग जाना पड़ता।"

मल-मूत्र विसर्जन पर भी रोक

वीर सावरकर जी ने अण्डमान में अंग्रेज साम्राज्यवादियों के अमानवीय अत्याचारों का भण्डाफोड़ करते हुए बड़े ही पैशाचिक कार्य का वर्णन किया है। वह लिखते हैं– "कष्टों का कितना वर्णन किया जाए! मगर केवल एक उदाहरण से कुछ कल्पना करना संभव समझ कर ही यह घटना लिख रहा हूं। अण्डमान में बंदी के लिए काम करना, कोल्हू में जुतना, मारपीट सहन करना, ये सब कष्ट तो थे ही, किन्तु एक और भयंकर तकलीफ थी, जिसको कहते संकोच होती है। वह थी मल–मूत्र पर भी रोक–टोक। सुबह–शाम व दोपहर को छोड़कर अन्य समय शौच जाना भी अपराध माना जाता था। इस कोठरी में एक रात को ही कैदी रहता था तथा पेशाब करने के लिए एक मटका कोठरी में रखा रहता। रात के १२ घण्टों में कोई शौच न कर पाता था। यदि किसी को शौच लगता तो उसे डाक्टर से कहकर बारी से आज्ञा लेना पड़ती थी। दूसरे दिन बारी उससे कहता–"साला, तुम्हें रात को ही टट्टी लगता है?" इस त्रस्त परिस्थिति में कुछ बंदी मलावरोध करना अशक्य होने से उसी कोठरी में जमीन पर शौच कर लेते। उस आठ–दस फुट के कमरे में रातभर उसी मल को सिरहाने रखे, सवेरे भंगी के अंदर आते ही तम्बाकू का लालच देकर मल को उठवाने की विनती करते। यदि भंगी बात न मानकर जमादार से कह देता तो जमादार उस बंदी को ठोकरे लगाता हुआ बारी के पास ले जाता। बारी उसे कमरा गंदा करने के आरोप में तीन–चार दिन–दिन–भर खड़े रहने की सजा देता। सवेरे छह से दस और दोपहर को बारह से पांच तक हथकड़ी में खड़ा होना पड़ता। उस समय तक शौच तो दूर पेशाब तक करना मना था।"

महान देशभक्त वीर सावरकर

देशभक्त क्रान्तिकारियों द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए **अंग्रेजों के विरुद्ध १८५७ में जो सशस्त्र क्रान्ति की गई थी उसे अंग्रेजों ने गदर बता कर देशभक्त भारतीयों को भ्रमित करने की जो कुचेष्टा की थी उसी भ्रम को तोड़ने के लिए वीर विनायक दामोदर सावरकर ने** ब्रिटेन में बैठकर **'१८५७ का स्वतन्त्रता संग्राम'** नाम का **क्रान्तिग्रन्थ लिखा** जिससे डरे हुए **अंग्रेजों ने छपने से**

पहले ही उस पर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

वीर सावरकर ने **यह ग्रन्थ १९०७ में लिखा था।** इसका अंग्रेजी अनुवाद हालैंड में छपा, वहाँ से फ्रांस और भारत में भेजा गया। **क्रान्तिकारियों ने इसे गीता की तरह पढ़ा।**

इसका **दूसरा संस्करण भीखाजी कामा, लाला हरदयाल आदि क्रान्तिवीरों ने छपवाया। तीसरा संस्करण सरदार भगत सिंह ने गुप्त रूप से छपवाया। यह ग्रन्थ इतना लोकप्रिय था कि इसकी एक-एक प्रति उस समय तीन-तीन सौ रुपये में बिकी।** वीर सावरकर ने अपनी देशभक्ति, धैर्य, अदम्य साहस, त्याग, उच्चतम मनोबल से यह सिद्ध कर दिया कि अपनी मातृभूमि–पितृभूमि और पुण्य–भूमि की स्वतन्त्रता के लिए पत्नी–पुत्र, परिवार का सुख, मान–सम्मान, बड़ा पद, नौकरी और निजी सुखों को हँसते–हँसते त्याग किया जा सकता है। **अग्निपथ पर आगे बढ़ने वाले महान देशभक्त वीर सावरकर को पहले अंग्रेजी सरकार ने, फिर नेहरू की**

साभार-शुद्धि समाचार

कांग्रेस सरकार ने जेलों में बन्द करके जो कठोरतम दुःख दिए, यह वीर आखिरी सांस तक उन दुःखों से विचलित नहीं हुआ।

महाराष्ट्र में नासिक जिले के भगूर नामक ग्राम में दामोदर सावरकर और राधाबाई के घर २८ मई १८८३ में वीर विनायक दामोदर सावरकर का जन्म हुआ। १९०१में जब वह मैट्रिक में पढ़ रहे थे तो **२२ जनवरी, १९०१ में ब्रिटेन की रानी विक्टोरिया की मृत्यु होने पर भारतवर्ष में होने वाली शोक सभाओं का विरोध करते हुए उन्होंने कहा था कि शत्रु देश की रानी का शोक हम क्यों मनाएं?** २२ अगस्त, १९०६ में सबसे पहले वीर सावरकर ने विदेशी वस्त्रों की होली जलाई थी। उस कार्यक्रम की अध्यक्षता लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने की थी। परिणामतः उन्हें पूना कॉलेज से निकाल दिया और दस रुपये का जुर्माना लगाया गया। कॉलेज अधिकारियों की लोकमान्य तिलक ने 'केसरी' के माध्यम से निन्दा की थी। फिर बम्बई विश्वविद्यालय से बी.ए. पास किया। एडवर्ड के राज्यारोहण में भारत में होने वाले उत्सवों का विरोध करते हुए कहा था कि दासता का उत्सव क्यों मना रहे हो? **६ जून, १९०६ को छात्रवृत्ति लेकर बैरिस्टरी का अध्ययन करने ब्रिटेन में समुद्र मार्ग से गए।**

बन्दी जीवन–१३ मार्च, १९१० को लन्दन में विक्टोरिया स्टेशन पर वीर सावरकर को बन्दी बना लिया गया। **उनके बड़े भाई गणेश सावरकर को १९०८ में देशभक्ति की कविता लिखने के कारण ६ जून १९०६ को आजीवन कारावास की सजा देकर कालापानी भेजा गया। छोटे भाई नारायण सावरकर को क्रान्तिकारियों का साथी बताकर जेल में बन्द कर दिया।** जब इस घटना का वीर सावरकर को पता लगा तब गर्व से बोले **"इससे बड़ी गौरव की क्या बात होगी कि हम तीनों भाई भारत माता की आजादी के लिए तत्पर हैं।"**

समुद्र तरणम्–१ जुलाई, १९१० को ब्रिटेन से भारत लाने के लिए वीर सावरकर को समुद्री जहाज से कठोर पहरे के बीच अंग्रेज पुलिस लेकर चल पड़ी। **८ जुलाई १९१० को वीर सावरकर स्वतन्त्र भारत की जय बोलकर समुद्र में कूद पड़े।** अंग्रेजों ने खूब गोलियाँ चलाईं पर निर्भय सावरकर फ्रांस की सीमा पर पहुँच गए। फ्रांस की भूमि से सावरकर को गिरफ्तार किया तो इसका विरोध हुआ तथा अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय हेग में केस चला पर फ्रांस और ब्रिटेन की मिलीभगत के कारण उनको न्याय नहीं मिला। **३० जनवरी, १९११ में वीर जी को दो आजन्म कारावास की सजा सुनाई तब वे हँस कर बोले–चलो ईसाई सत्ता ने हिन्दू धर्म के पुनर्जन्म सिद्धान्त को मान लिया।**

काला पानी की सजा–देशभक्त क्रान्तिकारियों को काले पानी की सजा सब से भयानक मानी जाती थी क्योंकि वहाँ से जीवित लौटने की आशा नहीं रहती थी। यमलोक जैसा भयानक सैल्यूलर जेल में ७ खंड थे। **दूसरी मंजिल की २३४ नं. कोठरी में सोने और खड़े होने पर दीवार छू जाती थी।** वीर सावरकर को नारियल की रस्सी बनाने और ३० पौंड तेल निकालने के लिए बैल की तरह कोल्हू में जोता जाता था। इतना शारीरिक कष्ट भोगने के बाद भी रात को दीवारोंपर कविता लिखते, याद करते और मिटा देते। **ऐसा कष्टसहिष्णु और साहित्यकार कैदी इस संसार में वीर सावरकर के अलावा न कोई हुआ, न शायद होगा।** १३ मार्च, १९१० से लेकर २७ वर्षों से अधिक (संसार में संविधान राजनीतिक बन्दी) समय तक विभिन्न जेलों में असामान्य पीड़ा भोगकर **१० मई, १९३७ में उच्च मनोबल, ज्ञान और शक्ति से भरपूर इच्छाशक्ति के धनी वीर सावरकर अंग्रेजी**

जेल से ऐसे बाहर निकले जैसे लम्बी रात का अंधेरा चीर कर सूर्य बाहर आ रहा हो। १८५७ की क्रान्ति भी १० मई को ही शुरू हुई थी। वीर सावरकर से अंग्रेजी सत्ता इतनी भयभीत थी कि अंडमान से रत्नागिरि क्षेत्र से बाहर नहीं जाने दिया। रत्नागिरि जेल में वीर जी १३ साल तक रहे और साहित्य रचना, शुद्धि आन्दोलन, अस्पृश्यता –निवारण, हिन्दी भाषा शुद्धि कार्य, संस्कृत पढ़ने की प्रेरणा आदि अनेकों कार्य किए।

शेष पृष्ठ 7 का सावरकर के .....

केवल इस बात का चिन्तन करता रहे कि मैं ''अकेला भी रहूँगा तो भी हिन्दू राष्ट्र हेतु सक्रिय और सचेष्ट रहूँगा।''

वरं जनहितं ध्येयम्, केवला न जनस्तुतिः

''सामान्यतः जनता की स्तुति और जनता का हित इन दोनों को एक साध्य करने वाले मनुष्यों का जीवन सफल माना जाता है। लेकिन मैं ध्येय वाक्त हूँ वरं जनहितं ध्येयम् केवला न स्तुतिः (अर्थात केवल जन स्तुति करना मैं उचित नहीं समझता। मेरा उद्देश्य है कि जन–हित का साधन करना मैं जानता हूँ कि क्रोधी शंकर भी स्तुति के वश में हो जाते हैं। फिर जनसाधारण की क्या स्थिति होती होगी यह समझना कोई कठिन बात नहीं है। फिर भी मेरी यह दृढ़ धारणा है कि **जनता की स्तुति करने की अपेक्षा जनता का हित ही अधिक महत्त्व की बात है। प्रत्येक देशभक्त को चाहिए कि इस सत्य को सर्वप्रथम पहचाने।''**

किसान और मजदूर

''किसान और श्रमिक वर्ग हमारी शक्ति का, राष्ट्रीय सम्पत्ति का तथा हमारे राष्ट्रीय स्वास्थ्य का आधार है। कारण यह है कि देश को निरोगिता और धन प्रदान करने वाले वर्ग हैं किसान और श्रमिक। उनके बल पर ही सेना में युवकों की भरती होती है। ग्रामों की स्थिति इसलिए सर्वप्रथम सुधारनी होगी। उन्हें जीवनोपयोगी वस्तुएँ दिलाने के लिए समुचित साधन जुटाने होंगे। **कृषक और श्रमिक आधुनिक सुविधाओं का लाभ तभी उठा सकते हैं, जब उनकी आर्थिक क्षमता कायम रहेगी।** इसी हेतु राष्ट्रीय सम्पत्ति में उनका हिस्सा आवश्यक मात्रा में कायम करने की व्यवस्था करनी ही होगी। साथ ही **किसानों और मजदूरों को भी यह समझना होगा कि वे राष्ट्र के ही अंग-प्रत्यंग हैं। अर्थात् कर्तव्य और उत्तरदायित्व का बोझ उन्हें भी उठाना होगा।''**

हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्थान—वीर सावरकर का सारा जीवन हिन्दुत्व को समर्पित था। अपनी पुस्तक 'हिन्दुत्व' में हिन्दू कौन है? इसकी परिभाषा में यह श्लोक लिखा था—

आसिन्धु सिन्धुपर्यन्तायस्य भारतभूमिका!
पितृभूः पुण्यभूश्चैव स वै हिन्दुरिस्मृतः!!

अर्थात भारत भूमि के तीनों ओर के सिन्धुओं (**समुद्रों**) से लेकर हिमालय के शिखर से जहाँ से सिन्धु नदी निकलती है वहाँ तक की भूमि जिसकी पितृ (**पूर्वजों**) भूमि है यानी जिनके पूर्वज भी इसी भूमि में पैदा हुए और **जिसकी पुण्य भूमि यानी तीर्थ स्थान इसी भूमि में है, वही हिन्दू होता है।**

धर्मान्तरण-राष्ट्रान्तरण—वीर सावरकर कहते थे कि यदि कोई हिन्दू धर्म बदलकर मुस्लिम या ईसाई बनेगा तो उसकी तीर्थ भूमि दूसरे देश हो जाएँगे। उसकी धार्मिक आस्था, इस राष्ट्र से हटकर दूसरे राष्ट्र के लिए होगी। अर्थात रहेगा तो इसी देश में पर विचार बदल जाएगा इसलिए **वे धर्मान्तरण को राष्ट्रान्तरण कहते थे। उन्होंने हिन्दू का सैनिकीकरण और राजनीति के हिन्दूकरण पर जोर देते हुए कहा था कि प्रत्येक हिन्दू को सैनिक बनाओ और राजनीति हिन्दुत्व को केन्द्र बिन्दु बनाकर लागू करो। अर्थात् जैसे मुस्लिम और ईसाई देशों की राजनीति मुस्लिम और ईसाई हितों की सुरक्षा के लिए होती है तो भारत में ऐसा क्यों नहीं हो सकता?**

वीर सावरकर धर्मान्तरितों का शुद्धिकरण करके पुनः हिन्दू बनाने के प्रबल पक्षधर थे। **कई बार हिन्दू महासभा के अध्यक्ष भी रहे तथा उन्होंने हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्थान तीनों को सशक्त बनाने पर जोर दिया।**

सावरकर अद्वितीय थे...

- आप ऐसे प्रथम राजनैतिक बन्दी थे जिन्हें दो आजीवन कारावास (५० वर्ष) की सजा एक साथ दी गई पर ये मृत्युंजयी होकर निकले।
- आप ऐसे प्रथम व्यक्ति थे जिनकी स्नातक डिग्री भी राजनैतिक कारण से बम्बई विश्वविद्यालय ने निरस्त कर दी।
- आप विश्व के ऐसे प्रथम एवं अकेले कवि हुए हैं जिन्होंने बिना कागज कलम के जेल की दीवारों पर पत्थर या कांटे से लिख–लिख कर महाकाव्यों की रचना की एवं जेल से छूटने वाले कैदियों को पद्य याद करा–करा कर उनका प्रकाशन भारत में करवाया। ऐसी अद्भुत रचना एवं योजकर्ता और कहां मिलेगी?
- आप विश्व के ऐसे अकेले साहसी व्यक्ति थे जिन्होंने स्वयं–एकान्त कोठरी' में बन्द रहते हुए भी स्वधर्म पर आघात होते हुए देखकर अण्डमान जैसी दुर्दान्त जेल में हिन्दुओं पर अत्याचार से किया जाने वाला धर्मान्तरण न केवल भविष्य के लिये रुकवाया बल्कि पिछले १५–२० वर्ष से भी धर्मान्तरित व्यक्तियों को स्वधर्म में लैटाया एवं सहधर्मियों से स्वीकृति भी दिलवाई, साथ–साथ खान–पान भी चालू कराया। उस कालखण्ड में ऐसी घटना खोजने से भी नहीं मिल सकती।
- अण्डमान द्वीप को हिन्दू संस्कृति एवं आज के भारतीय प्रशासन के साथ बने रहने का प्रथम श्रेय आपको ही जाएगा। यदि –परावर्तन' द्वारा सावरकर जी इस द्वीप को हिन्दू–बहुल नहीं बनाये रखते तो विभाजन की मांग के समय इसकी भी स्थिति भिन्न होती।
- आप पहले राजनेता थे जिन्होंने यह स्पष्ट उद्घोष किया कि 'हिन्दुत्व ही राष्ट्रीयत्व' है और 'धर्मान्तरण ही राष्ट्रांतरण' है।
- आप ही पहले नेता थे जिन्होंने यह उद्घोष किया कि हिन्दू स्वतः एक राष्ट्र है और उन्हें सूर्य रश्मियों के तले अपना स्थान बनाने का प्रकृति प्रदत्त अधिकार है।
- आप ही एकमात्र नेता थे जिन्होंने स्पष्ट रूप से 'राजनीति के हिन्दूकरण' और 'हिन्दुओं के सैनिकीकरण' का मंत्र दिया।

वीर सावरकर ने भारत विभाजन का अंतिम समय तक विरोध किया था

✍ शिवकुमार गोयल

कुछ वामपंथी इतिहासकार तथा सेकुलरवादी नेता मि. जिन्ना तथा मुस्लिम लीग की जगह वीर सावरकर तथा हिन्दूवादी नेताओं पर द्विराष्ट्र का प्रश्न उठाकर भारत विभाजन का समर्थन करने का आरोप लगाते रहते हैं। कांग्रेस के नेता दिग्विजय सिंह ने भी कई बार निराधार आरोप लगाया कि वीर सावरकर ने भारत विभाजन का समर्थन किया था। जबकि इतिहास में ऐसे तथ्य मिलते हैं कि वीर सावरकर ने न केवल शुरू से अंत तक भारत विभाजन का पग–पग पर डटकर, विरोध किया अपितु जीवन के अंतिम श्वांस तक वे भारत को पुनः अखण्ड देखने का सपना मन में संजोए रहे।

मुस्लिम लीग की कुटिल योजना

२४ मार्च १६४० को मुस्लिम राज **'पाकिस्तान'** बनाए जाने की मांग का प्रस्ताव पेश किया। प्रस्ताव में कहा गया –**'हिन्दू और मुसलमान अलग-अलग कौम है। दोनों के बीच कोई समानता नहीं है।'**

मि. जिन्ना ने कहा– **'हिन्दू और मुसलमान कभी एक संयुक्त राष्ट्र के रूप में रह सकते हैं यह एक कोरा स्वप्न है। राष्ट्र की किसी भी परिभाषा के अनुसार मुसलमान एक राष्ट्र है अतः उनका अपना राज्य होना चाहिए।'** (सी. एच. फिलिप्स लिखित 'दि इवोल्यूशन ऑफ इंडिया एण्ड पाकिस्तान' पृष्ठ २५३–५४)।

मुस्लिम लीग की भारत विभाजन की मांग का कड़े शब्दों में विरोध करते हुए वीर सावरकर ने १ दिसम्बर १६४० को हिन्दू महासभा के एक अधिवेशन में कहा–

'मुस्लिम लीग का भारत विभाजन का प्रस्ताव हमारी मातृभूमि के टुकड़े–टुकड़े करने, उसे खण्डित करने की कुटिल योजना का अंग है। कांग्रेस सहित सभी राष्ट्रवादी दलों को भारत को खण्डित करने की इस मनोवृत्ति को मिलकर असफल करना चाहिए।'

अगले वर्ष अप्रैल, १६४१ में मुस्लिम लीग के मद्रास अधिवेशन में भी मि. जिन्ना ने धमकी देते हुए कहा– 'यदि ब्रिटिश सरकार मुस्लिम लीग की 'पाकिस्तान' की मांग को अस्वीकार करती है तो वह बाहरी सहायता (उनका संकेत पेन इस्लामिक गठबंधन के देशों से था) से पाकिस्तान के निर्माण में संकोच नहीं करेंगे।' सावरकर जी का करारा उत्तर मि. जिन्ना की इस धमकी पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए वीर सावरकर ने कहा–'पैन इस्लामिक गठबन्धन का मुकाबला हिन्दू–बौद्ध गठबंधन से किया जाएगा जो जम्मू से जापान तक फैला हुआ है।' उन्होंने जिन्ना को चेतावनी देते हुए कहा 'हिन्दुस्थान ने शक हूण, आदि विदेशियों के आक्रमण देखे हैं तथा उन्हें परास्त किया है। मि. जिन्ना विदेशी सहायता से हमारे राष्ट्र को खण्डित करने का सपना कदापि न देखें।'

वीर सावरकर अपने भाषणों में खुलकर भारत विभाजन की योजना को राष्ट्रघाती बताकर उसका कड़ा विरोध करते थे जबकि मि. जिन्ना अपने भाषणों में जहर उगलते हुए कहते थे कि मुसलमान अल्पसंख्यक नहीं वरन एक राष्ट्र हैं, और उनका अपना अलग राज्य होना चाहिए।

देश के वे क्षेत्र, जहां मुसलमानों की संख्या अधिक है जैसे भारत के पश्चिमोत्तर व पूर्वी इलाके, इन्हें मिलाकर स्वतंत्र व सार्वभौम राज्य बना देना चाहिए। हम दस करोड़ मुसलमान एक राष्ट्र हैं जिनके पास उनकी स्वयं की संस्कृति व सभ्यता है। भाषा है, स्त्री–पुरुषों के विशेष पहनावे हैं। एक ही साहित्य व एक ही विचार हैं। नियम एवं आचार–विचार में सामंजस्य है। एक ही इतिहास व परम्परा है।'

(सी. एच. फिलिप्स लिखित दि इवोल्यूशन ऑफ इंडिया एण्ड पाकिस्तान पृष्ठ २५४)

श्री सावरकर ने भाषणों व वक्तव्यों के माध्यमों से घोषणा की कि भारत सदैव से एक राष्ट्र रहा है। अनेक ऐसे देश हैं जहां अनेक जातियां, विभिन्न मत–पंथों के अनुयाई रहते हैं किन्तु उस देश की राष्ट्रीयता को चुनौती नहीं दी जा सकती।

लार्ड क्रिप्स को जवाब

मार्च १६४२ में क्रिप्स मिशन भारत आया। वीर सावरकर के नेतृत्व में डॉ. मुंजे, डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी, ला. गणपतराय तथा ज्वालाप्रसाद श्रीवास्तव ने लार्ड क्रिप्स से भेंटकर स्पष्ट कहा 'आत्मनिर्णय की आड़ में भारत का विभाजन किसी भी हालत में स्वीकार नहीं किया जा सकता।' क्रिप्स के मुंह से निकला। 'भारत कभी एकीकृत राज्य नहीं रहा।

मुस्लिम लीग की भारत विभाजन की मांग का कड़े शब्दों में विरोध करते हुए वीर सावरकर ने १ दिसम्बर १९४० को हिन्दू महासभा के एक अधिवेशन में कहा- 'मुस्लिम लीग का भारत विभाजन का प्रस्ताव हमारी मातृभूमि के टुकड़े-टुकड़े करने, उसे खण्डित करने की कुटिल योजना का अंग है। कांग्रेस सहित सभी राष्ट्रवादी दलों को भारत को खण्डित करने की इस मनोवृत्ति को मिलकर असफल करना चाहिए।'

सावरकर जी ने कहा 'हमारी पवित्र मातृभूमि हिन्दुस्थान सांस्कृतिक व राष्ट्रीय दृष्टिकोण से अविभाज्य इकाई है। मैं समयाभाव के कारण इतिहास व भौगोलिक तथ्य प्रस्तुत नहीं कर रहा किन्तु हमारे पास ऐसे तमाम तथ्य हैं जो आपके कथन को असत्य सिद्ध कर सकते हैं।'

लुई फिशर निरूत्तरित हो गए।

जून १९४२ में अमरीकी पत्रकार व लेखक लुई फिशर भारत आए। वे मुस्लिम लीग की भारत विभाजन की मांग के संबन्ध में राजनेताओं के विचार जानना चाहते थे। उन्होंने पहले जिन्ना से भेंट की। अगले दिन वीर सावरकर से भेंट करने पहुंचे। लुई फिशर ने सावरकर जी से प्रश्न किया **'जब मुस्लिम लीग पाकिस्तान की मांग कर रही है तो आप भारत विभाजन को स्वीकार क्यों नहीं कर लेते?'** सावरकर जी ने फिशर से प्रतिप्रश्न किया **'नीग्रो अमरीका में 'नीग्रोलैण्ड की मांग करते आ रहे हैं, आप 'नीग्रोलैण्ड' की मांग क्यों नहीं मान लेते?'** फिशर ने उस मांग को राष्ट्रविरोधी बताया।

सावरकर जी ने कहा, 'ठीक उसी प्रकार पाकिस्तान की मांग को स्वीकार करना राष्ट्रविरोधी व अप्रजातांत्रिक मानते हैं हम।'

लुई फिशर ने कालान्तर में एक लेख में लिखा– **'सावरकर के ह्रदय में मैंने जहां राष्ट्रभक्ति की असीमित भावना पाई वहीं जिन्ना के ह्रदय में भारत व भारतीय संस्कृति के प्रति घोर घृणा के बीज दिखाई दिए।'**

गांधी जी को पत्र लिखा

श्री सावरकर अपने स्तर पर भारत विभाजन के विरोध में राष्ट्रीय जागरण के कार्य में लगे रहे। कांग्रेस के नेता सी. राजगोपालाचारी जिन्ना से पत्र व्यवहार करते रहे। अन्दर ही अन्दर कांग्रेस भारत विभाजन की भूमिका बनाने में लगी रही। जब गांधी जी ने सितम्बर (१९४४) में जिन्ना से भेंट करने जाने का कार्यक्रम बनाया तो सावरकर जी को लगा कि इससे मि. जिन्ना को दुस्साहस बढ़ेगा तथा गांधी जी से सौदेबाजी करेगा। सावरकर जी ने डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी को गांधी जी के पास पत्र लेकर भेजा। डॉ. मुखर्जी ने गांधीजी से कहा– 'आप मि. जिन्ना के पास जाकर उसका भाव न बढ़ाएं।

किन्तु गांधी जी तो हिन्दू–मुस्लिम भाईचारे की मृगमारीचिका में फंसे हुए थे। उन्होंने मुखर्जी के सुझाव को अनदेखा कर जिन्ना से भेंट की। मि. जिन्ना का अहंकार इतना चरमोत्कर्ष पर पहुंच गया कि उसने गांधी जी व कांग्रेस की योजना को 'अंगहीन, कीड़े लगा तथा दीमक खाया पाकिस्तान' कहकर अस्वीकार कर दिया। सावरकर जी ने चेतावनी देते हुए कहा 'जिस कांग्रेस का जन्म भारतीय राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने के लिए हुआ था, वह अपने लक्ष्य से पीछे हट गई है। वह मिथ्या व नकली राष्ट्रीयता का शिकार बनकर मातृभूमि को विभाजित करने को तैयार हो गइ है।' (धनंजयकीर की पुस्तक 'सावरकर एण्ड हिज टाइम्स')

अखण्ड हिन्दुस्थान सम्मेलन

सावरकर जी ने भारत विभाजन के विरोध में ७ और ८ अक्टूबर १९४४ को दिल्ली में हिन्दू महासभा भवन में अखण्ड हिन्दुस्थान सम्मेलन करने का कार्यक्रम बनाया। सम्मेलन के विषय में प्रसारित विज्ञप्ति में उन्होंने कहा–

'जिन्ना पहले की अपेक्षा अधिक दृढ़ता से देश के विभाजन की मांग कर रहे हैं। गांधी जी इस असहनीय मांग को स्वीकार करने के लिए तैयार होते दिखाई दे रहे हैं। मुंसलमान सार्वजनिक रूप से घोषणा कर रहे हैं कि उन्हें तथाकथित भारत राष्ट्र से कोई सरोकार नहीं है। उनका स्वयं का अपना राष्ट्र है तथा वे अधिक से अधिक प्रान्तों का विभाजन चाहते हैं।' डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी की अध्यक्षता में ७ एवं ८ अक्टूबर को अखण्ड हिन्दुस्थान सम्मेलन हुआ। इसमें पुरी के शंकराचार्य, भरतपुर के राजा, जमनादास मेहता, मास्टर तारा सिंह, एन. सी. केलकर, डॉ. गोकुलचन्द्र नारंग, श्री भोपटकर, डॉ. मुंजे, वंचित वर्ग के नेता वी. पी. मंडल, श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार (सम्पादक कल्याण) आदि के साथ –साथ तीन सौ से ज्यादा प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सभी ने अपने भाषणों में कांग्रेस द्वारा मुस्लिम लीग के समक्ष झुककर भारत विभाजन की मांग स्वीकार किए जाने की कड़ी आलोचना की। सावरकर जी ने स्पष्ट कहा–

'भारत को खण्डित करके पाकिस्तान बनाने की मांग स्पष्ट रूप से हिन्दुस्थान की एकता और अखण्डता को खुली चुनौती है। कांग्रेसी नेताओं की मुस्लिम लीग के आगे आत्मसमर्पण करने की घातक नीति के कारण ही हमारी पावन मातृभूमि का अग–भंग होगा। राष्ट्रभक्तों को राष्ट्र की अखंडता के रक्षार्थ सर्वस्य बलिदान के लिए तत्पर रहना चाहिए।'

राजनीति गतिरोध को दूर करने के नाम पर गवर्नर जनरल लार्ड बेवल भारत आए। बेवल योजना में भारत विभाजन का समर्थन किया गया तो सावरकर जी ने इसे 'भारतीय राष्ट्रवाद की अर्थी' बताकर घोर विरोध दर्ज कराया। मई, १९४६ में 'कैबिनेट मिशन' ने योजना प्रस्तुत की तो हिन्दू महासभा ने उसका भी यह कहकर विरोध किया कि किसी भी स्थिति में हम अपने राष्ट्र का साम्प्रदायिकता के आधार पर बंटवारा स्वीकार नहीं करेंगे। इतना ही नहीं सावरकर जी के आह्वान पर ३ जुलाई, १९४७ को सम्पूर्ण देश में भारत विभाजन के विरोध में काला दिवस मनाया गया। मुम्बई, पुणे, दिल्ली आदि नगरों में हड़तालें भी हुई। स्वाधीनता से एक सप्ताह पूर्व तक सावरकर जी तथा हिन्दू महासभा भारत विभाजन का डटकर विरोध करते रहे। सावरकर जी भारत विभाजन के बाद भी समय–समय पर भारत के पुनः अखण्ड

होने का सपना हृदय में संजोए रहे। १६६५ में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया तथा भारतीय सेना उसका मुंहतोड़ उत्तर देते हुए लाहौर के निकट इच्छोगिल व डोगराई पहुंच गई तो रोग शैय्या पर लेटे सावरकर जी यह समाचार सुनते ही भावविभोर होकर बोल उठे– 'क्या सेना लाहौर पर कब्जा कर मेरे अखण्ड भारत के सपने को साकार करने को उद्यत हो सकेगी?' एक दिन अपनी शैय्या के निकट दीवार पर टंगे हुए भारत के नक्शे पर अंगुली रखकर उन्होंने कहा–

'यदि विजय वाहिनी सेना के विजय अभियान में हस्तक्षेप नहीं किया गया तो वह लाहौर ही क्या रावलपिण्डी व अफगानिस्तान तक पर कब्जा करने में सक्षम होगी।' रूस के दबाव से ताशकंद समझौते के नाम पर सेना का विजय अभियान निरस्त होते ही उनका चेहरा मुर्झा उठा था। उन्होंने कहा था 'लगता है अब इस नपुंसक सत्ता के रहते मेरा अखण्ड भारत का सपना अधूरा ही रह जाएगा।' वीर सावरकर मृत्यु शैय्या पर लेटे–लेटे भी अंतिम श्वांस तक अखण्ड भारत का सपना मन में संजोए रहे थे। उन पर भारत विभाजन के समर्थन का आरोप लगाना सर्वथा निराधार व शरारतपूर्ण ही कहा जाएगा।

राष्ट्रीय अध्यक्ष चन्द्र प्रकाश कौशिक के अध्यक्षीय काल में हिन्दू महासभा द्वारा स्थापित मील के पत्थर

(हिन्दू महासभा के कार्यों का लेखा–जोखा)

❖ हिन्दू महासभा के पितृ–पुरुष वीर सावरकर को राष्ट्रपिता का दर्जा दिलाने हेतु लम्बा संघर्ष, इसी विषय पर अध्यक्ष महोदय द्वारा पुस्तक–लेखन एवं उसका राष्ट्रव्यापी प्रचार–प्रसार।

❖ हिन्दू सभा वार्ता का नियमित प्रकाशन, जिससे देश भर के हिंदूवादियों को जोड़ने में सक्रीय भूमिका का निर्वहन हुआ।

❖ इंटरनेट के माध्यम से हिन्दू महासभा की वर्ल्ड–क्लास की वेबसाइट का निर्माण एवं ७ वर्षों से अधिक समय से लगातार संचालन। वेबसाइट पर हिन्दू महासभा से सम्बंधित कार्यक्रम, जानकारियां, देशव्यापी मुद्दों पर प्रेस–विज्ञप्ति का लगातार प्रकाशन, जिससे हिन्दू महासभा आज के तकनीकी दौर में और भी प्रासंगिक बनी।

❖ बदलते जमाने के दौर में युवाओं को ध्यान में रखकर विभिन्न सोशल मीडिया के माध्यमों जैसे फेसबुक, ट्विटर इत्यादि पर हिन्दू महासभा की सक्रीय उपस्थिति।

❖ राष्ट्रीय अध्यक्ष के सशक्त प्रयासों से हिन्दू महासभा के वीर बलिदानी पंडित नाथूराम गोडसे के ऊपर लगे झूठे दागों का जोरदार ढंग से बचाव हुआ। राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय मीडिया (समस्त टीवी, अखबार इत्यादि) में व्यापक कवरेज। हिन्दू महासभा का अत्यंत सराहनीय प्रयास।

❖ राष्ट्रीय अध्यक्ष चन्द्र प्रकाश कौशिक के नेतृत्व में देश में फैल रही वैलेंटाईन–डे संस्कृति का जोरदार विरोध। साथ ही साथ कई हजार युवा प्रेमी–प्रेमिकाओं को भारतीय सभ्यता के अंतर्गत विवाह के लिए प्रोत्साहन किया गया। माननीय अध्यक्ष महोदय के नेतृत्व में विश्व विख्यात और प्रशंसित, सार्थक प्रयास जिससे अनेक भटके युवाओं को सही मार्ग चुनने की प्रेरणा मिली।

❖ देश में बंटे हुए हिन्दू–संगठनों को एक बैनर के नीचे लाने के कठिन कार्य हेतु राष्ट्रीय अध्यक्ष चन्द्र प्रकाश कौशिक के नेतृत्व में अथक प्रयास।

❖ हिन्दू महासभा भवन का जीर्णोद्धार।

❖ स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा शुरू किये गए शुद्धिकरण एवं अंतरजातीय, दहेजरहित विवाह के संकल्प का लगातार निर्वहन। इस प्रयास से लाखों युवाओं का जीवन सार्थक हुआ।

❖ दक्षिण भारत के राज्यों तमिलनाडु, कर्णाटक, केरल और उत्तर भारत के राज्यों झारखण्ड, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, राजस्थान समेत देश भर के तमाम चुनावों में हिन्दू महासभा संगठन की मजबूती का सार्थक कार्य जारी है।

❖ राष्ट्रीय अध्यक्ष के नेतृत्व में प्रत्येक वर्ष बाल वीर हकीकत राय जन्मदिवस समारोह, वीर सावरकर जन्मदिवस समारोह, भाई परमानन्द जन्मदिवस समारोह पर भव्यतम कार्यक्रम का आयोजन संपन्न होता है, जिसमें राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त संतों, महापुरुषों का मार्गदर्शन प्राप्त होता है। इसी कड़ी में अनेक महापुरुषों को याद करने का क्रम अनवरत रूप से जारी है।

❖ राष्ट्रीय अध्यक्ष के नेतृत्व में हिन्दू महासभा के अथक प्रयासों से हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष रहे पंडित मदन मोहन मालवीय को भारत सरकार द्वारा भारत–रत्न प्रदान किया जाना हिन्दू महासभा के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है।

❖ देश भर की पवित्र नदियों को बचाने का जोर–शोर से आंदोलन। गंगा–बचाओ अभियान में गंगासागर से गंगोत्री तक की यात्रा राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री कौशिक जी के नेतृत्व में सम्पन्न।

❖ पाकिस्तानी हिन्दुओं के स्थायी वीजा हेतु चन्द्र प्रकाश कौशिक जी के नेतृत्व में हिन्दू महासभा द्वारा सरकार पर व्यापक दबाव, जिससे पाकिस्तानी हिन्दुओं को वीजा मिला।

हिन्दु हृदय सम्राट वीर सावरकर

✍ मनमोहन गोयल

स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर राव सावरकर जिनके नाम का स्मरण मात्र से ही भीतर–हृदय में भी स्फूर्ति का संचार कर देता है और शीश स्वतः ही जिनको नमन की मुद्रा में नत हो जाता है, का जन्म २८ मई १८८३ ई० में प्रखर मराठी चिपलुंकर ब्राह्मण परिवार में नासिक के निकट भागुर नामक स्थान पर हुआ। आपने फरगूसन कालिज, पूने से स्नातक तक की शिक्षा प्राप्त की और ग्रेइन, लंदन से बैरिस्टर की उपाधि ली।

सावरकर जी एक निर्भीक व निडर राजनेता ही नहीं थे वरन एक अग्रणी समाज सुधारक, लेखक, कवि, इतिहासज्ञ, दार्शनिक, नाटककार एवं प्रखर वक्ता थे। यह हिन्दू समाज और देश की राष्ट्रवादी शक्तियों का दुर्भाग्य ही है कि दशाब्दियों के दुष्प्रचार के कारण समाज और देश को उनके बारे में भ्रांतियाँ अधिक और ज्ञान कम है। प्रातः स्मरणीय सावरकर जी ने १९०० में भारत के पूर्ण स्वराज्य का लक्ष्य रखा। उन्होंने यह पहचाना कि अंग्रेज किस प्रकार व्यापार के नाम पर स्वदेशी उद्योगों को नष्ट कर अपना माल थोप रहे हैं और भारत की सम्पदा का हरण कर रहे हैं और इसलिये १९०५ में पहले ऐसे राजनेता थे जिन्होंने विदेशी कपड़ों की होली जलाई। युवावस्था के प्रारम्भिक काल से ही श्री सावरकर जी पर बाल गंगाधर तिलक, विपिन चन्द्र पाल और लाला लाजपतराय के विचारों का गहरा प्रभाव था। १९०५ में ही वीर सावरकर जी ने 'अभिनव भारत' नाम की संस्था की स्थापना की और विचारों की उग्रता देखकर कालिज से निकाल दिये गये। बाद में कालिज की शिक्षा पूरी करने के बाद एक और राष्ट्रवादी श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा द्वारा उन्हें कानून की शिक्षा के लिये इंगलैंड भेज दिया गया। इंगलैंड में श्री सावरकर इंडिया हाउस में रहते थे। वहां उनका अनेकों क्रांतिकारियों से सम्पर्क हुआ। उन्हीं दिनों श्री सावरकर ने १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम पर 'भारत के स्वातंत्र युद्ध का इतिहास' नामक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी।

इस पुस्तक को अंग्रेज सरकार ने जब्त कर लिया। बाद में मैडम कामा ने इसे फ्रांस तथा बेल्जियम से प्रकाशित कराया। उनकी उग्र गतिविधियों के कारण उन्हें इंगलैंड में गिरफ्तार किया गया। वहां के कानून में स्वतंत्रता माँगना कोई अपराध नहीं था इसलिये उन्हें भारत लाकर मुकदमा चलाने का ढोंग करके ५० वर्ष के लिये कालापानी

अर्थात् अंडमान भेज दिया गया जहां से अनेकों प्रभावशाली भारतीयों के प्रयत्नों से १९२१ में सशर्त जेल से छोड़ा गया। पहले उन्हें यरवदा के सेन्ट्रल जेल और बाद में १९२४ में पूने में रखा गया। आजीवन कारावास जीवन में एक ही बार होता है लेकिन कम ही लोगों को ज्ञात होगा कि सावरकर जी को जीवन में दो बार आजीवन कारावास का दण्ड दिया गया। वो आज तक ऐसे एक ही व्यक्ति हुए हैं। ज्ञातव्य है कि स्नातक बनने पर उनकी डिग्री उनसे छीन ली गयी और बैरिस्टर बनने पर भी उन्हें कानून की प्रैक्टिस नहीं करने दी गयी।

श्री सावरकर जी ने अपने जेल के काल में हिन्दुत्व के बारे में गहन मंथन किया और इस शब्द को एक नयी परिभाषा दी। श्री सावरकर जी के लिये भारतवर्ष में रहने वाले सभी राष्ट्रभक्त हिन्दू थे। उन्होंने कहा कि हिन्दू न आर्य हैं और न द्राविडियन वरन "वे सभी जो एक मातृभूमि की सन्तान हैं और इसको पवित्र भूमि मानते हैं वो सभी हिन्दू हैं।"

आसिंधूसिंधूपर्यता यस्य भारतभूमिका।
पितृ भूः पुण्य भूयैश्चैवसवै हिंदुरितिस्मृतः

सावरकर जी की परिभाषा में, सिख, बुद्ध, जैन आदि सभी हिन्दू हैं। जहाँ श्री सावरकर जी ने 'हिन्दू पद –पादशाही' नामक पुस्तक मराठी स्वाभिमान पर लिखी वहीं उन्होंने यह भी कहा कि– "बुद्ध धर्म और संघ के प्रति सम्मान और आदर में हम किसी से पीछे नहीं हैं। उनका यश और श्रेय भी हमारा है और कमियाँ भी हमारी।" श्री सावरकर जी हिन्दू को सम्पूर्ण राष्ट्र मानते थे। सावरकर जी ऊँच–नीच का भेद नहीं मानते थे। उन्होंने केवल अपने रत्नागिरी में प्रवास के केवल १० वर्ष में जिले से छुआछूत को मिटा दिया था। उन्होंने १९३० में एक गणेशोत्सव प्रारम्भ किया जिसमें तथाकथित अछूत भी सम्मिलित होते थे। इसी क्रम में

बुद्ध धर्म और संघ के प्रति सम्मान और आदर में हम किसी से पीछे नहीं हैं। उनका यश और श्रेय भी हमारा है और कमियाँ भी हमारी।

१६३१ में पतित पावन मन्दिर की स्थापना की। सावरकर जी हिन्दू– महासभा के भी संथापक॰ थे।

उनकी हिन्दू जीवन पद्धति और आदर्शों के प्रति निष्ठा कांग्रेस की छद्म धर्मनिरपेक्षता से कभी मेल नहीं खायी। श्री सावरकर जी को इसी कारण महात्मा गाँधी की मृत्यु का सूत्रधार मानकर पुनः गिरफ्तार किया गया और तभी छोड़ा गया जब उनसे राजनीति में भाग नहीं लेने का वचन दिया। १६६३ में अपनी सहधर्मणी की मृत्यु के पश्चात् स्वयं भी आत्महत्या नहीं आत्मार्पण द्वारा १६६६ में देह त्याग कर दी। कांग्रेस के हिन्दू विरोध के कारण उनके देहावसान के पश्चात् 'गन कैरियेज' (फौजी गाड़ी) द्वारा उनकी अन्तिम यात्रा की आज्ञा तत्कालीन रक्षा–मंत्री श्री वाई० बी० चह्राण द्वारा नकार दी गयी थी। संसद में उन्हें श्रद्धांजलि भी इसी कारण नहीं दी जा सकी 'मैं शाश्वत हूँ, शान्ति में और हिंसा में। मुझे जगत में कौन नष्ट कर सकता है। ऐसा शत्रु अभी पैदा होना है।' ऐसी थी उनकी जगदीश्वर से एकात्मता। वो सचमुच जीवन के उच्चतम आदर्शों से प्रेरित हिन्दू धर्म और जीवन मूल्यों के प्रति समर्पित एक महात्मा थे। श्री सावरकर का जन्म ही हिन्दू धर्म की सेवा के लिये हुआ था। निम्न एक छन्द में उनके सम्पूर्ण जीवन–दर्शन को देखा जा सकता है।

राष्ट्रस्वतंत्रता ध्येयं
यथासाध्यं च साधनम्।
अभ्युत्थानाय हिन्दुनां
पक्षोयं सं प्रवर्तितः।

मेरा यह लेख आधा अधूरा सा, केवल कुछ इधर–उधर से ली हुई बातों का एक संकलन मात्र है। जैसा भी है उनके प्रति ह्रदय से एक विनम्र श्रद्धांजलि है।

हैदराबाद सत्याग्रह में वीर सावरकर की भूमिका

साभार-सत्य चक्र

स्वातन्त्रय वीर विनायक दामोदर सावरकर जी ने समय-समय पर आर्य समाज द्वारा किए गए संघर्षो में योगदान कर धर्मस्वातन्त्र्य का मार्ग प्रशस्त किया था। हैदराबाद में निजाम द्वारा किए गए अत्याचारों से वहाँ की हिन्दू जनता आर्त्तनाद कर रही थी। निजाम ने राज्य के हिन्दुओं के सभी धार्मिक अधिकारों पर रोक लगा दी। हिन्दू न यज्ञोपवीत पहन सकते थे, न हवन कर सकते थे। मन्दिरों में घण्टे–घड़ियाल बजाना, कीर्तन करना, रामायण, गीता व महाभारत की कथा कहना सभी को निजाम ने गैर–कानूनी घोषित कर दिया था। हिन्दुओं पर मुस्लिम गुण्डे मनमाने अत्याचार करते तथा हिन्दू स्त्रियों का अपहरण तो एक साधारण–सी बात हो गई थी। निजाम के राज्य ने बिल्कुल औरंगजेबी राज्य का रूप धारण कर लिया तो छत्रपति शिवाजी की आत्मा के रूप में वीर सावरकर का हिन्दू–ह्रदय चीत्कार कर उठा।

वीर सावरकर ने २२ जनवरी, सन् १६३६ को समस्त देश में 'निजाम निषेध दिवस' मनाने की भी प्रेरणा दी। आर्यसमाज के आन्दोलन में हिन्दू महासभा ने पूर्ण सहयोग दिया। वीर सावरकर की प्रेरणा पर सनातन धर्मी विचारधारा के भी अनेक व्यक्ति हैदराबाद आन्दोलन में जेल गए। पूना जाकर उन्होंने हिन्दू महासभा का विशाल जत्था भिजवाया।

गाँधी जी को चुनौती

गाँधी जी व अन्य कांग्रेसी नेताओं ने हैदराबाद आन्दोलन को साम्प्रदायिक बताया। गांधी जी के इस वक्तव्य का जब समस्त देश में विरोध हुआ तो उन्होंने अपयश से बचने के लिए कह दिया– **''धार्मिक स्वतन्त्रता के लिए चलाए आन्दोलन से तो मुझे सहानुभूति है, किन्तु महासभा द्वारा आन्दोलन में कूद पड़ने से यह साम्प्रदायिक हो गया है।''** वीर सावरकर ने अनेक स्थानों पर जाकर हैदराबाद आन्दोलन के प्रचार में भाषण किए और सत्याग्रही भिजवाये। नागपुर में वीर सावरकर की अध्यक्षता में अ. भा. हिन्दू महासभा का अधिवेशन हुआ तो उन्होंने हैदराबाद आन्दोलन के सम्बन्ध में भाषण देते हुए कहा– ''हैदराबाद के निजाम की धर्मान्धता का विषैला फन कुचला न गया तो भोपाल व अन्य मुस्लिम स्थानों पर भी हिन्दुओं पर अत्याचार किए जाएंगे।'' खुलना में हिन्दू परिषद हुई तो वीर सावरकर का भी भाषण हुआ। उनके ओजस्वी भाषण को सुनकर खुलना में ही पहली बार डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी प्रभावित हुए और हिन्दू महासभा में सम्मिलित हो गए। खुलना से भी सावरकर जी की प्रेरणा पर हैदराबाद आन्दोलन में जत्था गया। हैदराबाद आन्दोलन में अनेक हिन्दू वीर शहीद हुए। उनका बलिदान रंग लाया और निजाम सरकार को आर्यसमाज के साथ समझौता करना पड़ा।

विनायक दामोदर सावरकर
28 मई 1883-26 फरवरी 1966

सिंध सरकार का विरोध

सन् १६४० में कराची में हुए मुस्लिम लीग के अधिवेशन ने स्वामी दयानन्द जी द्वारा लिखित 'सत्यार्थ प्रकाश' के चौदहवें समुल्लास को इस्लाम धर्म के विरुद्ध बताते हुए जब्त करने का प्रस्ताव पास किया। सिंध के मन्त्रीमण्डल ने सत्यार्थ प्रकाश से चौदहवाँ समुल्लास हटा देने की घोषणा की, तो देश के आर्य-समाजियों में क्षोभ की लहर दौड़ गई।

२० फरवरी, सन् १६४४ को दिल्ली में एक विशाल **आर्य-समाज ने 'सत्यार्थ-प्रकाश' पर प्रतिबन्ध लगाये जाने के प्रयास की कड़ी भर्त्सना की। भारत के वायसराय को हजारों तार**

भेज कर इस अन्यायपूर्ण कदम का घोर विरोध किया गया। **सन् १६४४ में बिलासपुर में हिन्दू महासभा के वार्षिक अधिवेशन में वीर सावरकर ने सिंध के सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध की घोषणा की तीव्र भर्त्सना की।** हिन्दू महासभाई नेता देवतास्वरूप भाई परमानन्द जी ने केन्द्रीय असेम्बली में सिंध सरकार द्वारा **'सत्यार्थ प्रकाश' पर लगाई पाबन्दी की कड़ी भर्त्सना करते हुए कहा- ''सिंध के मुस्लिम मंत्रीमण्डल ने आर्यसमाज की धार्मिक पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर प्रतिबन्ध लगाकर समस्त हिन्दू-जाति को ही चुनौती दी है। यदि मान लिया जाए कि चौदहवें समुल्लास को इस्लाम-धर्म के खण्डन के कारण प्रतिबन्धित कर दिया जाए तो कुरान का तो प्रत्येक शब्द ही हिन्दुओं के विरुद्ध पड़ता है। समस्त कुरान को भी जब्त क्यों न किया जाए?'' वीर सावरकर ने एक सार्वजनिक सभा में घोषणा की- ''जब तक सिंध में 'सत्यार्थ-प्रकाश' पर पाबन्दी लगी है, तब तक कांग्रेस-शासित प्रदेशों में कुरान पर प्रतिबन्ध लगाने की प्रबल माँग की जानी चाहिए।''** सावरकर जी ने भारत के वायसराय और सिंध के गवर्नर को तार देकर कहा – ''सिंध सरकार द्वारा 'सत्यार्थ प्रकाश' पर प्रतिबन्ध लगाये जाने से साम्प्रदायिक वैमनस्य उत्पन्न होगा। यदि 'सत्यार्थ प्रकाश' से प्रतिबन्ध न हटाया गया तो हिन्दू कुरान पर प्रतिबन्ध लगाने का आन्दोलन प्रारम्भ कर देंगे। अतः मैं केन्द्रीय सरकार से अनुरोध करता हूं कि वह 'सत्यार्थ प्रकाश' पर लगे प्रतिबन्ध को अविलम्ब रद्द करे।'' **इतना ही नहीं 'सत्यार्थ प्रकाश' से प्रतिबन्ध हटवाने के लिए वीर सावरकर ने स्वयं वायसराय से २७ नवम्बर १६४४ को भेंट की व प्रतिबन्ध हटाने की मांग की।** वे समय–समय पर आर्यसमाज के वैदिक प्रचार–प्रसार व 'शुद्धि' जैसे राष्ट्रीय कार्यों की सराहना करते थे।

शेष पृष्ठ 3 का **स्वातंत्र्य वीर....**

भी करना होता था। रुकने पर उनको कड़ी सजा व बेंत व कोड़ों से पिटाई भी की जाती थीं। इतने पर भी उन्हें भरपेट खाना भी नहीं दिया जाता था। सावरकर ४ जुलाई, १६११ से २१ मई, १६२१ तक पोर्ट ब्लेयर की जेल में रहे।

स्वतन्त्रता संग्राम

१६२१ में मुक्त होने पर वे स्वदेश लौटे और फिर ३ साल जेल भोगी। जेल में उन्होंने हिंदुत्व पर शोध ग्रन्थ लिखा। इस बीच ७ जनवरी, १६२५ को इनकी पुत्री, प्रभात का जन्म हुआ। मार्च, १६२५ में उनकी भेंट राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक, डॉ० हेडगेवार से हुई। १७ मार्च, १६२८ को इनके बेटे विश्वास का जन्म हुआ। फरवरी, १६३१ में इनके प्रयासों से बम्बई में पतित पावन मन्दिर की स्थापना हुई, जो सभी हिन्दुओं के लिए समान रूप से खुला था। २५फरवरी, १६३१ को सावरकर ने बम्बई प्रेसीडेंसी में हुए अस्पृश्यता उन्मूलन सम्मेलन की अध्यक्षता की। १६३७ में वे अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के कर्णावती (अहमदाबाद) में हुए १६ वें सत्र के अध्यक्ष चुने गये, जिसके द वे पुनः सात वर्षों के लिये अध्यक्ष चुने गये। १५ अप्रैल, १६३८ को उन्हें मराठी साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष चुना गया। १३ दिसम्बर, १६३७ को नागपुर की एक जन–सभा में उन्होंने अलग पाकिस्तान के लिये चल रहे प्रयासों को असफल करने की प्रेरणा दी थी। २२ जून, १६४१ को उनकी भेंट नेताजी सुभाष चंद्र बोस से हुई। ६ अक्तूबर, १६४२ को भारत की स्वतन्त्रता के निवेदन सहित उन्होंने चर्चिल को तार भेज कर सूचित किया। सावरकर जीवन भर अखण्ड भारत के पक्ष में रहे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के माध्यमों के बारे में गांधी और सावरकर का एकदम अलग दृष्टिकोण था। १६४३ के बाद दादर, बम्बई में रहे। १६ मार्च, १६४५ को इनके भ्राता बाबूराव का देहान्त हुआ। १६ अप्रैल, १६४५ को उन्होंने अखिल भारतीय रजवाड़ा हिन्दू सभा सम्मेलन की अध्यक्षता की। इसी वर्ष ८ मई को उनकी पुत्री प्रभात का विवाह सम्पन्न हुआ। अप्रैल १६४६ में बम्बई सरकार ने सावरकर के लिखे साहित्य पर से प्रतिबन्ध हटा लिया। १६४७ में इन्होंने भारत विभाजन का विरोध किया। महात्मा रामचन्द्र वीर नामक (हिन्दू महासभा के नेता एवं सन्त) ने उनका समर्थन किया।

स्वतंत्रता उपरान्त जीवन

१५ अगस्त, १६४७ को उन्होंने सावरकर सदान्तों में भारतीय तिरंगा एवं भगवा, दो–दो ध्वजारोहण किये। इस अवसर पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने पत्रकारों से कहा कि मुझे स्वराज्य प्राप्ति की खुशी है, परन्तु वह खण्डित है, इसका दुःख है। उन्होंने यह भी कहा कि राज्य की सीमायें नदी तथा पहाड़ों या सन्धि–पत्रों से निर्धारित नहीं होतीं, वे देश के नवयुवकों के शौर्य, धैर्य, त्याग एवं पराक्रम से निर्धारित होती हैं। ५ फरवरी, १६४८ को गांधी–वध के उपरान्त उन्हें प्रिवेन्टिव डिटेन्शन एक्ट धारा के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। १६ अक्तूबर, १६४६ को इनके अनुज नारायणराव का देहान्त हो गया। ४ अप्रैल, १६५० को पाकिस्तानी प्रधान मंत्री लियाकत अली खान के दिल्ली आगमन की पूर्व संध्या पर उन्हें सावधानीवश बेलगाम जेल में रोक कर रखा गया। मई, १६५२ में पुणे की एक विशाल सभा में अभिनव भारत संगठन को उसके उद्देश्य (भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति) पूर्ण होने पर भंग किया गया। १० मई, १६५७ को भारत की राजधानी दिल्ली में आयोजित स्वतन्त्रता संग्राम के शताब्दी समारोह में वे मुख्य वक्ता रहे। ८ अक्तूबर, १६४६ को उन्हें पुणे विश्वविद्यालय ने डी. लिट. की मानद उपाधि से अलंकृत किया। ८ नवम्बर, १६६३ को इनकी पत्नी यमुनाबाई चल बसीं। सितम्बर, १६६६ से उन्हें तेज स्वर ने आ घेरा, जिसके बाद इनका स्वास्थ्य गिरने लगा। १ फरवरी, १६६६ को उन्होंने मृत्युपर्यन्त उपवास करने का निर्णय लिया। एकाएक २६ फरवरी १६६६ को उनकी स्थिति और भी गम्भीर हो गई। ऑक्सीजन दी गई, इंजेक्शन लगाए गए, किन्तु सब बेकार। अन्त में ११ बजे भारत माँ की मिट्टी में जन्मा उसका बेटा उसकी धरती में लीन हो गया। स्वातन्त्र्य वीर माँ की गोद में थककर सो गया। एक ज्योतिपुंज बुझ गया। समस्त देश में शोक की लहर दौड़ गई। वसीयत में भी अपनी राष्ट्रभक्ति को गूँथ दिया था यह लिखकर कि 'मेरे निधन पर हड़ताल करके, कामकाज बन्द करके राष्ट्रीय हानि न की जाए।' वीर सावरकर का समस्त जीवन जिस प्रकार प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहा, उनकी वसीयत भी प्रेरणादायक थी। वीर सावरकर की अन्त्येष्टि में लाखों नर–नारियों ने भाग लिया। समस्त देश में शोक–सभाएँ करके उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गई। इनका समस्त जीवन माँ भारती की वेदी पर दीये की लौ की तरह जलता रहा। अगर इस महान् आत्मा के जीवन की कमर्ठता, देश–प्रेम, त्याग, बलिदान, सहन–शक्ति और साहसिक भावनाओं का प्रकाश हमें हमारा कर्त्तव्य–पथ दिखलाता रहे, तभी इस महान् आत्मा को शान्ति मिलेगी और इनका बलिदान सार्थक होगा।

अखिल भारत हिन्दू महासभा का गठन

✍ राघव मिश्र

हिन्दुस्थान की सबसे पहली राजनैतिक पार्टी हिन्दू महासभा का गठन देश के विभिन्न प्रान्तों में १८८२ में ही हो गया था। हिन्दू महासभा के नेतृत्व में पूरे देश में भारत की आजादी का आंदोलन चल रहा था। प्रखर राष्ट्रवादी नेता पं० मदन मोहन मालवीय ने पूरे देश के हिन्दू महासभा नेताओं, क्रांतिकारियों, राजा–महाराजाओं की एक सभा पवित्र हरिद्वार में वैशाखी के दिन १९१५ में रखी। उस सभा में राष्ट्रीय स्तर पर अखिल भारत हिन्दू महासभा का गठन किया गया। जिसमें महाराजा मनीन्द्र चन्द्र नन्दी को प्रथम राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाया गया। दूसरे राष्ट्रीय अधिवेशन में पं० मदन मोहन मालवीय को राष्ट्रीय अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर, भाई परमानन्द, डॉ० वी. एस. मुंजे, महंत अवैध नाथ, एन. सी. चटर्जी, स्वामी श्रद्धानन्द जैसे महान नेताओं ने हिन्दू महासभा का नेतृत्व किया है। स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा हिन्दू महासभा के नेतृत्व में शुद्धि आंदोलन चलाया गया, जिसमें हिन्दू धर्म से अलग हो गये परिवारों को हिन्दू धर्म में वापस लाया गया। स्वातंत्र्य वीर सावरकर जी ने पतिता उद्धार सभा का गठन कर हिन्दू महासभा के नेतृत्व में पूरे देश में सामाजिक एकता का मूल मंत्र दिया। उन्होंने पहली बार दलितों को मंदिरों में प्रवेश दिलाया। भारत की स्वतंत्रता व हिन्दू, हिन्दी, हिन्दुस्थान की रक्षा के कार्य में हिन्दू महासभा के योगदान को कभी भूला नहीं जा सकता है। हिन्दू महासभा अखंड हिन्दू राष्ट्र के लिये कृत संकल्प है तथा हिन्दू हितों के लिए तत्पर है।

प्रगति और विस्तार की ओर हिन्दू महासभा

सन् २००६ में हिन्दू महासभा के युवा नेता श्री चन्द्र प्रकाश कौशिक, श्री मुन्ना कुमार शर्मा एवं श्री वीरेश त्यागी को नेतृत्व का भार सौंपा गया। यह हिन्दू महासभा के इतिहास की युगान्तरकारी घटना थी क्योंकि हिन्दुत्ववादी चिन्तन और हिन्दू महासभा की राष्ट्रवादी सोच को युवा पीढ़ी तक पहुंचाने का क्रांतिकारी कार्य आरम्भ हुआ। अत्यंत गर्व का विषय है कि इन लोगों के युवा नेतृत्व ने युवा पीढ़ी को हिन्दुत्व अभियान से जोड़कर राष्ट्रीय सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राजनीतिक परिवेश में नवीन युग की आधारशिला रखी। वर्षों तक निष्प्राण पड़ी हिन्दू महासभा देश के प्रत्येक क्षेत्र में सक्रियहीन हैं, वहां के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य को प्रभावित भी कर रही है। इसका सुफल भी दिखाई देने लगा है। हिन्दू महासभा के प्रयासों से दिल्ली, उत्तराखंड, राजस्थान और अन्य क्षेत्रों में ईसाई धर्मान्तरण पर रोक लगी है। जिस स्थिति में कथित हिन्दूवादी संगठन भी मुसिलम तुष्टिकरण की राह पर चलने लगे हैं, ऐसे में हिन्दू महासभा प्रखर राष्ट्रवाद की न केवल समर्थक है अपितु उसकी विस्तारक भी हैं।

हिन्दू महासभा का हिन्दुत्व प्रचार अभियान

हिन्दू महासभा यह मानती है कि बिना वैचारिक क्रांति से आधारभूत परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। इसलिये हिन्दू महासभा की ओर से इस्लामी आतंकवाद और ईसाई धर्मान्तरण की कुटिल चालों को अनावृत करने वाली कई लाख पुस्तकें निःशुल्क वितरित की गई। हिन्दू महासभा का मुख पत्र साप्ताहिक हिन्दू सभावार्ता भारत के प्रमुख वैचारिक साप्ताहिकों में गिना जाता है। उसकी प्रसार संख्या और लोकप्रियता निरन्तर बढ़ रही है। हिन्दुत्व और राष्ट्रत्व के प्रचारक के रूप में वह विश्व का एक मात्र पत्र है।

प्रकोष्ठ आधारित संगठन

वर्तमान नेतृत्व ने यह अनुभव किया कि हिन्दू राष्ट्र की परिकल्पना को तब ही सार्थक किया जा सकता है जब राष्ट्रवादी विचारों और हिन्दू संस्कारों को समाज के विभिन्न वर्गों तक पहुंचायें। इस हेतु चालीस से अधिक प्रकोष्ठ बनाये गये और उनके गठन एवं विस्तारण का कार्य गति से चल रहा है।

वैश्विक आधार पर हिन्दुत्व का प्रचार

विश्वभर में प्रवासी हिन्दुओं की संख्या छह करोड़ हैं। हिन्दू महासभा ने यह अनुभव किया कि राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दू चेतना के कार्य के अतिरिक्त वैश्विक आधार पर हिन्दुत्व का प्रचार–प्रसार तथा हिन्दू संस्कारों को संरक्षण आवश्यक है। साथ ही बौद्ध राष्ट्रों में भी हिन्दू महासभा का गठन होना चाहिये। इस हेतु हिन्दू महासभा ने जापान, दक्षिणी अफ्रीका और मारीशस में हिन्दू महासभा की स्थापना की और तेरह अन्य देशों में हिन्दू साहित्य भेजने की व्यवस्था थी।

इन्टरनेट पर हिन्दुत्व

हिन्दुत्व का चिन्तन वैश्विक स्तर पर सरलता के साथ विस्तार ग्रहण करें, इस हेतु इन्टरनेट सूचना तकनीक का सहारा लिया

गया। इसका लाभ यह हुआ कि पश्चिमी देशों पर हिन्दू धर्म का प्रचार हुआ और हिन्दू महासभा का प्रचार हुआ।

राजनीतिक कार्य

हिन्दू महासभा का कार्य बहुआयामी है। लेकिन राजधर्म को भी महत्व देना महासभा अपना कर्त्तव्य समझती है। हिन्दुत्ववादी सोच के विस्तार और राजनीति में राष्ट्रहित की अवधारणा को प्रतिष्ठित करने के लिये हिन्दू महासभा द्वारा विभिन्न विधानसभा चुनावों में प्रत्याशी खड़े किये गये। कुछ प्रत्याशियों को काफी समर्थन भी मिला।

भावी योजना

१. ग्राम–ग्राम तक हिन्दू महासभा का विस्तार।

२. जातिविहीन समाज की स्थापना हेतु जागरूक हिन्दू समाज की संरचना।

३. हिन्दू चिन्तन को आधार मानते हुये भारतीय राजनीतिक की दिशा को पूर्णतया राष्ट्रवादी दिशा की ओर मोड़ना।

आजादी की लड़ाई में योगदान

हिन्दू महासभा के मंच से आजादी की लड़ाई लड़ने वाले सर्वश्री लाला जगतनारायण, लाला हरदयाल, महाराजा मनीन्द्रचन्द्र नन्दी, पं० मदन मोहन मालवीय, श्रीमंत राजा रामपाल सिंह, स्वामी श्रद्धानन्द, शंकराचार्य डॉ० कुर्तकोटि, श्री एन० सी केलकर, लाला लाजपत राय, राजा राजेन्द्र नाथ, लक्ष्मण बलवन्त भोपटकर,डा० नारायण भास्कर खरे, श्री एन० सी० चटर्जी, प्रो० प्रेमसिंह, प्रो० बी० जी० देशपांडे, महन्त दिग्विजय नाथ, डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी, वीर सावरकर दामोदर सावरकर, शंकराचार्य भारतीकृष्ण तीर्थ, भिक्षु उत्तम, भाई परमानन्द, श्री विजयराम राघवाचार्य, श्री रामानन्द चट्टोपाध्याय, डॉ० बालकृष्ण सदाशिव मुंजे, रास बिहारी बोस, डॉ हेडगेवार, मि० गोगटे, श्री लाहिड़ी आदि क्रांतिकारी नेताओं का योगदान रहा है। इनमें से अधिकतर महापुरूष समय–समय पर हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष भी रहे।

संसद और हिन्दू महासभा

हिन्दू महासभा के कई प्रमुख नेता संसद में पहुँचे और देश व जनता के हितों की आवाज बड़े प्रभावशाली तरीके से संसद के समक्ष रखा है। हिन्दू महासभा के सांसद निम्न रहे हैं:– एन० सी० चटर्जी, वी० जी० देश पाण्डे, डॉ० एन बी० खरे, सुशीला नैयर, सेठ विशन चन्द्र, महन्त दिग्विजय नाथ, पं० ब्रज नारायण ब्रजेश, महन्त अवैध नाथ आदि।

हिन्दू महासभा के जनप्रतिनिधि

आजादी से पूर्व नेशनल असेम्बली के लिये भाई परमानन्द अम्बाला सीट से निर्वाचित हुए थे। आजादी से पूर्व स्टेट कोटे से डॉ० नारायण भास्कर खरे व अन्य प्रतिनिधि नेशनल असेम्बली में मनोनीत हुए थे। आजादी से पूर्व सिन्ध प्रान्त में मेहर चन्द्र, पंजाब प्रान्त में डॉ० गोकुल चन्द नारंग और बंगाल में डॉ० श्यामा प्रसाद मुखर्जी हिन्दू महासभा के कोटे से संयुक्त सरकारों में मंत्री रहे। हिन्दू महासभा के विभिन्न प्रान्तों में जम्मू कश्मीर से लेकर भारत के करीब सभी प्रान्तों में हिन्दू महासभा के विधायक रहे हैं। मध्यप्रदेश में १९५२ में १४ विधायकों के साथ विपक्ष की सबसे बड़ी पार्टी भी रही है, जिसके नेता निरंजन दास वर्मा, मध्यप्रदेश विधानसभा में विपक्ष के नेता थे। राजस्थान विधानसभा में भी १९५२ में दो विधायक निर्वाचित हुए थे। उसके पश्चात् भी सैकड़ों प्रत्याशियों ने हिन्दू महासभा के टिकट पर चुनाव लड़कर सम्मानजनक स्थिति में रहे। १९९० में हिन्दू महासभा के सांसद गोरखपुर सीट से महन्त अवैद्यनाथ जी चुनाव जीतकर संसद में पहुँचे थे। परन्तु १९९० में विश्वनाथ प्रताप सिंह की भाजपा के सहयोग से सरकार बनी जब चुनाव आयोग ने हिन्दू महासभा के चुनाव लड़ने पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। परन्तु दिल्ली उच्चतम न्यायालय से विजय हुई जिसके कारण से आज हिन्दू महासभा पुनः चुनाव मैदान में है। १९५२ में हिन्दू महासभा के सदस्य राज्य सभा में पहुँचे थे। कई बार विभिन्न विधान परिषदों में भी हिन्दू महासभा के सदस्य निर्वाचित हुए थे।

हिन्दू महासभा का ऐतिहासिक कार्य

१८८२ से १९१४ : १. इस काल में न्यायालयों में उर्दू ही कामकाज की भाषा थी। परन्तु हिन्दू महासभा ने प्रचण्ड आन्दोलन चलाकर हिन्दी में भी कार्य करने की स्वीकृति दिलाई।

२. इस काल में हिन्दुओं के धर्मान्तरण, अत्याचार व अन्य हितों के लिए संघर्ष।

३. बंगाल में वन्देमातरम् और बंग भंग आन्दोलन में भूमिका। उस काल में बंगाल में हिन्दू महासभा की स्थापना हो चुकी थी।

१९१४-१९१६ : इस काल में अंग्रेज गंगा की धारा को रोकना चाह रहे थे परन्तु हिन्दू महासभा के विरोध के कारण यह विचार त्यागना पड़ा।

१९१६ : लखनऊ में कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पास किया, जिसके फलस्वरूप ऐसी सीटें रखी जानी थी, जिससे सिर्फ मुस्लिम प्रत्याक्षी ही चुनाव लड़ सकते थे। परन्तु हिन्दू महासभा के प्रबल विरोध के कारण कांग्रेस व अंग्रेजों को झुकना पड़ा।

१९२२-१९२३ : हिन्दू महासभा के तत्कालीन राष्ट्रीय अध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्द ने ४,५०,००० मल्कानी मुसलमानों को शुद्धि कर हिन्दू बनाया।

१९२८ : जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें महाराष्ट्र से सिन्धुओं का अलग प्रान्त बनाना था, परन्तु हिन्दू महासभा ने उस वक्त ऐसा नहीं होने दिया। हालांकि बाद में अंग्रेज व मुस्लिम लीग व कांग्रेस के सयुंक्त प्रयास से सिन्ध महाराष्ट्र से अलग हो गया था। परन्तु १९२८ में हिन्दू महासभा ने ऐसा नहीं होने दिया। सिन्ध से महाराष्ट्र का अलग होना देश विभाजन का मुख्य कारण रहा।

१९३३-१९३४ : हिन्दू महासभा ने १९३३–३४ में बौध भिक्षु उत्तम को अध्यक्ष चुना तथा कई देशों के प्रतिनिधि बौधों ने हिन्दू महासभा के प्रयासों से अपने को हिन्दू होना स्वीकारा।

१९३६ : हैदराबाद सत्याग्रह। हैदराबाद निजाम द्वारा हिन्दुओं को दोयम दर्जे का नागरिक बना रखा था। हिन्दुओं पर कई प्रकार के अत्याचार हो रहे थे। उसका हिन्दू महासभा ने विरोध किया और बहुत बड़ा आन्दोलन चलाया। हजारों हिन्दू महासभा के कार्यकर्त्ताओं ने गिरफ्तारियाँ दीं और कई दिनों तक निजाम की जेलों में रहे। इस आन्दोलन को कांग्रेस, निजाम व अंग्रेजों के विरोधों के बावजूद ऐतिहासिक आन्दोलन

हुआ।

१६४१ : भार्गलपुर सत्याग्रह। अंग्रेजों ने हिन्दू महासभा के अधिवेशन पर प्रतिबंध लगा दिया परन्तु हिन्दू महासभा ने सत्याग्रह कर सम्मेलन किया।

१६४२-१६४७ : १. सिन्ध में सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगाया गया परन्तु हिन्दू महासभा के प्रबल आन्दोलन से सत्यार्थ प्रकाश से प्रतिबन्ध वापस लिया गया।

२. हिन्दू महासभा ने १६४२ से लेकर १६४७ तक राजनीति का हिन्दूकरण, हिन्दुओं का सैनिकीकरण प्रसिद्ध अभियान चलाया। इस काल में सेना में हिन्दू सैनिकों की कम संख्या थी परन्तु इस अभियान से सेना में भारी संख्या में हिन्दुओं की बढ़ोत्तरी हुई।

अखण्ड भारत आन्दोलन : हिन्दू महासभा ने मुस्लिम लीग, अंग्रेजों और कांग्रेस के देश विभाजन के खतरनाक मंसूबों से अवगत कराते हुए पूरे देश में देश विभाजन के खिलाफ आन्दोलन चलाया। वीर सावरकर ने १६४२ में कांग्रेस के भारत छोड़ो आन्दोलन को भारत तोड़ो में बदलेगा, देश व जनता को सचेत किया था। परन्तु दुर्भाग्य से देश की जनता ने सावरकर जी की भविष्यवाणी को गम्भीरता से नहीं लिया परिणामस्वरूप देश का विभाजन हुआ। देश विभाजन होने के पश्चात हिन्दू महासभा ने १४ अगस्त १६४७ की रात को १२ बजे अखण्ड भारत समारोह मनाकर पुनः अखण्ड भारत बनाने का संकल्प लिया तथा हिन्दू महासभा के प्रयासों से वर्तमान बंगाल व पंजाब पाकिस्तान में जाने से बचा।

१६४७-१६४६ : पाकिस्तान से आये हुए हिन्दुओं के पुनर्वास में सराहनीय कार्य रहा।

१६५० : रामजन्म भूमि अयोध्या में रामलला प्रकटोत्सव सफलता के साथ सम्पन्न कराया।

१६५३ : हिन्दू महासभा के सांसद एन० सी० चटर्जी के नेतृत्व में कश्मीर आन्दोलन में सैंकड़ों लोगों द्वारा भागीदारी।

१६५६ : कृष्ण जन्म भूमि मथुरा और काशी विश्वनाथ मन्दिर का आन्दोलन चलाया।

१६६६ : गौ रक्षा आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका।

१६६३-१६६४ : राम कृष्ण मिशन द्वारा अपने को अल्पसंख्यक घोषित करना। अपने को अहिन्दू घोषित करना। उसके खिलाफ हिन्दू महासभा न्यायालय में याचिका दायर कर इनको हिन्दू घोषित करने में सफलता। इसी प्रकार आर्य समाज ने भी हिन्दुओं को अपने से अलग होना बताया, परन्तु ये सर्वोच्च न्यायालय में नहीं गये। अतः हिन्दू महासभा के प्रयासों से हिन्दुओं से दूर नहीं गये।

१६६० : चुनाव आयोग द्वारा हिन्दू महासभा पर प्रतिबन्ध और हिन्दू महासभा द्वारा संघर्ष। उच्च न्यायालय द्वारा विजय मिली। परिणाम स्वरूप आज चुनाव लड़ रही है एवं एक महत्वपूर्ण राजनैतिक पार्टी है।

२००५-२००६ : आन्ध्र प्रदेश सरकार द्वारा अल्पसंख्यकों को आरक्षण हिन्दू महासभा के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष के० मुरलीधर राव ने न्यायालय में याचिका दायर कर आरक्षण पर रोक लगवाई।

वर्तमान अभियान

अखिल भारत हिन्दू महासभा राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री चन्द्र प्रकाश कौशिक, राष्ट्रीय महासचिव श्री मुन्ना कुमार शर्मा एवं राष्ट्रीय कार्यालय मंत्री श्री वीरेश कुमार त्यागी के नेतृत्व में अखण्ड हिन्दू राष्ट्र के निर्माण व हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्थान की रक्षा का कार्य पूर्ण तत्परता व सक्रियता पूर्वक कर रही है। अयोध्या में भगवान श्री राम के जन्मस्थान पर भव्य श्रीराम मंदिर के निर्माण के लिये न्यायालय में मुकदमा लड़ रही है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के लखनऊ बेंच द्वारा विजय श्री प्राप्त हो चुका है। मुकदमा सुप्रीम कोर्ट में चल रहा है। सुप्रीम कोर्ट से विजयश्री के उपरान्त मंदिर का निर्माण कार्य तेजी से शुरू कर दिया जायेगा। श्रीराम सेतु की रक्षा, गंगा नदी की अविरल धारा को सुरक्षित रखने, दिल्ली के सुभाष पार्क मंदिर का जीर्णोद्वार, गौहत्या पर पूर्णरूप से प्रतिबन्ध लगाने, धारा– ३७० को समाप्त कराने, समान आचार संहिता लागू कराने, भ्रष्टाचार को रोकने के लिये लोकपाल विधेयक को लागू कराने, विदेशी बैंकों में जमा कालाधन को वापस भारत लाने, साम्प्रदायिक एवं लक्षित हिंसा रोकथाम विधेयक को रोकने, महिलाओं की सुरक्षा के लिये अपराध कानून में परिवर्तन लाने हेतु विशेष अभियान अखिल भारत हिन्दू महासभा द्वारा पूरे देश में चलाया जा रहा है।

शेष पृष्ठ 38 का **हिंदुत्व के प्रमुखतम.....**

वह एक सर्वसंग्रही इतिहास है।

'हिंदुत्व' तथा 'हिंदू धर्म' शब्दों का भेद

'हिंदू धर्म' यह शब्द 'हिंदुत्व' से ही उपजा उसी का एक रूप है, उसी का एक अंश है; इसलिए यदि 'हिंदुत्व' शब्द की स्पष्ट कल्पना करना हम लोगों के लिए संभव नहीं होता तो 'हिंदू धर्म' शब्द भी हम लोगों के लिए दुर्बोध तथा अनिश्चित बन जाएगा। इन दो शब्दों में विद्यमान अन्योन्य पृथक्ता ठीक तो समझ नहीं पाने के कारण ही कुछ सहोदर जातियों में, जिन्हें हिंदू संस्कृति के अमूल्य उत्तराधिकार प्राप्त हुए हैं, अनेक मिथ्या धारणाएँ उत्पन्न हुई हैं। इन शब्दों के अर्थ में मूलतः क्या अंतर है यह बात आगे स्पष्ट होती जाएगी। यहाँ इतना बताना ही पर्याप्त होगा कि 'हिंदू धर्म से सामान्यतः जो बोध होता है, वह 'हिंदुत्व' के अर्थ से भिन्न है। किसी आध्यात्मिक अथवा भक्ति संप्रदाय के मतों के अनुसार निर्मित अथवा सीमित आचार–विचार विषयक नीति–नियमों के शास्त्र को ही 'हिंदू धर्म' कहा जाता है। 'धर्म' शब्द का अर्थ भी यही है। हिंदुत्व के मूल तत्त्वों की चर्चा करते समय किसी एक धार्मिक या ईश्वर–प्राप्ति से जुड़ी विचारप्रणाली या पंथ का ही केवल विचार नहीं किया जाता। भाषा की कठिनाई न होती तो हिंदुत्व के अर्थ से निकट आने वाला 'हिंदुपन' शब्द का हमने 'हिंदूधर्म' शब्द का बदले प्रयोग किया होता। 'हिंदुत्व' शब्द में एक राष्ट्र तथा हिंदूजाति के अस्तित्व का तथा पराक्रम के सम्मिलित होने का बोध होता है। इसीलिए 'हिंदुत्व' शब्द का निश्चित आशय ज्ञात करने के लिए पहले हम लोगों को यह समझना आवश्यक है कि 'हिंदू' किसे कहते हैं। इस शब्द ने लाखों लोगों के मानस को किस प्रकार प्रभावित किया है तथा समाज के उत्तमोत्तम पुरुषों ने, शूर तथा साहसी वीरों ने इसी नाम के लिए अपनी भक्तिपूर्ण निष्ठा क्यों अर्पित की, इसका रहस्य ज्ञात करना भी आवश्यक है। यहाँ यह बता देना भी आवश्यक है कि जो शब्द किसी एक पंथ की ओर निर्देश करता है तथा हिंदुत्व की तुलना में अधिक संकुचित तथा असंतोषप्रद है, उसकी चर्चा हम नहीं करने वाले हैं। इस प्रयास में हम कितने यशस्वी हो सकेंगे तथा हमारा दृष्टिकोण कितना योग्य है– इसका निर्णय आगामी विवेचन समझने के पश्चात् ही किया जा सकेगा।

अखिल भारत हिन्दू महासभा के उद्देश्य

१. अखण्ड हिन्दू राष्ट्र की स्थापना।

२. सांप्रदायिक लक्षित हिंसा विधेयक का रद्दीकरण।

३. स्विस बैंक सहित सभी विदेशी बैकों से भारतीयों के जमा काले धन को वापिस लाना। सभी तरह के कालाधन एवं जमाखोरी पर रोक लगाना।

४. अयोध्या, काशी एवं मथुरा में मंदिर निर्माण शीघ्र करना एवं पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार।

५. भारतीय संविधान की धारा–३७० को समाप्त करना। देश में समान आचार संहिता लागू करना।

६. देश में १०० नये आई. आई. टी. एवं आई. आई. एम. की स्थापना।

७. गोवंश हत्या पर पूर्णरूप से प्रतिबन्ध लगाना एवं गौसंवर्धन हेतु उचित कानून बनाना।

८. रामसेतु रक्षा हेतु कानून बनाना तथा रामसेतु को राष्ट्रीय धरोहर घोषित करने का संकल्प।

९. गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित कर पूर्णरूप से संरक्षित करना एवं पूर्ण अधिकार प्राप्त गंगा नदी प्राधिकरण बनाना।

१०. ग्रामीण एवं शहरी रोजगार गारंटी योजना पूरे देश में ईमानदारी पूर्वक लागू करना तथा ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के बेरोजगारों को रोजगार की गारंटी देने का संकल्प।

११. पूरे देश के कृषकों को कृषि कार्य हेतु संसाधन उपलब्ध कराना, बिना ब्याज का ऋण देना, सभी ऋणों को माफ करना तथा फसल सुरक्षा बीमा ईमानदारी पूर्वक लागू करना।

१२. देश में बिजली के उत्पादन को आवश्यकतानुसार बढ़ाना तथा देश के सभी भागों में चौबीस घंटे बिजली की आपूर्ति करना।

१३. देश के सभी भूभागों में निवास कर रहे देशवासियों को शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराने का संकल्प।

१४. देश के सभी नागरिकों को मुफ्त चिकित्सा उपलब्ध कराने हेतु देश के सभी क्षेत्रों में पूर्ण सुविधायुक्त अस्पताल का निर्माण कराना।

१५. दूर–दराज के ग्रामीण क्षेत्रों सहित पूरे देश में उच्च दर्जे के सड़क निर्माण का संकल्प।

१६. आर्थिक मंदी को शीघ्र दूर करने एवं औद्योगिक कृषि विकास की गति को तेज करने का संकल्प।

१७. देश से आतंकवाद को जड़ मूल से समाप्त करने हेतु उचित सुरक्षा संसाधनों का अपने देश में निर्माण। सुरक्षा बलों को आधुनिक बनाने एवं उन्हें आधुनिकतम हथियारों से सुसज्जित करने, भारतीय सेना, सुरक्षा बलों एवं भारतीय पुलिस को आतंकवादियों एवं अपराधियों से लड़ने हेतु पूर्ण अधिकार देने का संकल्प।

१८. आतंकवाद एवं अपराध पर अंकुश लगाने हेतु कड़े एवं प्रभावशाली कानून बनाने का संकल्प।

१९. किसानों को समृद्धशाली बनाने हेतु खाद्यान्न सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था, अनाजों के उचित भंडार की व्यवस्था एवं किसानों द्वारा उपजाए गये अनाज के उचित मूल्य की व्यवस्था।

२०. व्यवसायियों की पूर्ण सुरक्षा की गारंटी, बिना किसी रूकावट के व्यवसाय एवं उद्योग चलाने हेतु विभिन्न कानूनों का सरलीकरण एवं इंस्पेक्टर राज से मुक्ति का संकल्प।

२१. देश का औद्योगिकरण एवं उद्योगों को बढ़ावा देने हेतु करों में छूट का संकल्प।

२२. भारतीय थल, वायु एवं जल सेना को पूर्णरूप से सक्षम एवं आत्मनिर्भर बनाने हेतु देश में ही आधुनिकतम हथियार, टैंक, जहाज आदि निर्मित करने की व्यवस्था करना।

२३. हथियारों के खरीद–बिक्री को पारदर्शी बनाना तथा सभी प्रकार के घूसखोरी एवं दलाली पर प्रतिबन्ध।

२४. देश के सभी छात्र–छात्राओं को इंटरमीडिएट तक मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था एवं शिक्षा के व्यवसायीकरण पर पूर्णरूप से रोक लगाने का संकल्प।

२५. सभी तरह के व्यावसायिक एवं औद्योगिकी शिक्षण संस्थानों में आर्थिक रूप से कमजोर छात्र–छात्राओं हेतु मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था।

२६. देश में राष्ट्रवाद का विकास करना तथा जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद आदि को समाप्त कर देश की एकता एवं अखंडता को मजबूत बनाने का संकल्प।

२७. संस्कृत को राष्ट्रभाषा घोषित किया जायेगा एवं संस्कृतनिष्ठ हिन्दी एवं विभिन्न क्षेत्रीय तथा लोक भाषाओं का संरक्षण एवं संवर्धन।

२८. अंग्रेजी भाषा की अनिवार्यता को समाप्त कर उसके स्थान पर संस्कृत भाषा को स्थापित करना।

२९. देश में वृक्षारोपण के कार्य को युद्धस्तर पर करके पर्यावरण संरक्षण के कार्य को बढ़ावा देने का संकल्प। वृक्षों की अवैध कटाई पर रोक लगाना।

३०. देश की बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाने का संकल्प।

३१. भूमि के अंदर के घटते जल स्तर को रोकने का उचित उपाय करने का संकल्प।

३२. कन्या भ्रूण हत्या पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध लगाना एवं उसे रोकने हेतु कठोर कानून बनाने का संकल्प।

३३. महिला सशक्तिकरण एवं छात्राओं की शिक्षा हेतु विशेष प्रबंध करने का संकल्प। महिला सुरक्षा पर विशेष गंभीरता।

३४. देश के हिन्दू नागरिकों को चार धाम की यात्रा, अमरनाथ यात्रा, वैष्णों देवी तीर्थ यात्रा सरकार के द्वारा निःशुल्क कराई जायेगी, वरिष्ठ नागरिकों को हरसम्भव निःशुल्क सुविधा प्रदान करने का संकल्प।

३५. परम पवित्र एवं पूजनीय यमुना नदी को साफ सुथरा एवं प्रदूषण मुक्त करने का संकल्प। गंगा एवं यमुना के किनारे सभी परियोजनाओं को बन्द करने एवं नदी की अविरल धारा की सुरक्षा का संकल्प।

३६. देश में अवैध रूप से घुसपैठ कर रह रहे बांग्लादेशियों एवं पाकिस्तानियों को खदेड़ने का संकल्प।

३७. बेरोजगार युवकों के लिये नई–नई सम्भावनायें खोजना एवं बेरोजगारी भत्ता

देने का संकल्प।

३८. देश में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले निवासियों को आवासीय सुविधा उपलब्ध कराना। कोई भी व्यक्ति भूखा न रहे इसकी समुचित व्यवस्था करना।

३६. देश की जनता को उचित चिकित्सा सुविधा प्रदान करने के लिये मुफ्त स्वास्थ्य बीमा उपलब्ध कराना।

४०. शिक्षा के व्यावसायिकरण को रोकने, गरीब छात्र छात्राओं को सरकारी खर्चे पर उच्चतम शिक्षा की व्यवस्था करना।

४१. गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को आवश्यकतानुसार दो रुपये प्रति किलो चावल या गेहूँ देने का संकल्प।

४२. गरीब रेहड़ी पटरी एवं छोटे दुकानदारों के व्यवसाय को बढ़ावा देना। उनके कारोबार में हस्तक्षेप करने वाली मल्टी–नेशनल कम्पनियों को देश से बाहर करने का संकल्प।

४३. देश में महिलाओं की सुरक्षा के मद्देनजर सुरक्षाबलों में महिला सुरक्षाकर्मियों की तादाद बढ़ाने का संकल्प।

४४. महिलाओं के विकास के लिये रोजगार, शिक्षा व उद्योग धन्धों में उनकी सहभागिता के प्रतिशत को बढ़ाने का संकल्प।

४५. दिल्ली, लखनऊ, मुम्बई, नौएडा, गाजियाबाद सहित विभिन्न शहरों की अनाधिकृत कालोनियों को पूर्ण रूप से नियमित करवाने का संकल्प।

४६. लाखों कारोबारियों को सिलिंग की आड़ में बेरोजगार करने की साजिश को रोकना। दिल्ली में बढ़ रहे शॉपिंग मॉल कल्चर की योजनाओं को तत्काल प्रभाव से रद्द करने का संकल्प।

४७. देश के विभिन्न नगर निगमों, प्राधिकरणों एवं सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार को समाप्त करना। जनविरोधी अफसरशाही पर नकेल कसने का संकल्प।

४८. भारत में बढ़ती आतंकवादी घटनाओं पर अंकुश लगाना। खुफिया तन्त्र को अधिक चुस्त बनाने का संकल्प। देश को पूर्णतः अपराध मुक्त करवाना।

४६. बढ़ती महंगाई को रोकने के लिये जमाखोरों के विरूद्ध कड़ी कार्यवाही करने का संकल्प।

५०. महानगरों एवं शहरों की चरमराती यातायात व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने का संकल्प।

५१. खेलों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाने के लिये युवा खिलाड़ियों को विशेष सुविधाएं प्रदान करना व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के स्टेडियमों के निर्माण का संकल्प। खेल–संघों में व्याप्त भ्रष्टाचार पर रोक।

५२. तीन लाख रुपये तक की वार्षिक आय को कर मुक्त करने का संकल्प।

५३. दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता, बंगलुर, लखनऊ, इलाहाबाद, वाराणसी, अहमदाबाद, हैदराबाद, रांची, पटना, जयपुर, भोपाल सहित राज्य के सभी राजधानियों को विश्व का आधुनिकतम शहर बनाने का दृढ़ संकल्प।

५४. श्री रामलीला मंचन, श्रीकृष्ण जन्मोत्सव पूरे देश के गांवों में सरकारी खर्च से आयोजित करने का संकल्प।

५५. पूरे देश के मंदिरों के पुजारियों को सरकार की ओर से मानदेय देने का संकल्प।

५६. विदेश नीति के मोर्चे पर पाकिस्तान एवं चीन से कड़ाई से निपटने का संकल्प। जरूरत पड़ने पर कूटनीतिक संबंध समाप्त होंगे।

समकालीन महापुरुषों की दृष्टि में सावरकर

सावरकर मेरे जीवन में प्रथम क्रान्तिकारी आदर्श थे जिन्होंने हमें भरपूर प्रेरित और प्रोत्साहित किया था। **–श्री राज गोपालाचारी**

श्री सावरकर एक पुरानी पीढ़ी के महान क्रान्तिकारी थे। उन्होंने **परतन्त्रता की शासन व्यवस्था से मुक्ति के लिए विस्मयजनक मार्गों का अवलम्बन किया था। राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए उन्होंने अनन्त यातनाएँ झेली थीं। –महामहिम राष्ट्रपति स्व. डॉ. राधाकृष्णन**

सावरकर समकालीन भारत की एक महान विभूति थे उनका नाम और साहस देशभक्ति का पर्याय है। वे एक आदर्श क्रान्तिकारी के सांचे में ढले थे और अनगिनत लोगों ने उनके जीवन से प्रेरणा ली। **–श्रीमती इन्दिरा गांधी**

वीर सावरकर के निधन से राष्ट्र एक महान स्वातन्त्र्य वीर को खो चुका है। उन्होंने ब्रिटिश शासन को कभी मान्यता नहीं दी। उन्होंने राष्ट्र स्वतन्त्रता के लिए अनन्त यातनाओं को सहा और मेरे जीवन को बहुत प्रेरित किया। **–रक्षामंत्री स्व. यशवंतराव जी चव्हाण** (जो अपने नगर सांगली से अंडमान तक पैदल चलकर सावरकर दर्शन को गए थे)

स्व. सावरकर जी के योग्य मार्गदर्शन के कारण मैं दो बार फांसी पर से झूलने से बच निकला। १६०६ के अगस्त में मैं पहली बार सावरकर से लंदन में मिला। पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा जी के इंडिया **हाउस** में प्रत्येक रविवार को वह भाषण देते थे। उन सभाओं में मैं जाता था। उनके आत्मार्पण से अत्यन्त दुःख हुआ है। **–सेनापति श्री बापट**

सावरकर उन दूरदर्शी राजनीतिज्ञों में से थे जो समय के प्रवाह को बहुत पहले से आंक लेते थे। विभाजन की विभीषिका से बहुत पूर्व ही उन्होंने देश को सावधान कर दिया था। सौ वर्ष बाद का भारत सावरकर को पहचानेगा। **–श्री राममनोहर लोहिया**

जिन सावरकर को स्वतंत्र भारत का प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति बनना चाहिए था वे स्वतन्त्र भारत में भी कारागृह में बन्दी बन गए। **–प्रो. बलराज मधोक**

वीर सावरकर जी के कार्य और उपदेशों का महत्व शायद ५० या १०० वर्ष बाद इस देश की समझ में आएगा। **–आर्यवीर प्रकाशवीर शास्त्री**

वीर बहुत हुए, होंगे भी बहुत लेकिन इनके समान नहीं, इस उक्ति को यथार्थ से सिद्ध करने वाले थे नर शार्दूल अर्थात वीर सावरकर। **–श्री बाला साहब देवरस**

वास्तव में सावरकर मात्र एक व्यक्ति विशेष का नाम नहीं है। वह एक तप है, तेज है, तलवार है, त्याग है, तपस्या है और साहस, संकल्प, संघर्ष, संगठन, साधना और साथ ही सहनशीलता और सृजन है। **–श्री अटल बिहारी वाजपेयी**

सावरकर के 'आत्मार्पण' पर श्रद्धांजलि सुमन

मैं नौजवानों से हमेशा कहता हूँ धार्मिक यात्रियों के लिए भले ही केदार नाथ, बद्रीनाथ, काशी, रामेश्वरम तीर्थस्थान होंगे, पर **देशभक्तों के लिए यदि कोई तीर्थस्थान है तो वह है अन्डमान। अन्डमान में भी पोर्ट ब्लेयर और उसमें भी सेल्युलर जेल और सेल्युलर जेल में भी वह कक्ष जहाँ सावरकर जी ने सजा काटी थी।** छत्रपति शिवाजी के बाद यदि मुझे किसी के जीवन ने सबसे अधिक प्रभावित किया तो वीर सावरकर ने।

—श्री लालकृष्ण आडवाणी

'पहली बार कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गाँधी ने संसद में सावरकर को तैल—चित्र लगाने का विरोध किया था और अब मणि ने सेल्युलर बन्दीगृह से सावरकर की पट्टिका हटवा दी है। इस प्रकार दोनों ने ही अपने इन कृत्यों से अपना ओछापन प्रकट किया है।' —**एस गुरुमूर्ति राजनैतिक विश्लेषक**

'अफसोस इस बात का है कि लोग पढ़ते नहीं हैं और सुनी—सुनाई बातों पर बहस करना शुरू कर देते हैं। सावरकर बहुत बड़े स्वतन्त्रता सेनानी थे। सालों तक उन्होंने अंडमान में कालापानी की सजा काटी। **उन्हें कोल्हू का बैल बनाया गया, कोई एक दिन भी वैसी सजा काट कर दिखाए** तो फिर मैं उसे मानूं।'

—श्री (वसंत साठे, पूर्व केन्द्रीय मंत्री

(कुछ समय पूर्व श्री वसंत साठे ने सावरकर को 'भारत रत्न' से सम्मानित करने की पुरजोर मांग की थी।)

वीर सावरकर जी में वे गुण भी थे जो छत्रपति शिवाजी महाराज में थे और वे गुण भी थे जो स्वामी दयानन्द जी में थे। इस तरह सावरकर जी छत्रपति शिवाजी और स्वामी दयानन्द जी का संगम थे।

—स्व. प्रो. रामसिंह

मणिशंकर अय्यर द्वारा सावरकर पर मिथ्या लांछन लगाए जाने पर कुछ विशेषज्ञों एवं विद्वानों की तीखी प्रतिक्रिया—

'मणिशंकर अय्यर बहुपठित और जानकार व्यक्ति हैं। वह यह जरूर मानते होंगे कि स्वयं श्रीमती इंदिरा गाँधी ने वीर सावरकर राष्ट्रीय समिति के सचिव को पत्र लिखकर टिप्पणी की थी कि **'ब्रिटिश सरकार के खिलाफ दुस्साहसी विद्रोह के कारण वीर सावरकर का संग्राम के इतिहास में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है।** मैं भारत के इस विलक्षण सपूत को जन्म—शताब्दी के समारोह की सफलता की कामना करती हूँ।' यह दुर्भाग्य है कि ऐसे महान स्वतंत्रता सेनानी के प्रति कृतज्ञ होने के बजाय अय्यर जैसे नेता कृतघ्नता भरी टिप्पणी करते रहते हैं। वीर सावरकर का निरादर अक्षम्य अपराध है।' —**दीनानाथ मिश्र, सांसद एवं वरिष्ठ पत्रकार**

'अय्यर को सबसे ज्यादा तकलीफ इस बात से है कि अंडमान हवाई अड्डे का नामकरण सावरकर जी के नाम पर क्यों किया गया? हवाई अड्डे पर एक संवाददाता से उन्होंने कहा, 'महात्मा गाँधी की हत्या में उनकी भूमि आदि को देखते हुए एक भारतीय होने के नाते मुझे यह महसूस होता है कि सावरकर के नाम पर हवाई अड्डे का नामकरण गलत है।' लगता है कि कांग्रेसियों का इतिहास ज्ञान नगण्य है। १९३७ में मुम्बई में कांग्रेस के नेतृत्व में निर्वाचित सरकार बनी तो उसने पहला काम यह किया कि रत्नागिरि में कैद सावरकर की नजरबन्दी पूरी तरह खत्म कर दी। इससे पूर्व १९२३ में काकीनाड़ा कांग्रेस अधिवेशन में भी सर्वसम्मति से सावरकर की रिहाई की मांग का प्रस्ताव पारित किया गया था। **अय्यर ने यह भी ध्यान नहीं रखा कि सावरकर के देहावसान के बाद इंदिरा जी ने सावरकर को भारत की महान विभूति बताते हुए कहा था कि 'साहस और देश भक्ति के पर्याय सावरकर आदर्श क्रान्तिकारी के सांचे में ढले थे।**

—बलबीर पुंज, पूर्व सांसद एवं पत्रकार

सावरकर एक महान देशभक्त और भारतमाता के यशस्वी पुत्र थे। यदि भारत के लोग सावरकर को भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान नहीं देते, तो यह देश के प्रति उनकी कृतघ्नता होगी। जो भी इस राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहर से प्रेम करता है और राष्ट्र के प्रति वफादार है वह हिन्दू है, और मैं भी।

—श्री मोहम्मद करीम छागला

'सावरकर ने जब लंदन में अपनी पढ़ाई समाप्त की तो उनको उपाधि देते समय यह प्रतिज्ञा लेने को कहा गया वे ब्रिटिश सम्राट के प्रति निष्ठावान रहेंगे। वीर सावरकर ने यह प्रतिज्ञा लेना अस्वीकार कर दिया। परिणामस्वरूप परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर भी उन्हें उपाधि से वंचित कर दिया। **जबकि नेहरू और गाँधी आदि अनेक भारतीयों ने इस प्रतिज्ञा को दोहराया और उपाधि प्राप्त की।** इससे ही स्पष्ट है कि वास्तविक देशभक्त कौन है?

—अशोक कौशिक, वरिष्ठ पत्रकार

बाबाराव सावरकर की संघ को देन

✍ प्रो. देवेन्द्र स्वरूप

क्रांतिकारी
गणेश दामोदर सावरकर
(बाबा सावरकर)
वीर सावरकर के बडे भाई

पूण्य तिथि-16 मार्च

प्रायः ऐसा माना जाता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ स्वातन्त्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर के अधिक निकट है। **जबकि सच्चाई यह है कि संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवार का विनायक के बड़े भाई गणेश दामोदर उपाख्य बाबाराव सावरकर से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था। बाबाराव ने संघ के विस्तार में प्रभावी भूमिका निभाई थी। जबकि विनायक दामोदर सावरकर ने मतभेद के चलते एक समय में संघ की आलोचना भी की थी।**

सावरकर का नाम लेते ही आँखों के सामने काले रंग की गोल ऊंची टोपी पहने और सुनहरे गोल फ्रेम का चश्मा लगाए एक चेहरा सामने आ जाता है। **यह स्वातन्त्र्यवीर विनायक दामोदर के नाम से विख्यात है।** राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विरुद्ध वामपंथी बौद्धिकों एवं उनके नेहरूवादी अनुयायियों के ६०–७० वर्ष लम्बे प्रचार ने विनायक सावरकर को **'हिन्दू राष्ट्रवाद'** के प्रथम व्याख्याता एवं संघ के जन्मदाता डॉ. हेडगेवार के मुख्य प्रेरणास्रोत एवं मार्गदर्शक की छवि प्रदान की है। **स्वातन्त्र्यवीर सावरकर के तेजस्वी व्यक्तित्व एवं संघर्षमय जीवन, ओजस्वी व्यक्तित्व एवं प्रखर लेखनी के कारण उनकी इतनी प्रसिद्धि हुई है कि कुछ इने-गिने लोगों को ही पता है कि विनायक सावरकर के दो भाई और भी थे।** बड़े, **गणेश दामोदर सावरकर उपाख्य बाबाराव सावरकर**, छोटे–**डॉ. नारायण दामोदर सावरकर।**

१८७६ में जन्मे गणेश दामोदर उपाख्य बाबाराव क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेने के अपराध में विनायक से पहले अंडमान जेल में भेजे गए। **ग्यारह वर्ष अंडमान की यातनाएं झेलकर मई, १९२१ में दोनों भाई अंडमान से भारतीय जेलों में पहुँचाए गए।** अंडमान की यातनाओं से जर्जर शरीर को गम्भीर बीमारी लगने पर **बाबाराव को साबरमती जेल से १९२४ में रिहा कर दिया गया। पर विनायक को यरवदा जेल से रिहा करके भी रत्नागिरि जिले में स्थानाबद्ध किया गया।** १९३७ में स्थानाबद्धता समाप्त होने पर ही विनायक को भारत भ्रमण एवं सार्वजनिक जीवन में हिस्सा लेने का अवसर मिल सका।

क्रान्तिकारी बाबाराव

बाबाराव भी अपने छोटे भाई विनायक जितने ही **प्रखर राष्ट्रभक्त एवं उत्कृष्ट हिन्दुत्वनिष्ठ थे।** १९०६ में विनायक के इंग्लैंड जाने के बाद उनके द्वारा स्थापित **'अभिनव भारत'** नामक क्रान्तिकारी संस्था का पोषण बाबाराव ने ही किया था। नासिक षड्यन्त्र में पहले वे पकड़े गए और **उन्हें ही आजन्म कारावास की सजा देकर कालापानी यानी अंडमान भेजा गया।** १९२४ में साबरमती जेल से रिहा होने के बाद भी बाबाराव अपने जर्जर शरीर को लेकर शान्त नहीं बैठे। अपितु देश भर में उनकी आँखें राष्ट्रवादी अंतःकरणों की खोज में भटकती रहीं। **उनकी दृष्टि संगठनात्मक थी।** उनकी प्रकृति सौम्य, शान्त और धर्म प्रधान थी। **विनायक ने रत्नागिरि में स्थानबद्धता के काल में हिन्दू समाज में प्रचलित अंधविश्वासों, जाति प्रथा, अस्पृश्यता आदि के विरुद्ध समाज सुधार आन्दोलन शुरू कर दिया।** वे स्वयं को नास्तिक घोषित करने के बिन्दु तक पहुँच गए।

इसके विपरीत बाबाराव भजन–कीर्तन, साधु–सन्त, तीर्थयात्रा आदि का श्रद्धापूर्वक पालन करते रहे। वे संन्यास लेने क लिए भी प्रवृत्त हुए। इस धार्मिक वृत्ति के साथ–साथ वह अध्ययन, मनन और लेखन की बौद्धिक क्षमता से भी युक्त थे। **जेल से बाहर आने के बाद से लेकर १९४५ में अपनी मृत्यु तक उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं। यह उनकी विद्वता, मौलिक चिन्तन और लेखन क्षमता का प्रमाण है।** संघ–विरोधी वामपंथी बौद्धिकों को न तो बाबाराव के जीवन की जानकारी है और न ही यह पता है कि डॉ. हेडगेवार के साथ **उनका १९२४ से लेकर १९४० में डॉ. हेडगेवार की मृत्यु तक सतत सम्पर्क और पत्राचार बना रहा।** जबकि विनायक सावरकर से उनकी पहली संक्षिप्त भेंट मार्च १९२५ में रत्नागिरि के निकट शिरगांव स्थित उनके निवास स्थान पर हुई थी।

पर **दुष्प्रचार और विनायक के विरुद्ध अभियान के चलते बाबाराव के भारी योगदान को पूरी तरह विस्मृत कर दिया गया, जबकि संघ कार्य के विस्तार में उनकी उल्लेखनीय भूमिका थी।** बाबाराव अपने अनुभव और अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके थे कि **भारतीय राष्ट्रीयता की आधार भूमि हिन्दू समाज ही है। भारत को स्वतन्त्र कराने के लिए उसे संगठित करना पहली आवश्यकता है।** इसलिए एक

ओर वे लेखन द्वारा भारतीय राष्ट्रवाद की वैज्ञानिक व्याख्या करते रहे, दूसरी ओर देश भर में बिखरे ऐसे कार्यकर्ताओं और नेताओं से सम्पर्क स्थापित करते रहे जो स्वयं प्रेरणा से हिन्दू संगठन के कार्य में जुटे हुए थे।

डॉ. हेडगेवार से भेंट

बाबाराव ने अपने को चमकाने या प्रचार पाने का प्रयास कभी नहीं किया। बल्कि अपनी आत्मविलोपी वृत्ति के कारण वे अन्य को भी आगे बढ़ाते रहे। १९२४ में जेल से रिहा होने के एक महीना बाद ही वे बीमार अवस्था में नागपुर स्थित अपने मित्र एडवोकेट विश्वनाथ केलकर के यहाँ आराम करने के लिए आए। **विश्वनाथ केलकर स्वयं भी हिन्दुत्वनिष्ठ थे और डॉ. हेडगेवार के घनिष्ठ मित्र थे।** डॉ. हेडगेवार का विश्वनाथ केलकर के घर नियमित रूप से आना–जाना था। इन्हीं दिनों बाबाराव के साथ उनका निकट सम्पर्क आया। **डॉ. हेडगेवार के जीवनीकार न.ह. पालकर ने लिखा है कि इन तीनों** (डॉ. हेडगेवार, बाबाराव सावरकर और एडवोकेट केलकर) **की दृष्टि एवं मनोवृत्ति एक जैसी थी।** यह वह समय था जब डॉ. हेडगेवार संघ जैसे अभिनव संगठन की स्थापना के बारे में अपने सभी मित्रों के साथ गहन विचार–मन्थन में लगे हुए थे। स्वाभाविक रूप से उन्होंने बाबाराव को भी इस विचार–मन्थन में शामिल किया। बाबाराव ने डॉ. हेडगेवार की तड़प और संगठन–क्षमता का सूक्ष्म अध्ययन किया। **उन्हें विश्वास हो गया कि डॉ. हेडगेवार के हाथों में कोई बड़ा कार्य होने वाला है। इसलिए उन्होंने डॉ. हेडगेवार के द्वारा संघ प्रारम्भ करने के विचार को पूरा समर्थन प्रदान किया। १९२५ में विजयदशमी के दिन अपने घर पर जिन १५-२० लोगों की उपस्थिति में डॉ. हेडगेवार ने घोषणा की कि 'हम आज संघ शुरू कर रहे हैं', उस बैठक में विश्वनाथ केलकर भी सहभागी थे।**

उसी काल में बाबाराव ने स्वयं भी **'तरुण हिन्दू सभा'** के नाम से एक संगठन प्रारम्भ किया था। इसकी कई शाखाएँ दक्षिणी महाराष्ट्र में चल रही थीं। **बाबाराव समझ चुके थे कि जर्जर स्थिति में पहुँच चुके अपने स्वास्थ्य के चलते वे संगठन कार्य के लिए अधिक दौड़-धूप करने की स्थिति में नहीं हैं। इस दृष्टि से डॉ. हेडगेवार और बाबाराव के बीच बढ़ती घनिष्ठता का ही परिणाम था कि १९२८ के कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में डॉ. हेडगेवार के साथ बाबाराव भी गए थे। डॉ. हेडगेवार की नेताजी सुभाष चन्द्र बोस से भेंट के समय भी बाबाराव उपस्थित थे।**

माना जाता है कि **उसी समय डॉ. हेडगेवार ने नेता सुभाष के सामने द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ने पर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए संघ जैसा अखिल भारतीय संगठन खड़ा करने के लिए समयबद्ध कार्यक्रम की रूपरेखा रखी होगी। जिसको ध्यान में रखकर ही सुभाष बाबू ने रामझंझा गिरी और बाळा हुद्दार को देवलाली भेजकर डॉ. हेडगेवार से मिलने की इच्छा प्रकट की होगी और शायद इसीलिए २१ जून १९४० को डॉ. हेडगेवार के निधन से एक दिन पूर्व दोबारा नागपुर आकर उनसे भेंट का असफल प्रयास किया होगा।** १९३० में गांधी जी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ा, जो नमक सत्याग्रह के नाम से प्रसिद्ध है। डॉ. हेडगेवार ने संगठन के नाते संघ को उससे अलग रखते हुए भी स्वयं कुछ चुने हुए कार्यकर्ताओं के साथ **'जंगल सत्याग्रह'** नाम से उसमें भाग लिया और अकोला में कारावास भोगा। जिन दिनों वे कारावास में थे उन्हीं दिनों संघ के सरकार्यवाह बाळा हुद्दार क्रान्तिकारी दल द्वारा की गई बालाघाट डकैती के सिलसिले में गिरफ्तार हो गए। इससे डॉ. हेडगेवार बहुत चिन्तित हुए। **वे नहीं चाहते थे कि संघ अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही ब्रिटिश सरकार की कोप-दृष्टि का शिकार बने।** उन्होंने बाळा हुद्दार को तो सरकार्यवाह पद से मुक्त कर दिया और अपनी चिन्तित मनःस्थिति में चार–पांच दिन लिए बम्बई चले गए। वहाँ **उन्होंने बाबाराव सावरकर और उनके सबसे छोटे भाई डॉ. नारायण सावरकर से संघ कार्य के भविष्य के बारे में गहन विचार-विमर्श किया। डॉ. नारायण सावरकर कलकत्ता मेडिकल कॉलेज में उनके सहपाठी भी रह चुके थे।**

काशी में संघ

डॉ. हेडगेवार बम्बई से होते हुए नागपुर वापस लौटे ही थे कि उन्हें काशी से बाबाराव का तुरन्त वहाँ पहुँचने का बुलावा आ गया। **बाबाराव का स्वास्थ्य खराब होने के कारण महामना मालवीय ने उन्हें अपने यहाँ बुलाकर उन्हें अपने निवास पर रखा था।** वैद्यराज त्रयंबक शास्त्री से उनका इलाज करवाया जा रहा था। उन्हीं दिनों काशी में हिन्दू–मुस्लिम दंगे के कारण तनावपूर्ण स्थिति पैदा हो गई थी। बाबाराव ने डॉ. हेडगेवार को तुरन्त काशी पहुँचने का पत्र भेजा। डॉ. हेडगेवार ११ मार्च, १९३१ को वहाँ पहुँचे। उनके ठहरने की व्यवस्था जमखंडी भवन में की गई थी। इसकी देखभाल रत्नागिरि के निकट शिरगाँव के निवासी भास्करराव दामले संभालते थे। उनसे डॉ. की घनिष्ठता हो गई। बाबाराव और दामले के प्रयत्नों से डॉ. हेडगेवार ने काशी के कुछ प्रतिष्ठित नागरिकों की बैठक ली। उनमें से कुछ लोगों को संघ की प्रतिज्ञा भी दिलाई।

बाबाराव ने मालवीय जी को विश्वविद्यालय परिसर में संघ शाखा लगाने की अनुमति देने को कहा, जो उन्होंने सहर्ष ही दे दी। शाखा से सम्बन्धित सामान रखने के लिए संघ–स्थान पर एक कमरा बनाने की अनुमति भी दी। **इस प्रकार काशी विश्वविद्यालय में संघ की शाखा खुली।** इससे पहले काशी के जमखंडी भवन में भास्कर दामले के मार्गदर्शन में एक शाखा शुरू हो चुकी थी। धन धान्येश्वर शाखा नाम से जानी गई यह शाखा नागपुर और विदर्भ के बाहर पहली संघ की शाखा थी, जिसके निमित्त बाबाराव सावरकर बने। **काशी में ही एक दिन बाबाराव सावरकर डॉ. हेडगेवार से बोले, 'आज मैं अपनी तरुण हिन्दू सभा को विसर्जित करता हूँ। मेरी जो कुछ शक्ति है वह आपके कार्य में लगा दूँगा। मेरा आशीर्वाद आपके साथ है।'** इन्हीं दिनों एक अत्यन्त प्रभावी संत पांचलेगांवकर भी हिन्दू समाज के संगठन के लिए **'मुक्तेश्वर संघ'** चला रहे थे। उसके मराठी भाषी क्षेत्रों में २०–२५ केन्द्र चल रह थे। **बाबाराव ने सन्त पांचलेगांवकर को**

समझा-बुझाकर उनके मुक्तेश्वर संघ को रा.स्व. संघ में विलीन करने के लिए तैयार कर दिया। यह विलीनीकरण १६३४ में पूरा हुआ।

बाबाराव की पहल

सन् १६३२ के अप्रैल मास के प्रारम्भ में डॉ. हेडगेवार को बाबाराव का पत्र मिला कि मई मास में कराची में अखिल भारतीय तरुण हिन्दू परिषद होने वाली है। आप उसमें अवश्य आइए। डॉ. हेडगेवार असमंजस में पड़ गए। एक ओर तो वे नागपुर में संघ शिक्षा वर्ग की तैयारी में लगे थे। दूसरे, कराची तक की यात्रा के लिए उनके पास पैसा भी नहीं था। अपनी आर्थिक कठिनाई को वे किसी के सामने प्रकट नहीं होने देते थे। किन्तु बाबाराव के साथ उनका सम्बन्ध इतना सहज बन चुका था कि उन्होंने अपनी आर्थिक स्थिति उन्हें सूचित कर दी। **इस सम्बन्ध में डॉ. हेडगेवार और बाबाराव के बीच हुआ पत्र व्यवहार बहुत मार्मिक है।** बाबाराव ने उन्हें सूचित किया कि आर्थिक समस्या मेरे सामने भी है किन्तु भाई परमानन्द ने मेरे आने–जाने के लिए किराए की व्यवस्था कर दी है, उसमें से आधा आप ले लें। **चाहे जैसे भी हो, उन्होंने डॉ. हेडगेवार का कराची चलने के लिए मना ही लिया, और वे बम्बई से बाबाराव के साथ वहाँ गए। वहाँ उन्होंने संघ की शाखा शुरू की।**

कराची से लौटकर अगस्त १६३२ में बाबाराव डॉ. हेडगेवार के साथ दक्षिण महाराष्ट्र के दौरे पर निकले। सतारा, कन्छाड़, सांगली, कोल्हापुर और जामखेड़ी आदि अनेक स्थानों पर गए। **सब जगह बाबाराव ने अपने परिचित तरुणों एवं प्रतिष्ठित नागरिकों को डॉ. हेडगेवार से जोड़ दिया।** दक्षिण महाराष्ट्र में संघकार्य पहुँचाने का यह पहला प्रयास था। **बाबाराव के व्यापक परिचय का संघ कार्य को बहुत लाभ मिला।** डॉ. हेडगेवार की अनुभवपूर्ण प्रभावीवाणी और बाबाराव का बैठकों में सहज रीति व शान्त वाणी के विचारों को समझाने का कौशल—दोनों का तालमेल बन गया।

डॉ. हेडगेवार की कठिन आर्थिक स्थिति से उनके सभी शुभचिन्तक परेशान रहते थे। पर डॉ. हेडगेवार से बात करने का किसी को साहस नहीं होता था। १६३६ में उन सबने बाबाराव के साथ मिलकर एक लॉटरी योजना तैयार की, और उसके लिए बाबाराव से डॉ. हेडगेवार को पत्र लिखवाया गया। बाबा के प्रति बहुत आदर भाव होने पर भी डॉ. हेडगेवार ने जुए जैसे काम को अपनी सहमति देने से इनकार कर दिया।

सन् १६३४ में बाबाराव की **'राष्ट्र-मीमांसा'** नामक मराठी पुस्तक प्रकाशित हुई। १६४० में राष्ट्र–मीमांसा का हिन्दी अनुवाद जबलपुर से छपा जिसमें गुरु जी गोलवलकर की लिखी ३० पृष्ठों की हिन्दी भूमिका उपलब्ध है। **गुरु जी ने अपनी बहुचर्चित अंग्रेजी पुस्तक 'वी ऑर अवर नेशनहुड'** के **१६३६ के प्रथम संस्करण में इस पुस्तक के लेखन में 'राष्ट्र-मीमांसा' को आधार बताया और उसका भारी ऋण स्वीकार किया।** प्रथम संस्करण में यह भूमिका छपी पर दूसरे संस्करण में नहीं दी गई। १६३६ में भाग्यनगर सत्याग्रह के समय हिन्दू सभा के नेताओं का डॉ. हेडगेवार से मतभेद हो गया। कारण, **डॉ. हेडगेवार स्वतन्त्रता प्राप्ति के निधारित लक्ष्य से इधर-उधर भटकने को तैयार नहीं थे। उसी समय नाथूराम गोडसे ने संघ से सम्बन्ध विच्छेद करके 'हिन्दू राष्ट्र सेना' प्रारम्भ की और 'हिन्दू राष्ट्र अग्रणी' नामक साप्ताहिक में संघ की कटु आलोचना शुरू की।** विनायक सावरकर ने संघ पर निष्क्रियता का आरोप लगा दिया। विनायक सावरकर ने कहा कि संघ स्वयंसेवक की कब्र पर लिखा जाएगा, 'पैदा हुआ, संघ में चला गया, कबड्डी और लाठी सीखता रहा, और बिना कुछ किए मर गया।' **इस काल में बाबाराव का पूरा प्रयास मतभेद की इस खाई को पाटने में लगा रहा। दोनों सावरकर बन्धुओं के संघ के साथ सम्बन्धों पर गहन शोध अभी बाकी है।**

शेष पृष्ठ 49 का **हमारी राष्ट्रभाषा.....**

सकेगी। यदि मुसलमानों को सरस्वती के ध्वज पर आपत्ति है तो उन्हें पृथक् उर्दू विश्वविद्यालय स्थापित करने चाहिए। इसकी चिंता करने का कोई कारण नहीं है। उर्दू तथा हिंदी के पाँव एक–दूसरे के साथ बाँध देने पर दोनों ही भाषाओं का विकास थम जाता है तथा इससे समस्याओं में वृद्धि हो जाती है। मुसलमानों के चाहने पर भी हम लोग अब 'हिंदी माने हिंदुस्थानी' का बोझ नहीं चाहते।

५. बहुसंख्यकों के लिए जो सुलभ तथा अनुकूल होगी वही राष्ट्रभाषा बन सकती हैं। अतः बहुसंख्यक हिंदुओं के हिंदुस्थान में संस्कृतनिष्ठ भाषा ही यह स्थान पा सकती है। इसलिए हिंदी जितनी अधिक संस्कृतनिष्ठ बनेगी उसकी राष्ट्रभाषा बनने की क्षमता में उतनी ही वृद्धि होगी। अतः हिंदी प्रांतों में भाषाशुद्धि के लिए जिन्हें अभिमान है उनको हिंदी को पूर्णतः संस्कृतनिष्ठ करने का तथा पूर्व के मुस्लिम वर्चस्व के द्योतक, जो उर्दू तथा विदेशी शब्द हिंदी में शेष हैं, उन्हें दूध में गिरी हुई मक्खी के समान बाहर फेंककर, प्रकट रूप में इस बहिष्कार को सहयोग देने का दृढ़ निश्चय करना चाहिए। हिंदी भाषा में एक भी अनावश्यक उर्दू या अंग्रेजी शब्द का प्रयोग करने पर पाबंदी लगा देनी चाहिए। इस प्रकार बलात् खींचे बिना विदेशी लोगों की इस भाषिक रस्सीखींच में विजय प्राप्त करना हम लोगों के लिए असंभव हो जाएगा। इसके विपरीत उर्दू में अरबी, फारसी, इंग्लिश आदि विभिन्न भाषाओं के शब्दों को सम्मिलित किया जा रहा है। इस प्रकार की सम्मिश्र भाषा उन्हें उचित प्रतीत हो रही है तथा हम लोगों के लिए भी यह अच्छा ही है। उर्दू में अरबी आदि हिंदुओं के लिए अपरिचित तथा चिंताजनक शब्द जितने अधिक होंगे उतनी वह भाषा बहुसंख्यक हिंदुओं के लिए दुर्बोध तथा अप्रिय बनेगी तथा बंगाल से मद्रास तक की सामान्य जनता इस भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रस्ताव का विरोध करना प्रारंभ कर देगी। उन्हें हिंदी ही अधिक निकट, अपनी तथा सरल प्रतीत होगी।

इन सभी कारणों से राष्ट्रीय भाषा तथा राष्ट्रीय लिपि की समस्या का समाधान प्राप्त करने का यही एक मार्ग है–प्रत्येक हिंदू को प्रकट रूप में तथा बिना किसी भय से निम्न प्रतिज्ञा करनी चाहिए–'हम हिंदुओं की राष्ट्रभाषा संस्कृतनिष्ठ हिंदी है तथा संस्कृतनिष्ठ नागरी लिपि ही हम हिंदुओं की राष्ट्रलिपि होगी।'

हिंदुत्व के प्रमुखतम अभिलक्षण

साभार-सावरकर समग्र

नाम का क्या महत्त्व है?

'जी हाँ, हम हिंदू हैं, हिंदू कहलाने में हमें सदैव गर्व का अनुभव होता है', यह बात हम साहस के साथ कहते हैं और आशा करते हैं कि हमारे इस स्वाभिमान दर्शक आग्रहपूर्वक वक्तव्य के लिए वेरोना की वह लावण्यवती हमें उदारतापूर्वक क्षमा कर देगी। इस सुंदरी ने 'नाम का क्या महत्त्व है? पाँव, मुख आदि के समान नाम मानव–शरीर का कोई अंग नहीं है,' ऐसा कहते हुए व्याकुल होकर अपने प्रियतम से प्रार्थना की थी कि उसका नाम बदल दिया जाए। यदि हम इस प्रिय मठवासी भिक्षुश्रेष्ठ के स्थान पर होते तो हम भी यही कहते कि नाम का क्या महत्त्व है। यदि गुलाब को किसी अन्य नाम से संबोधित किया जाएगा, तब भी उसकी सुगंध पूर्ववत् बनी रहेगी। इस बात को आग्रहपूर्वक प्रस्तुत करने वाले रमणीय तर्कशास्त्र के सम्मुख नतमस्तक होकर इस कथन को स्वीकार करने का परामर्श भी हम उसके प्रियतम को देते, क्योंकि नाम की तुलना में वस्तु का महत्त्व अधिक होता है। एक ही वस्तु को विभिन्न प्रकार के अनेक नामों से संबोधित किया जाता है। शब्दों की ध्वनि में तथा उससे प्रतीत होने वाले अर्थ मे एक स्वाभाविक तथा अपरिहार्य प्रकार का संबंध रहता है– ऐसा कहना स्वयं अपना ही औचित्य खो देता है। फिर भी उस वस्तु में तथा उसे दिए हुए नाम में विद्यमान परस्पर संबंध समय के साथ दृढ़ होकर अंततः चिरस्थायी बन जाते हैं तथा वस्तु का बोध कराने वाला यह एक माध्यम बन जाता है। नाम तथा वस्तु प्रायः एकरूप हो जाते हैं। इस वस्तु के विषय में उत्पन्न होने वाले उपविचार तथा भावनाएँ उस वस्तु का और उसके नाम का महत्त्व एक समान हो जाता है। 'नाम का क्या महत्त्व है' ऐसा प्रश्न व्याकुल होकर पूछनेवाली कोमलांगी प्रेषिता को अपने पूजनीय प्राणेश्वर 'रोमियो को पेरिस नाम से संबोधित करना उचित नहीं प्रतीत होता, अथवा अपनी प्रियतमा ज्युलिएट को अन्य किसी नाम से संबोधित करना स्वीकार्य नहीं होता। फलों से लदे वृक्ष की शाखाओं को अपने प्रकाश से रजतस्नान कराने वाले चंद्र को साक्षी रखकर ज्युलिएट का प्रियकर भी क्या शपथपूर्वक कह सकता कि ज्युलिएट की तरह रोजलिन नाम भी उतना ही मधुर और भावपूर्ण लगता है।

नाम की अद्भुत महिमा

कुछ शब्द ऐसे भी हैं, जो अत्यंत गूढ़ कल्पना या ध्येय–सृष्टि अथवा विशाल तथा अमूर्त सिद्धांत के स्पर्श से महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। उनका स्वतंत्र असितत्व होता है और वे किसी जीव–जंतु के समान जीते हैं। समय के साथ वे पुष्ट होते हैं। हाथ–पाँव अथवा मनुष्य के अन्य अंगों से ये नाम भिन्न होते हैं, क्योंकि वे मनुष्य की आत्मा ही बनकर रहे होते हैं तथा मानवी पीढ़ियों से भी वे अधिक चिरंतन बन जाते हैं। जीजस का निधन हो गया, परंतु रोमन साम्राज्य की अपेक्षा अथवा किसी भी अन्य सम्राट की तुलना में वह अधिक चिरंतन हो गया। 'मैडोना' के किसी चित्र के नीचे 'फातिमा' लिख दिया जाए तो स्पैनिश व्यक्ति इसे किसी अन्य कलापूर्ण चित्र की तरह कौतूहल से देखता रहेगा, परंतु चित्र के नीचे 'मैडोना' लिखा होगा तो एक चमत्कार घट जाएगा। तनकर खड़ा वह व्यक्ति अपने घुटनों के बल झुक जाएगा। उसकी आँखों में कला विषयक जिज्ञासा के स्थान पर एक साक्षात्कारी भक्तिभाव झलकने लगेगा। उसकी दृष्टि अंतर्मुखी बन जाएगी। मेरी का पवित्र मातृप्रेम तथा वात्सल्य मूर्तिमंत साकार करने वाले इस चित्र के दर्शन से उसकी संपूर्ण देह पुलकित हो उठेगी। 'नाम का क्या महत्त्व है' ऐसा कहने में यदि कुछ तथ्य है तो अयोध्या को होनोलुलु अथवा वहाँ के अमरचरित्र रघुकुल तिलक को 'दगड़ू' या ऐसा ही कोई अन्य नाम देने पर कोई अंतर नहीं आएगा। किसी अमेरिकी को उसके वॉशिंगटन को चंगेज खाने कहने में या किसी मुसलमान को स्वयं को ज्यू कहलाने में जो कष्ट होता है, उसे देखकर आप समझ जाएँगे कि 'खुल जा सिमसिम' मंत्र का उच्चारण करने से इस प्रकार के प्रश्नों का समाधान नहीं हो सकता।

हिंदुत्व कोई सामान्य शब्द नहीं है

हिंदुत्व एक ऐसा शब्द है, जो संपूर्ण मानवजाति के लिए आज भी असामान्य स्फूर्ति तथा चैतन्य का स्रोत बना हुआ है। इसी हिंदुत्व के असंदिग्ध स्वरूप तथा आशय का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास आज हम करने जा रहे हैं। इस शब्द से संबद्ध विचार, महान् ध्येय, रीति–रिवाज तथा भावनाएँ कितनी विविध तथा श्रेष्ठ हैं, कितनी प्रभावी तथा सूक्ष्मतम हैं। जितनी क्रांतिकारी हैं, उतनी ही भ्रांतिकारक भी हैं; परंतु सुस्पष्ट है, इस कारण 'हिंदुत्व' शब्द का विश्लेषण कर उसका स्पष्ट अर्थ ज्ञात करना अत्यधिक कठिन बन जाता है। आज हिंदुत्व की जो स्थिति सामने दिखाई दे रही है, यह स्थिति उत्पन्न होने में कम–से–कम चालीस शतकों से स्मृतिकार, वीरपुरुष और इतिहासकारों ने इस शब्द की परंपरा को अखंडित रखने के लिए किए हुए त्याग और बलिदान का योगदान है। उन्होंने इसके लिए अपना जीवन व्यतीत किया, प्रखर चिंतन किया, युद्ध किए तथा अपने प्राणों की बाजी भी लगा दी। यह सब इसलिए करना पड़ा कि हम लोग कभी आपस में लड़ते हुए, कभी परस्पर सहकार्य करते हुए और कभी एक–दूसरे में पूर्णतः विलीन होकर एकरूप हो गए थे। यह शब्द इस प्रकार लिये गए अनगिनत व्यावसायिक कार्यों की निष्पत्ति है। 'हिंदुत्व' कोई सामान्य शब्द नहीं है। यह एक परंपरा है। एक इतिहास है। यह इतिहास केवल धार्मिक अथवा आध्यात्मिक इतिहास नहीं है। अनेक बार 'हिंदुत्व' शब्द को उसी के समान किसी अन्य शब्द के समतुल्य मानकर बड़ी भूल की जाती है। वैसा यह इतिहास नहीं है।

शेष पृष्ठ 31 पर

हिंदू धर्म से हिंदू की परिभाषा करना अनुचित

हिंदुत्व तथा हिंदू धर्म- ये दोनों ही शब्द हिंदू शब्द से उत्पन्न हुए हैं। अतः उनका अर्थ 'सारी हिंदूजाति' ऐसा ही किया जाना आवश्यक है। हिंदू धर्म की परिभाषा के अनुसार, यदि कोई महत्त्वपूर्ण समाज उसमें सम्मिलित न किया जाता हो अथवा उसे स्वीकारने से हिंदुओं के घटकों को हिंदुत्व से बाहर किया जा रहा हो, तो वह परिभाषा मूलतः ही धिक्कारने योग्य समझी जानी चाहिए। 'हिंदू धर्म' से हिंदू लोगों में प्रचलित विविध धर्ममतों का बोध होता है। हिंदू लोगों के विभिन्न धार्मिक विचार कौन हैं अथवा हिंदू धर्म क्या है, इसे निश्चित रूप से समझने के लिए सर्वप्रथम 'हिंदू' शब्द की परिभाषा निश्चित करना आवश्यक है। जो लोग केवल 'हिंदुओं की पूरी तरह से स्वतंत्र विभिन्न धार्मिक सोच–समझ' इतना ही अर्थ मन में लेकर, 'हिंदू धर्म' शब्द से दर्शाए जाने वाले महत्त्वपूर्ण अर्थ की ओर ध्यान देते हुए हिंदू धर्म के आवश्यक लक्षण निश्चित करने का प्रयास करते हैं, उन्हें इसी बात को लेकर मन में संभ्रम उत्पन्न हो जाता कि किन लक्षणों को आवश्यक माना जाय।

क्योंकि उन्होंने जिन लक्षणों को आवश्यक माना है, उनके सहारे वे सभी हिंदूजातियों का समावेश 'हिंदू' शब्द में नहीं कर सकते। इसके कारण वे क्रोधित होकर, वे जातियाँ 'हिंदू' कभी थीं ही नहीं, ऐसा कहने का दुस्साहस करते हैं, उनकी परिभाषा में इन जातियों का समावेश नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह संकीर्ण है, ऐसा कहना उचित नहीं है। जिन तत्त्वों को हिंदू धर्म कहना चाहिए, ऐसा ये सज्जन समझते हैं, वे तत्त्व इन जातियों द्वारा या तो स्वीकार नहीं किए जाते अथवा वे उनका पालन नहीं करतीं, इसलिए 'हिंदू कौन है'– इस प्रश्न का उत्तर देने का यह तरीका सर्वथा विपरीत है। इसी कारण सिख, जैन, देवसमाजी जैसे अवैदिक मतों का पुरस्कार करने वाले हमारे बांधवों में और प्रगतिक तथा देशप्रेमी आर्यसमाजियों में कुछ कटुता का भाव पैदा हो गया है।

हिंदू किसे कहते हैं?

हिंदू किसे कहना चाहिए? जो हिंदू धर्म के तत्त्वों का पालन करता है उसे ही! अब हिंदू धर्म किसे कहना चाहिए? हिंदू लोग जिन तत्त्वें को मानते हैं– उसे! यह व्याख्या है तो न्यायसंगत, परंतु इसी तरह से बार–बार यही कहन कभी न खत्म होने वाले विवाद का वातावरण बन जाता है। इसी कारण इससे कोई संतोप्रद निर्णय निकलने का संभावना नहीं है। इस प्रकार गलत मार्ग पर चलने वाले हम लोगों के बहुत से मित्रों को यह कहना आवश्यक हो जाता है कि 'हिंदू नाम के कोई लोग विश्व में विद्यमान नहीं है।' जिस महाविद्वान, इंग्लिश व्यक्ति ने 'हिंदूइज्म' शब्द को प्रचलित किया (हिंदू धर्म इस अर्थ में) उसी का अनुकरण करते हुए यदि कोई हिंदी व्यक्ति 'इंग्लिशिज्जम' शब्द का प्रयोग करते हुए इंग्लिश लोगों में रूढ़ ध ार्मिक कल्पनाओं की जड़ों में कुछ एकता की खोज करने का प्रयास करता है तो ज्यू

से जॅकोविनो तक तथा ट्रिनिटी का तत्त्व मानने वाले से उपयुक्तावादियों तक उसे इतने पंथ, उपपंथ, जातियाँ एवं उपजातियाँ दिखाई देंगी कि क्रोध से वह कहेगा, 'इंग्लिश कहलाने वाला कोई भी व्यक्ति इस विश्व में विद्यमान नहीं है!' तथा इस विश्व में हिंदू नामक कोई व्यक्ति नहीं है– ऐसा कहने वाले सज्जन की तुलना में वह कम हास्यास्पद नहीं कहा जाएगा। इस विषय के बारे में कितनी भ्रांतियाँ फैल चुकी हैं तथा हिदुत्व व हिंदू धर्म– इन दो शब्दों का पृथक् विश्लेषण करने में यश प्राप्त न होने के कारण इन भ्रांति पूर्ण विचारों में वृद्धि हुई है। इसका अनुभव करना हो तो 'नटेसन कंपनी' द्वारा प्रकाशित 'Essential of Hinduism' नामक

साभार-सावरकर समग्र

छोटी पुस्तक का अवलोकन करना उचित होगा।

हिंदू धर्म में कई धर्म-पद्धतियों का अंतर्भाव होता है

हिंदू धर्म का अर्थ है– हिंदुओं का धर्म; और जहाँ तक सिंधु शब्द से बने 'हिंदू' शब्द का मूल अर्थ सिंधु से सिंधु तक अर्थात् समुद्र तक फैली हुई इस भूमि में निवास करने वाले लोग– इस प्रकार होता है। इसीलिए जो धर्म अथवा विशेष रूप से जो धर्म प्रारंभ से ही इस भूमि और यहाँ के निवासियों के धर्म हैं वह धर्म अथवा वे सभी धर्म हिंदू धर्म ही हैं। यदि हम लोगों को इन विभिन्न तत्त्वों एवं विचारों को एक ही धर्म–पद्धति में सम्मिलित करना संभव नहीं दिखाई देता तो दूसरा मार्ग भी अपनाया जा सकता है। हिंदू धर्म इस नाम से एक ही धर्म पद्धति अथवा एक ही धर्म मत को बोध होता है–यह न मानते हुए हिंदू धर्म परस्पर मिलते–जुलते अथवा असमान अथवा परस्पर विरोधी भी– ऐसी अनेक धर्म पद्धतियों का समूह है। हिंदू धर्म की निश्चित व्याख्या आप भले न कर सकते हों; लेकिन आप हिंदू राष्ट्र का अस्तित्व नकार नहीं सकते अथवा इससे भी घातक बात कोई हो, तो हमारे वैदिक और अवैदिक बांधवों की भावनाओं को ठेस पहुँचाकर उनमें से कइयों को अहिंदू कहकर दुतकारने का अपवित्र कृत्य भी आप कर नहीं सकेंगे।

वैदिक धर्म को ही हिंदू धर्म मानना एक भूल है

प्रस्तुत प्रबंध की मर्यादाओं का विचार करने पर यह प्रतीत होता है कि हिंदू धर्म के आवश्यक लक्षण कौन से हैं। इसी विषय पर यहाँ समग्र चर्चा अथवा विवेचन करना संभव नहीं है। इससे पूर्व भी हमने कहा है कि 'हिंदू धर्म क्या है?' इस प्रश्न पर वस्तुतः चर्चा करना तब ही संभव होगा जब हिंदुत्व के सभी अभिलक्षणों की निश्चित पहचान हो जाने के पश्चात् ही हिंदू कौन है, इस प्रश्न का अचूक उत्तर देना संभव होगा तथा 'हिंदू कौन है' इस प्रश्न का उत्तर निश्चित रूप से हम दे सकेंगे। हिंदुत्व के प्रमुख अभिलक्षणों का ही विचार यहाँ हमें करना है। अतः हिंदू धर्म के स्वरूप के विषय में किसी भी प्रकार की चर्चा यहाँ नहीं की जाएगी। हमारे इस प्रस्तुत विषय में यदि उसका कुछ संबंध है ऐसा प्रतीत होगा, तब उसी संदर्भ में उसका विचार किया जाएगा। 'हिंदू धर्म' शब्द इतना व्यापक होना चाहिए कि हिंदू लोगों में विद्यमान विभिन्न जातियों तथा उपजातियों के अतिरिक्त, विभिन्न पंथ, मत अथवा धार्मिक विचार जो हैं, उन सभी का अंतर्भाव उसमें किया जा सके। सामान्यतः हिंदू धर्म बहुसंख्यक हिंदू लोगों ने जो धर्म पद्धति स्वीकार कर ली है उसी के लिए प्रयोग किया जाता है। धर्म, देश अथवा जाति को प्राप्त हुआ नाम उस धर्म, देश अथवा जाति के उत्कर्ष के कारण होता है। यह नाम संभाषण के लिए, संदर्भ तथा उल्लेख की दृष्टि से भी अत्यधिक अनुकूल होता है। परंतु यदि इस अनुकूल संबोधन के कारण कोई भ्रामक, हानिकारक या दिशामूल करने वाली बात हो सकती है, तो हमें इस बात के लिए सचेत रहना होगा, क्योंकि इस कारण हम लोगों की विचार–शक्ति ही लुप्त हो जाएगी। हिंदू लोगों में बहुसंख्यक लोग जिस धर्म पद्धति को पूजनीय व शिरोधार्य मनते हैं, उसकी संपूर्ण विशेषता स्पष्ट रूप से दरशाने वाले किसी नाम से उसका उल्लेख करना हो, तो उसे 'श्रुतिस्मृति पुराणोक्त' धर्म अथवा 'सनातन धर्म' यही नाम अधिक उचित होगा अथवा इसे 'वैदिक धर्म' कहने पर भी हमें कोई आपत्ति नहीं होगी। परंतु इन बहुसंख्यक हिंदू लोगों के अतिरिक्त ऐसे अनेक हिंदू भी हैं जिनमें से कुछ अंशतः अथवा पूर्णतः पुराणों को तो कुछ स्मृतियों को और कुछ प्रत्यक्ष ऋषियों को भी नहीं मानते। परंतु यदि बहुसंख्यक हिंदुओं का धर्म ही सभी हिंदुओं का धर्म है, ऐसा मानते हुए यदि उसी को हिंदू धर्म कहना चाहोगे तो हिंदू कहलाने वाले, लेकिन अन्य धार्मिक मतों को मानने वाले बांधवों को ऐसा प्रतीत होना स्वाभाविक है कि बहुसंख्यक लोगों ने हिंदुत्व का अपहरण किया है तथा उन्हें हिंदुत्व से बाहर फेंक देने का उनका यह प्रयास क्रोधकारक तथा अन्यायपूर्ण है। अल्पसंख्यक होने के कारण क्या उनके धर्म का कोई नाम नहीं होगा? परंतु यदि आप लोग इस तथाकथित सनातन धर्म को ही एकमेव हिंदू धर्म कहने लगोगे, तब ऐसा कहना अनिवार्य हो जाएगा कि उन अन्य मतों को धारण करने वाले लोगों के नवमतवादी धर्म को हिंदू धर्म कहना संभव नहीं होगा, इसके बाद वे लोग हिंदू नहीं है, ऐसा कहने का साहस भी करने लगोगे। परंतु पहले में दिए गए तर्कों को नापसंद करते हुए समर्थन देने के अतिरिक्त उनके पास अन्य कोई मार्ग नहीं था और जिन्हें उसे मान्यता देने में कठिनाई लग रही थी, फिर भी उसके अलावा चारा भी नहीं था, उन्हें भी इस निष्कर्ष के कारण धक्का लगेगा। हमारे लाखों सिख, जैन, लिंगायत और अन्य समाज के बंधुओं को, जिनके पूर्वजों की नसों में दस पीढ़ियों पूर्व तक तो हिंदू रक्त ही बहता था, अचानक 'हिंदू' संज्ञा से नाता तोड़ने की नौबत आने के कारण अत्यंत दुःख हुआ, उसमें से कई लोग तो निश्चित रूप से मानते हैं कि जिन रीति–रिवाजों को उन्होंने नवीन मतों के कारण भ्रामक मानकर त्याग दिया था, उनको या तो पुनः स्वीकार करना चाहिए या फिर उनके पूर्वज जिन जातियों में पैदा हुए थे, उन जातियों को सदा के लिए छोड़ देना चाहिए।

सभी हिंदू एक ही ध्वज के नीचे एकत्रित होंगे

यह पराया भाव तथा कटुता उत्पन्न होने का कारण हिंदू धर्म के बहुसंख्यक वैदिक लोगों का धर्म, इस अर्थ से दुरुपयोग किया जाना ही है। सभी हिंदुओं के विविध धर्म– इस अर्थ में इसका प्रयोग किया जाना चाहिए अन्यथा उसका प्रयोग करना बंद किया जाना चाहिए। बहुसंख्यक हिंदुओं के धर्म का निर्देश सनातन धर्म अथवा श्रुतिस्मृति पुराणोक्त धर्म या वैदिक धर्म– इस प्राचीन तथा पहले से स्वीकृत नामों से ही उत्तम प्रकार से किया जाता है। शेष अल्पसंख्यक हिंदुओं के धर्म का निर्देश भी उनके पुराने तथा सर्वमान्य सिख धर्म, आर्य धर्म, जैन धर्म अथवा बौद्ध धर्म आदि नामों से ही भविष्य में किया जाना चाहिए। जिस समय इन सभी धर्मों के एक साथ उल्लेख करने का प्रसंग आएगा तब हिंदू धर्म इस समुच्चयवाचक

शब्द का प्रयोग किया जाना उचित होगा। बिना किसी शंका के इसे इसी रूप में मान लेना किसी प्रकार से हानिकारक नहीं होगा। इससे इसे अधिक संक्षिप्त रूप में कहना संभव होगा तथा किसी प्रकार की गलती होने का कोई कारण भी नहीं रहेगा। इसी से भविष्य में हिंदुओं की अल्पसंख्यक हिंदूजातियों के पंथों में मन में विद्यमान वैर भाव नष्ट होगा। सभी हिंदू लोग अपनी समान जाति तथा समान संस्कृति का एकमेव चिहन रहे पुरातन ध्वज के नीचे पुनः एकत्रित हो जाएँगे।

हिंदूजाति द्वारा निर्मित समान समष्टि (समुदाय)

हिंदुस्थान की विभिन्न जातियों के मनुष्य जाति–संबंध में, धर्म वाड्मय में प्राचीनतम उपलब्ध वाड्मय वेद वाड्मय ही है। सप्तसिंधु का, वैदिक परंपरा का यह राष्ट्र अनेक संघों, समुदायों में विभाजित था। आज जिसे हम लोग अपनी सुविधा के लिए वैदिक धर्म कहते हैं, वह उस समय के बहुसंख्यक लोगों का धर्म तो था पर सिंधुओं की अल्पसंख्यक जातियों को वह धर्म कभी भी मान्य नहीं था। 'पाणी, दास, ब्रात्य' तथा अन्य अनेक लोग इस धर्म से प्रारंभ से ही अलिप्त रहे थे अथवा इस धर्म से बाहर हो गए थे, यह बात बार–बार दिखाई देती है। फिर भी जातीय तथा राष्ट्रीय रूप से हम सभी एक हैं इस बात की उन्हें समझ थी। वैदिक धर्म नाम का एक धर्म उस समय भी अस्तित्व में था परंतु उस समय उसे सिंधु ध ार्म के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं थी। सिंधु धर्म शब्द यदि उसी समय से रूढ़ हो जाय तब उसका अर्थ सप्तसिंधु में प्रचलित सर्व सनातन अथवा तदितर अन्य धर्म पंथय ऐसा ही समुच्चना दर्शक ही होता। नए की समष्टि कर लेने तथा अवांछित को बाहर फेंक देने की रीति के अनुसार सिंधुओं की जाति का हिंदू में तथा सिंधुस्तान का हिंदुस्थान में रूपांतर हो गया। भविष्य में कई बातों की खोज करके, साहसपूर्वक कई बातों के बारे में ज्ञान प्राप्त करके, अणु से लेकर आत्मा तक और परमाणु से लेकर परब्रह्म तक के सूक्ष्म–से सूक्ष्म और विशाल–से–विशाल विश्व की खोजबीन की; साथ ही गूढ़ तत्त्वों के बारे में जानकार और परमोच्च समाधि अवस्था में विहार कर ब्रह्मानंद प्राप्त करके सनातन धर्मियों और अन्य धर्ममतों के शिष्यों ने एक ईश्वरवादी और निरीश्वरवादी दोनों प्रकार के लोगों को समाया जा सके, ऐसी एक विशान समष्टि (Synthesis) का निर्माण किया। अंतिम सत्य की खोज करना यह उसका ध्येय था तथा प्रत्यक्ष अनुभव उसका मार्ग था। यह समष्टि केवल वैदिक अथवा अवैदिक नहीं थी, परंतु दोनों ही थी। प्रत्यक्ष धर्म का अचूक शास्त्र यही था। वैदिक, सनातनी, जैन, बौद्ध, सिख अथवा देवसमाजी आदि सभी धर्ममतों के सूक्ष्म साक्षात्कार का निष्कर्ष है; उस निष्कर्ष का भी निष्कर्ष है वास्तविक हिंदू धर्म। सप्तसिंधु की भूमि में अथवा वैदिककालीन हिंदुस्थान के अन्य क्षेत्रों की अज्ञात जातियों में जो वैदिक अथवा अवैदिक धर्ममत थे, उन्हीं से साक्षात् निर्माण हुए अथवा उन धर्ममतों में परिवर्तन होकर जिन पंथों का उदय हुआ, वे सभी पंथ हिंदू धर्म के नाम से ही ज्ञात हैं। हिंदू धर्म से अलग न किए जाने वाले वे हिंदू धर्म के अविभाज्य अंग ही हैं।

लोकमान्य तिलक द्वारा की गई हिंदू धर्म की परिभाषा

अतः वैदिक अथवा सनातन धर्म– यह हिंदू धर्म का केवल एक पंथ है, भले ही उस धर्म को मानने वाला बहुसंख्य समाज क्यों न हो। 'प्रामाण्यबुद्धिर्वेदेषु। साध ानानामनिकता। उपास्यानामयिमः। एतद ध ार्मस्य लक्षणम' अनुष्टुप छंद में रचित सनातन धर्म की यह परिभाषा कै. लोकमान्य तिलक की बनाई हुई है। चित्रमयजगत् इस मासिक मराठी पत्रिका में एक विद्वत्ताप्रचुर लेख , जिसमें उनकी बुद्धिमत्ता तथा गंभीर ज्ञान की झलक दिखाई देती थी, उसमें से कुछ अपवाद के परिभाषा का स्पष्ट अर्थ समझाते हुए लोकमान्य ने सूचित किया था कि सामान्यतः जिसे हिंदू धर्म कहते हैं, उसी का विचार करने का उनका उद्देश्य था। हिंदुत्व का विचार उन्होंने किया ही नहीं था। इसी के साथ उन्होंने यह भी मान्य किया था कि इस परिभाषा में वास्तविक रूप में जातीय दृष्टि से तथा राष्ट्रीय दृष्टि से आर्यसमाजी जैसे कट्टर हिंदुओं का अथवा उसी प्रकार के अन्य पंथों का समावेश नहीं किया जा सकता। यह परिभाषा अपने आप में सर्वोत्तम तो है पर सत्य की कसौटी पर हिंदू धर्म की परिभाषा नहीं बन सकती। 'हिंदुत्व की तो कभी भी नहीं! सनातन अथवा श्रुतिस्मृति, पुराणों का धर्म हिंदू धर्म में सम्मिलित अन्य धर्मों की अपेक्षा अत्यधिक लोकप्रिय हुआ तथा जिसे हिंदू धर्म मानने की अयथार्थ प्रथा बन गई, उस सनातन धर्म के लिए यह परिभाषा उचित है।

हिंदू संस्कृति की चिरस्थायी छाप

शब्द व्युत्पत्ति से और वास्तविक परिस्थिति पर ध्यान देते हुए तथा धार्मिक अंगों का विचार करने पर प्रतीत होता है कि हिंदू धर्म हिंदुओं का ही धर्म होने के कारण हिंदुओं की जो प्रमुख विशेषताएँ हैं; वे सभी इस धर्म में दिखाई देनी आवश्यक हैं। हम लोग देख चुके हैं कि हिंदुओं का प्रथम तथा सर्व प्रमुख अभिलक्षण है सिंधु से सागर तक फैली हुई इस भूमि को को अपनी पितृभूमि तथा मातृभूमि मानना। जिन वैदिक अथवा अवैदिक धर्ममतों अथवा पंथों को हम लोग हिंदू धर्म कहते हैं, वे सभी धर्म वास्तविक अर्थ में उन धर्मों अथवा पंथों के विचारों के तत्त्वज्ञान की आपूर्ति करने वाले अथवा जिन्हें उस धर्म का प्रत्यक्ष ज्ञान हुआ अथवा वह ज्ञान जिन्हें दिखाई दिया, उन द्रष्टा लोगों के समान इसी भूमि में उपजे हैं। सर्व पंथों तथा मतों का जिसमें समावेश किया जाता है उस हिंदू धर्म का आविष्कार प्रथम सिंधुस्थान में हुआ। लौकिक अर्थ में सिंधुस्थान उसकी जन्मभूमि है। गंगा विष्णु के पदकमलों से निकलती है, परंतु अत्यंत धर्मश्रद्ध व्यक्ति अथवा किसी गूढ़वादी महात्माओं को भी मनुष्य के स्तर पर विचार करने पर प्रतीत होता है कि वह हिमालय की कन्या है। इसी के समान धार्मिक दृष्टि से जिसे हिंदू धर्म का संबोधन दिया गया है, उस तत्त्वज्ञान की यह भूमि जन्मभूमि है, अतः यह मातृभूमि तथा पुण्यभूमि है। हिंदुत्व का दूसरा महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण है हिंदू हिंदू माँ –बाप का वंशज होना। प्राचीन सिंधुओं का व उनसे जो जाति

उपजी है उस जाति का रक्त उसकी नसों में प्रवाहित होने की बात हर हिंदू अभिमानपूर्वक जानता है। यह अभिलक्षण हिंदुओं के विभिन्न धर्ममतों तथा पंथों के लिए भी सही प्रतीत होता है। ये धर्मतत्त्व हिंदू धर्म के द्रष्टाओं को दिखाई दिए हुए अथवा उन्होंने ही प्रस्थापित किए हुए तत्त्व हैं। जो अच्छा है, उसे अपने में सम्मिलित करके जो बुरा है, उसे बाहर फेंकने की क्रिया के अनुसार वे धर्म पंथ अथवा धर्म मत, नैतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से सप्तसिंधुओं ने जो वैचारिक प्रगति की, उसी से उपजे हैं— ऐसा प्रतीत होता है। हिंदू धर्म केवल हिंदुओं की प्राकृतिक स्थिति से अथवा विचार परंपरा से परिणत नहीं हुआ है। वह हिंदू संस्कृति का भी ऋणी है। वैदिक काल के प्रसंग हों अथवा बौद्ध या जैनों के इतिहास के प्रसंग हों, इतना ही नहीं— चैतन्य, चक्रधर, बसव, नानक, दयानंद या राजाराममोहन जैसे आधुनिक लोगों से संबंधित प्रसंग हों, वे जिस परिवेश में घटे हैं, उस पर तथा हिंदू धर्म की उत्कट अनुभूति के शब्द रूप दिलने वाली भाषा पर और हिंदू धर्म के पुराणों पर, कल्पनाओं पर तत्त्वज्ञान पर हिंदू संस्कृति ने अपनी अमिट छाप छेड़ी है। इस प्रकार जिसके कई पंथ और उपपंथ, भिन्न मत प्रवाह हैं, वह हिंदू धर्म हिंदू संस्कृति के परिवेश में ही पला –बढ़ा है और विकसित होकर अपना अस्तित्व बनाए रखता है। हिंदुओं का धर्म हिंदुओं की इस भूमि से इतना जुड़ा है, इसी कारण यह भूमि उसे अपनी पितृभूमि तथा पुण्यभूमि की लगती है।

ऋषि-मुनियों और साधु पुरुषों की कर्मभूमि

सिंधु से सागर तक फैली हुई यह भारतभूमि, यह सिंधुस्थान हम लोगों की पुण्यभूमि ही है। क्योंकि हम लोगों के धर्म संस्थापकों को तथा वेदों (ज्ञान) की रचना करने वाले द्रष्टाओं को अर्थात् ऋषियों को –वैदिक ऋषि मुनियों से लेकर महर्षि दयानंद तक, जैन मुनियों से लेकर महावीर तक, बौद्ध भगवान् से लेकर बसवेश्वर तक, चक्रधर से लेकर चैतन्य तक तथा रामदास से लेकर राममोहन राय तक–साधु–संतों तथा गुरुओं को इस भूमि ने जन्म दिया तथा उन्हें पाल–पोसकर बड़ा किया। इसके मार्गों पर फैली हुई प्रत्येक धूली में से हमारे महात्माओं तथा वंदनीय गुरुओं के पद आज भी हम लोगों के कानों में गूँजते हैं। यहाँ कि नदियाँ परम पवित्र हैं। उनके तटों पर निर्मल और अपवित्र उद्यान खिल रहे हैं। चाँदनी रात में अधिक रमणीय बने इन नदियों के तट पर अथवा इन्हीं उद्यानों और उपवनों के वृक्षों की छाया में बैठकर किसी बौद्ध ने अथवा किसी शंकराचार्य ने जीवन, जीव, जगदीश, आत्मा, मानव, ब्रह्मा व माया आदि गहन तत्त्वों पर चिंतन तथा चर्चा की होगी। यहाँ दिखाई देने वाली प्रत्येक गुफा और गिरि–पर्वत किसी कपिल अथवा व्यास या किसी शंकराचार्य अथवा किसी रामदास की स्मृति हम लोगों की आँखों के सामने साकार कर देती है। यहाँ भगीरथ ने राज किया। यहाँ कुरुक्षेत्र है। रामचंद्र ने वनवास गमन के समय प्रथम विराम यहीं किसी जगह किया था। वहाँ जानकी को सुवर्ण मृग के दर्शन हुए तथा उसे प्राप्त करने हेतु उसने आर्यपुत्र से प्रेमपूर्वक हठ किया। इस स्थान पर गोकुल के उस दिव्य गोपाल ने अपनी मुरली बजाई। गोकुल में निवास करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का ह्रदय मोहित होकर उस मुरली की धुन पर नाच उठा।

हुतात्माओं की वीरभूमि तथा यक्षभूमि

इस स्थान पर स्थित बोधिवृक्ष के नीचे एक मृगोद्यान में महावीर मुक्ति प्राप्त करने हेतु गए थे। यहीं भक्तगणों के समुदाय में गुरु नानक ने 'गगन थाल रविचंद्र दीपक बने' यह भजन गाया। यहीं पर गोपीचंद ने जोगी बनने के लिए दीक्षा ग्रहण की, वह मुट्ठी भर भिक्ष माँगते हुए 'अलख' कहकर अपनी बहन के द्वार पर उपस्थित हुआ। इसी स्थान पर बंदा बहादुर के पुत्र को पिता समक्ष टुकड़ों–टुकड़ों में काटकर मार डाला गया तथा उस बालक का रक्तरंजित ह्रदय, हिंदू होने के अपराध में उसके पिता के मुँह में जबरदस्ती ठूँस दिया गया। हे मातृभूमि! तुम्हरी भूमि का हर कण वीर मृत्यु से पावन बना हुआ है। यहाँ कृष्णसार जाति के मृग विद्यमान हैं। कश्मीर से सिंहलद्वीप तक यह भूमि ज्ञानयज्ञ अथवा आत्मयज्ञ से परम पवित्र हो गई है। यह वास्तविकतः 'यज्ञीय' भूमि है। अतः संतलों से लेकर साधु तक के सभी हिंदुओं को यह भारतभूमि, यह सिंधुस्थान अपनी पितृभूमि तथा मातृभूमि प्रतीत होती है।

ईसाई अथवा बोहरी अथवा मुसलमान हिंदू नहीं होते

हमारे कुछ मुसलमान अथवा ईसाई देश–बांधवों को पूर्व में जबरदस्ती अहिंदू धर्म को स्वीकार करने को बाध्य किया गया था। इसी कारण अन्य हिंदुओं के समान पितृभूमि, भाषा, निर्बंध–विधान, रीति–रिवाज, प्रचलित आख्यारिका तथा इतिहास –इन सभी से बनने वाली समान संस्कृति का अधिकांश उत्तराधिकार इन्हें प्राप्त हुआ है, परंतु तब भी इन्हें हिंदू मानना संभव नहीं है। हिंदुस्थान उनकी पितृभूमि हो सकती है, परंतु उनकी पुण्यभूमि कभी नहीं बन सकती। उनकी पुण्यभूमि कहीं सुदूर अरबस्थान अथवा फिलिस्तीन में होती है। उनकी पौराणिक कथाएँ तथा उनके संत, सत्पुरुष, उनके धार्मिक विचार, उनके अवतारी ईश्वर आदि इस भूमि में उत्पन्न नहीं हुए हैं। और इस कारण उनकी आकांक्षाएँ, उनके नाम आदि में एक परायेपन की झलक दिखाई देती है। इस भूमि से वे संपूर्णतः प्रेम नहीं करते। यदि उनमें से कुछ लोग सदैव घमंड भरी बात करते हैं, और उन्हें ये अपनी बढ़ाइयाँ सत्य प्रतीत होती हों, तब तो उनका कुछ विचार भी न करना ही उचित होगा। पितृभूमि का विचार तो वे उसके बाद करते हैं। इस पर हमें कुछ दुःख नहीं होता अथवा इसलिए हम उनका धिक्कार नहीं करते। हमने केवल वस्तुस्थिति का ही वर्णन किया है। हमने अभी तक हिंदुत्व के जो अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण निश्चित करने का प्रयास किया है, तब हमें यह प्रतीत हुआ कि बोहरी तथा कुछ अन्य मुसलमानों में हिंदुत्व के एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण के सिवाय अन्य सभी अभिलक्षण दिखाई देते हैं। उनका हिंदुस्थान को अपनी पुण्यभूमि के रूप में न स्वीकारना, यही वह अभिलक्षण है।

परधर्म अपनाए हुए बांधवो! पुनः हिंदू धर्म को स्वीकार करो

ईश्वर, आत्मा, मानव संबंधी कुछ नई खोज का निर्देश करने वाले किसकी विशिष्ट धर्मपंथ को स्वीकार करने वाले किसी भी व्यक्ति के विषय में अभी हम बात नहीं कर रहे हैं, क्योंकि हमें विश्वासपूर्वक ऐसा लगता है कि हिंदू तत्त्वज्ञान में (यहाँ हमें किसी विशिष्ट धर्ममत के विषय में कुछ कहना नहीं है) अज्ञेय के संबंध में नहीं परंतु आज तक जो किसी को ज्ञात नहीं हो सका है, उस संबंध में तथा 'तत!' एवं 'त्वम्' में विद्यमान परस्पर संबंधों के विषय पर जितना विचार करना संभव है या मानवी बुद्धि के लिए संभव हो सकता है, उतना सर्व विचार किया जा चुका है। 'आप कौन हो? अद्वैती एकेश्वरवादी, सर्वेश्वरवादी अथवा निरपेक्षवादी या अज्ञेयवादी? यहाँ का अनंत अवकाश अभी रिक्त है। हे आत्माराम! तुम कोई भी हो सकते हो। परंतु किसी व्यक्ति विशेष पर नहीं, बल्कि सत्य के विस्तृत तथा शाश्वत आधार पर खड़े इस परम पवित्र और महान् मंदिर में विश्व प्रेम पाने व जिससे अपार शांति प्राप्त होगी, ऐसा परमोच्च विकास करने का पूरा अवसर तुम्हें प्राप्त है। इस स्फटिक समान शुद्ध गंगाप्रवाह के तट पर खड़े होकर भी तुम अपने छोटे पात्र में पानी भरने के लिए दूर–दूर तक के सरोवरों पर क्यों जा रहे हो? तलवार के एक ही प्रहार से क्रूरतापूर्वक जिन्हें मार डाला गया है तथा इस कारण जो तुमसे सदा के लिए दूर हो गए हैं, उस परिचित दृश्यों तथा प्रतिबंधों के स्मृतियों से व्याकुल होकर, हे बंधो, तुम्हारी नसों में बहने वाला पूर्वजों का रक्त क्यों आक्रोश नहीं करता? बंधो! पुनश्च हम लोगों में लौट आओ। ये तुम्हारे बंधु और भगिनी, अपने ही रक्त के परंतु भटके हुए तुम्हारे जैसे व्यक्ति का स्वागत करने के लिए महाद्वार पर अपनी बाँहें फैलाकर खड़े हैं। जिस भूमि पर, महाकाल मंदिर की सीढ़ी पर खड़े होकर चार्वाक ने भी अपने नास्तिकवाद का उपदेश किया था, उस भूमि के अतिरिक्त तुम्हें स्वतंत्र धार्मिक विचार करने की छूट कहाँ प्राप्त हो सकेगी? जिस हिंदू समाज में उड़ीसा के पट्टण से लेकर काशी के पंडित तक तथा संताल से साधू तक प्रत्येक व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की समाज रचना–निर्माण करने का तथा उसका विकास करने का अवसर प्राप्त होता है; उस हिंदू समाज के अतिरिक्त इतनी सामाजिक स्वतंत्रता तुम्हें कहाँ प्राप्त हो सकती है? यही सत्य है कि 'यदिहास्ति न सर्वत्र यन्नेहास्ति न कुत्रचित्! विश्व में प्राप्त होने वाली सभी चीजें यहाँ विद्यमान हैं और यदि कोई चीज यहाँ प्राप्त करना संभव नहीं है तो वह तीनों खंड़ों में भी नहीं होगी। इसलिए हे बांधव! एक जाति, एक रक्त, एक संस्कृति तथा एक राष्ट्रीयत्व–ये हिंदुत्व के सभी अभिलक्षण तुम्हारे पास हैं। अत्याचार के शिकंजे में जकड़कर तुम्हें पूर्वजों की छत्रच्छाया से बलपूर्वक निकाला गया था। इसी कारण आगे चलकर, तुम अपनी मातृभूमि को अपना प्रेम अर्पण करो। उसे अपनी पितृभूमि ही नहीं, पुण्यभूमि भी समझने लगो। यह हिंदूजाति तुम्हें भी अपना लेगी!

जो हमारे देशबंधु हैं तथा रक्त के नाते हमारे पुराने भाई हैं, उन बोहरी, खोजी, मेमन और अन्य मुसलमानों तथा ईसाइयों को इस उदार अवसर का लाभ अब उठाना चाहिए। अर्थात् यह सब शुद्ध प्रेम की भूमिका के अनुसार ही किया जाना चाहिए। परंतु जब तक वे लोग इस प्रकार विचार नहीं करेंगे, तब तक उन्हें हिंदू नहीं कहा जा सकता। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि हिंदुत्व शब्द का जो कुछ प्रत्यक्ष अर्थ हम करते हैं उसी के अनुसार हम हिंदुत्व के आवश्यक अंगों का विचार तथा विश्लेषण कर रहे हैं। हम लोगों के पूर्वग्रहों को अथवा हमारे द्वारा स्वीकार किए हुए अर्थ को हमें खींचतान करते हुए प्रयोग करना न्याय नहीं होगा।

यही हिंदू धर्म की योग्य तथा संक्षिप्त परिभाषा है

अब तक के विवेचन का संक्षिप्त निष्कर्ष यह है कि हिंदू वही होते हैं, जो सिंधु से सागर तक फैली हुई इस भूमि के अपनी पितृभूमि मानता है। इसी प्रकार वैदिक सप्तसिंधु के प्रदेश में जिस जाति का प्रारंभ होने का प्रथम तथा स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध है तथा जिस जाति ने नए–नए प्रदेशों पर अधिकार करते हुए लोगों को स्वीकार किया और उन्हें अपना लिया, अपनों में समाविष्ट कर लिया और उन्हें परमोच्च अवस्था पर पहुँचाया, उस जाति का रक्त हिंदू नाम के लिए योग्य कहलाने वाले मनुष्यों के शरीर में होता है। समान इतिहास, समान वाड्मय, समान कला, एक ही निर्बंध विधान, एक ही धर्मव्यवहार शास्त्र, मिले–जुले महोत्सव तथा यात्राएँ, मिली–जुली धार्मिक आचार विधि, त्योहार तथा संस्कार आदि विशिष्ट गुणों से ज्ञात हिंदुओं की संस्कृति का परंपरागत उत्तराधिकार उसे प्राप्त होता है। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है उसके पूजनीय ऋषि–मुनि, संत–महंत, गुरु तथा अवतारी पुरुष, जहाँ जनमे हैं तथा जहाँ उनके पुण्यकारक यात्रास्थल हैं वह आसिंधु, सिंधु भारत जिसकी पितृभूमि व पुण्यभूमि है, वही हिंदू है! यही हिंदुत्व के आवश्यक अभिलक्षण हैं। समान राष्ट्र, समान जाति, समान संस्कृति–इन अभिलक्षणों को सारांश में इस प्रकार दरशाया जा सकता है। हिंदू वही है जो इस भूमि को केवल अपनी पितृभूमि ही नहीं मानता। इसे वह अपनी पुण्यभूमि भी मानता है। हिंदुत्व के प्रथम दो प्रमुख लक्षण हैं– राष्ट्र तथा जाति। पितृभूमि शब्द से स्पष्ट दिखाई देता है तथा हिंदुत्त्व का तीसरा लक्षण हैं– संस्कृति; उसका बोध पुण्यभूमि शब्द से होता है, क्योंकि संस्कृति में ही ध ार्मिक आचार, रीति–रिवाज तथा संस्कार आदि का अंतर्भाव होता है। इसी कारण यह भूमि हम लोगों की पुण्यभूमि बन जाती है। हिंदुत्व की यही परिभाषा अधिक संक्षिप्त करने हेतु उसे अनुष्टुप में ग्रथित करने का हमने प्रयास किया तो वह अनुचित नहीं होगा, ऐसा हमें विश्वास है–

आसिंधुसिंधुपर्यंता यस्य भारतभूमिका।
पितृभूः पुण्यभूमिश्चैव स वै
हिंदूरितिस्मृतः।।

सिंधु (ब्रह्मपुत्र नदी को भी उसकी उपनदियों के साथ सिंधु कहते हैं।) से सिंधु (सागर) तक फैली हुई यह भारतभूमि, जिसकी पितृभूमि (पूर्वजों की भूमि है' तथा पुण्यभूमि, कर्म के साथ संस्कृति की भूमि) है–वही हिंदू है!

हमारी राष्ट्रभाषा संस्कृतनिष्ठ हिंदी

साभार-सावरकर समग्र

हिंदुस्थानी नहीं तथा उर्दू तो कदापि नहीं

एकता के इच्छुक लोगों ने पीछे हटने के कई प्रयास किए, तब भी मुसलमानों को संतुष्ट करना असंभव प्रतीत होता है। अतः राष्ट्रीय लिपि की समस्या का समाधान प्राप्त करने का इष्टतम मार्ग यही है कि स्पष्ट रूप से तथा निडर होकर प्रत्येक हिंदू को निम्न प्रतिज्ञा करना आवश्यक है–

'हम हिंदू लोगों को राष्ट्रभाषा संस्कृतनिष्ठ हिंदी ही है तथा संस्कृतनिष्ठ नागरी लिपि ही हम हिंदुओं की राष्ट्र लिपि है।' हिंदुस्थान की राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को स्थापित करने का आंदोलन जब से प्रारंभ हुआ है और सारे हिंदुस्थान के हिंदुओं में इसका विस्तार हुआ है, तब से भारत के मुसलमानों ने इस आंदोलन को अयशस्वी किए जाने हेतु प्रयास प्रारंभ किए हैं। उनका उद्देश्य यही है कि सात करोड़ मुसलमानों के लिए तेईस करोड़ हिंदुओं को उर्दू को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए। हिंदी की तुलना में उर्दू श्रेष्ठ है इस कारण– परंतु इसमें कोई तथ्य नहीं है। उर्दू अपनी दरिद्रता अरबी के आधार पर दूर करना चाहती है। यह इस कारण भी नहीं कहा जा रहा है कि हिंदी भाषा के लिए शब्दों का असीम भंडार जो संस्कृत भाषा है उससे अधिक संपन्न अथवा उसके तुल्य बल अरबी भाषा है। किसी रानी ने संपन्नता क्या किसी भिक्षा–जीवी स्त्री के पास हो सकती है? हिंदी के कुछ विशिष्ट गुण उर्दू में विद्यमान हैं यह भी इसका कारण नहीं है। केवल इसलिए कि उर्दू अल्पसंख्यक मुसलमानों की प्रिय भाषा है। इस एक ही कारण से तेईस करोड़ हिंदू बहुसंख्यक राष्ट्र को उर्दू से श्रेष्ठ होते हुए भी हिंदी के स्थान पर उर्दू को ही राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारना चाहिए ऐसा मुसलमानों का हठ है। यह हठ हम लोगों ने यदि न मान लिया तब? हम लोग हिंदी अथवा अन्य किसी भी भाषा को राष्ट्रभाषा नहीं बनने देंगे। हम लोगों के परिवारों में कई प्रांतों में हिंदी को मातृभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसे भुलाकर, बदलकर उर्दू को यह स्थान देंगे। नागरी लिपि का उपयोग करना पाप समझा जाएगा, इसके अतिरिक्त जिस किसी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दी जाएगी, उसके साथ किसी भी रूप में हिंदी नाम का प्रयोग नहीं करने दिया जाएगा। राष्ट्रभाषा का अभिधान उर्दू ही होना चाहिए। प्रारंभ से ही संपूर्ण मुसलमान समाज की यह माँग है।

समझौता

हम हिंदुओं में एक वर्ग कहता है कि किसी भी राष्ट्रीय आंदोलन में जब तक कोई मुसलमान सहभागी नहीं होगा या उसे जबरन कहीं से लेकर वहाँ बैठाया नहीं जाता तब तक उस आंदोलन को राष्ट्रीय आंदोलन कहना उचित नहीं है। इस प्रकार उनकी एक विचित्र मानसिकता होती है। जब उन्हें इस बात का पता चला कि हिंदी को राष्ट्रभाषा तथा नागरी को राष्ट्र लिपि करने पर मुसलमानों का घोर विरोध है तब वे बहुत बेचैन हो गए। हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त करने के कार्य में इनमें से बहुत से लोगों ने पर्याप्त कष्ट उठाए हैं। इस वर्ग के नेता हैं– महात्मा गांधीजी– इस बात का उल्लेख न करते हुए भी यह स्पष्ट समझ में आनेवाली बात है। जिन लोगों ने हिंदी तथा नागरी का प्रचार करने हेतु कार्य किया है उन राष्ट्रभक्त महोदयों में गांधीजी का कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण है। परंतु राष्ट्रीयता के विषय पर उनकी इस प्रकार की विक्षिप्त धारणा है। इसीलिए जो राष्ट्र के हित में है उसे ही राष्ट्रीय कहा जाना चाहिए, इसकी उन्हें कल्पना तक नहीं है ऐसा प्रतीत होता है। अल्पसंख्यक मुसलमानों का जो भी मूर्खतापूर्ण हठ होगा, उसे पूरा करके उनकी हाँ जी–हाँ जी करना वे आवश्यक मानते हैं। ऐसा किए बिना उन्हें चैन नहीं आता। उन्होंने हिंदी के इस प्रश्न पर मुसलमानों को प्रसन्न करने के निरर्थक प्रयास करना जारी रखा तथा मुसलमानों के इस पागल धर्महठ के लिए एक पर्यायी समझौते की बात स्वयं होकर प्रस्तुत की।

एकता लंपट वर्ग

वास्तविकतः जिन दो पक्षों को किसी प्रकार का कार्य करने में सहयोग देना मान्य होता है उनमें समझौते का प्रश्न उठता है। कुछ हम छोड़ देते हैं कुछ आप भी छोड़िए–इस प्रकार से कुछ का त्याग कर जोड़ने को ही समझौता कहा जाता है। इस स्थिति में उर्दू को ही राष्ट्रभाषा तथा उर्दू को ही राष्ट्रलिपि के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए ऐसी उनकी धारणा है। इसे ही वो लोग समझौता मानते हैं। इस बात का ध्यान न रखते हुए हिंदुओं के लिए अनिष्ट प्रतीत होने वाला एक समझौता गांधीजी आदि लोगों ने हिंदी साहित्य सम्मेलन के समय प्रस्तुत किया। मुसलमानों ने इसे अस्वीकार कर दिया। परंतु इसे दोनों पक्षों द्वारा स्वीकारा गया है ऐसा भ्रम पालकर हिंदी को तोड़ने–मरोड़ने का कार्य एकता लंपट लोगों द्वारा अत्यधिक श्रद्धा तथा उत्साहपूर्वक प्रारंभ किया गया। इस कारण हिंदी के अभिमानी लोगों के मन में क्रोध उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था। राष्ट्रीय भाषा का प्रश्न प्रत्येक प्रांत के लोगों के लिए अंतःकरण के निकट का प्रश्न है। यदि इसमें कुछ अवांछित बात हो जाती है तो इसके अच्छे–बुरे परिणाम प्रत्येक प्रांतीय भाषा व संस्कृति को भुगतने पड़ेंगे। इसलिए महाराष्ट्र की जनता को भी इस बात से अवगत कराना आवश्यक प्रतीत होता है कि किस प्रकार

हिंदी को विकृत रूप देते हुए हिंदुओं की भाषा पर मुसलमान संस्कृति को आरूढ़ करवाने का प्रयास एकता लंपट कर रहे हैं। इस प्रकार के विकास का स्वरूप भी जान लेना उनके लिए आवश्यक है।

अच्छा होगा यदि हिंदी न कहते हुए हिंदुस्थानी कहा जाएगा

एक ही राष्ट्रभाषा हो–ऐसा मानकर मुसलमानों को इस बात पर सहमत करने के लिए जो समझौता गांधीजी आदि लोगों ने प्रस्तुत किया था तथा जिसे मुसलमानों द्वारा अस्वीकार किया गया, परंतु उन्होंने इसे स्वीकारा है– इस भोली धारणा से जिस प्रकार हिंदी का विकृतीकरण किया जा रहा है वह समझौता कुछ इस प्रकार का है– यदि मुसलमान किसी भी स्थिति में नागरी लिपि को मान्यता देने के पक्ष में नहीं हैं तो इस विषय में अधिक आग्रह न करते हुए लिपि की बात छोड़ देनी चाहिए। हिंदी राष्ट्रभाषा के लिए हिंदुओं को नागरी लिपि का उपयोग करना चाहिए तथा मुसलमानों को इसके लिए अलिफ में उर्दू का प्रयोग करना चाहिए तथा इन दोनों लिपियों को राष्ट्रीय कहन चहिए। सभी शासकीय लेखन इन दोनों लिपियों में प्रकाशित किया जाना आवश्यक है। इससे अधिक क्षतिपूर्ण बात तो यह है कि हिंदी भाषा से संस्कृत संपन्नता एवं संस्कृतनिष्ठा की जो दुर्गंध मुसलमानों को विचलित करती है उसे कम करना चाहिए। अतः हिंदी भाषा में संस्कृतजन्य शब्दों के साथ अन्य लाखों अरबी, फारसी आदि उर्दू शब्दों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा तीसरा सुझाव यह है कि हिंदी का नाम परिवर्तित कर उसे हिंदुस्थानी अभिधान देना चाहिए।

इस समझौते से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि किसी को पीछे हटना पड़ा है, तो वह हिंदुओं को हिंदी का विकृतीकरण करना ही होगा तथा केवल हिंदुओं को ही पीछे हटना पड़ रहा है। समझौते का अर्थ होता है दोनों पक्षों द्वारा कुछ पाना या कुछ खोना। इस दृष्टि से मुसलमानों ने पीछे हटना स्वीकारा नहीं है। मुसलमानों द्वारा हिंदी के विकृत स्वरूप के लिए प्रतिमूल्य के रूप में कोई उपकार यदि हम लोगों पर किए जाने की अपेक्षा हिंदुओं ने रखी है, तो वह केवल इतनी ही है कि 'हिंदी अर्थात् हिंदुस्थानी' को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता देना। परंतु क्या मुसलमानों द्वारा यह अपेक्षा पूरी की जाएगी? कदापि नहीं, इस बात का विश्लेषण कुछ इस प्रकार किया जा सकता है।

नाम में भी उर्दू शब्द

मुसलमानों को हिंदी नाम से बहुत समय से घृणा है इसलिए हम लोगों के भोले–भाले लोगों ने हिंदी नाम परिवर्तित

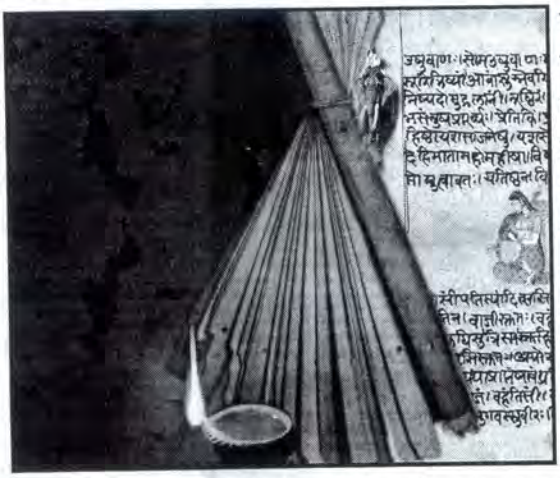

कर उसे समझौता करने हेतु 'हिंदी याने हिंदुस्थानी' का अभिधान दिया। हिंदी अर्थात् हिंदुस्थानी हिंदी अथवा हिंदुस्थानी ऐसा नाम नहीं दिया गया है। यह 'याने' किस चीज को कहते हैं, यह महाराष्ट्र के अथवा मद्रास के लाखों 'हिंदुओं' को तथा लक्षावधि मुसलमानों को ज्ञात नहीं है, परंतु प्रत्येक शब्द समुच्चय में सभी शब्द संकृतोत्पन्न नहीं होने चाहिए क्योंकि इस कारण राष्ट्रभाषा अराष्ट्रभाषा बन जाएगी। प्रत्येक शब्द समुच्चय में कम–से –कम एक विदेशी उर्दू शब्द का होना आवश्यक है। अतः 'याने' यह उर्दू शब्द यहाँ रखा गया है। 'याने' इस उर्दू शब्द का अर्थ है किंवा या अर्थात्। जिन मुसलमानों की मातृभाषा मुगलों के समय से ही हिंदी ही है वे हिंदी को उर्दू लिपि में लिखकर उसे 'हिंदुस्थानी' नाम से, जो स्वयं दिया हुआ अभिधान है, ही जानते हैं। इस कारण 'हिंदी माने हिंदुस्थानी' ऐसा हिंदू–मुस्लिम नाम प्रमाणित होता है, ऐसी धारणा कुछ एकता लंपट लोगों ने कर ली तथा हिंदी का नया नामकरण किया। वे मन ही मन कहने लगे कि अब राष्ट्रभाषा की समस्या का समाधान हो चुका है।

देश का नाम भी परिवर्तित कीजिए

यह प्रश्न केवल नाम से ही संबंधित है यह उनकी समझ में आ जाएगा। उर्दू लिपि में छपने वाले हिंदी के लिए 'हिंदुस्थानी' वह नाम मुसलमानों द्वारा प्रयोग किया जाता है। परंतु इस समय 'पैन इस्लामिज्म' का भूत का संचार होने के कारण उन मुसलमानों को पहले उनके ही द्वारा दिया गया हिंदुस्थानी नाम भी असह्य लगने लगा है। यह बात एकता लंपट वर्ग भूल गया। हिंदी के समान हिंदुस्थानी शब्द से भी हिंदुत्व की दुर्गंध निकलती है ऐसा इस समय मुसलमान कहने लगे हैं। भाषा के अतिरिक्त हिंदुस्थान नाम से इस देश को भी संबोधित करना वे अब नहीं चाहते। उन्होंने यह वाद प्रारंभ किया है तथा उनका यह स्पष्ट प्रस्ताव है कि हिंदुस्थान नाम भी एकता का विघातक होने के कारण उसके स्थान पर पावन नाम 'पाकस्थान' दिया जाना चाहिए। उर्दू भाषा में पाक शब्द का अर्थ है मुस्लिम धर्मानुसार शुद्ध– नापाक अर्थात् मुस्लिम धर्मानुसार निषिद्ध अर्थात् अशुद्ध। जिस देश में मुसलमानों को श्रेष्ठ माना जाता है उसे पाकस्थान कहा जाता है। हिंदुस्थान नाम हिंदुत्व की श्रेष्ठता का प्रतीक है। अतः हिंदुस्थान को 'पाकस्थान' कहा जाना चाहिए। उर्दू साहित्स से पूर्णतः अनभिज्ञ महाराष्ट्र के लोगों को कदाचित् लगेगा कि ऊपर निर्दिष्ट विचारधारा विडंबनार्थ अथवा विपर्यस्त है। परंतु यह संपूर्ण सत्य है। आगाखा, इकबाल जैसे महान् मुसलमानों द्वारा तथा लाहौर–लखनऊ के एक पैसे के समाचार पत्रों में हिंदुस्थान शब्द पर किए गई इस आक्षेप को स्पष्ट रूप से तथा कटु शब्दों में प्रसृत किया जा रहा है। पंजाब, कश्मीर, सिंध, सरसीमा को आज 'पाकस्थान' अर्थात् मुस्लिम श्रेष्ठता का देश–यह नाम देना चाहिए, ऐसी माँग वे लगातर उठा रहे हैं। इस प्रकार की मानसिक अवस्था के कारण मुसलमानों को हिंदी नाम जितना अप्रिय है उतना ही अप्रिय है

हिंदुस्थान–यह अभिधान भी। अतः राष्ट्रभाषा एक ही हो इस कामना से हिंदी का नाम परिवर्तित कर उसे 'हिंदी माने हिंदुस्थानी' जैसा सम्मिश्र नाम देने के पश्चात् भी यह समस्या वैसा ही बनी हुई है। मुसलमानों का कहना है कि हिंदुस्थानी न कहते हुए पाकस्थानी कहिए।

बाजार की बोली तथा राष्ट्रभाषा

अतः हमारे एकता लंपट वर्ग ने समझौत करने हेतु जो दूसरी सुविधा देने चाही थी वह भी मुसलमानों को संतुष्ट न कर सकी। इससे हिंदी स्वरूप ही विकृत बन जाएगा। हिंदी में अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के जो शब्द उर्दू में भी प्रयोग किए जाते हैं यही शब्द हिंदी में सम्मिलित किए जाते हैं। इस प्रकार की सम्मिश्र भाषा द्वारा ये लोग अपने विचार दूसरों तक़ पहुँचाते हैं। बाजारों में बोली जाने वाली इस भाषा को राष्ट्रभाषा कहना किस प्रकार संभव है।

जिस भाषा में किसी राष्ट्र के साहित्य की रचना की जाती है, वही भाषा उस देश की राष्ट्रभाषा कहलाती है। भारत की राष्ट्रभाषा का अर्थ है– वह भाषा जिसमें भारत के अत्युच्च विचार, दर्शन, काव्य, रसायन, वैद्यक, पदार्थ विज्ञान, यंत्रशिल्प, भूगर्भ आदि विभिन्न विज्ञान विषयक तथा राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक जीवन को व्यक्त किया जा सकता है तथा जो संपन्न तथा प्रगत भाषा है। अब इस राष्ट्रीय भाषा में व्यक्त किए जाने वाले अत्युच्च काव्य, तत्त्व, विज्ञान के लिए आवश्यक सहस्रावधि पारिभाषिक तथा अर्थपूर्ण, कोमल तथा रुचिपूर्ण, परंपरा का गूढ़ संदर्भ सूचित करने वाले, अर्थवाहक तथा ध्वनिपूर्ण शब्द किस रत्नाकर से प्राप्त करने होंगे? अरबी से? वह स्वयमेव अत्यधिक अकिंचन तथा दरिद्र भाषा है। इतनी दरिद्री है कि संपूर्ण यूरोपीय अर्वाचीन विज्ञान अरबी में अनूदित करने का प्रण जब कमाल अतातुर्क ने किया, तब स्वयं उसे अरबी भाषा इतनी अनुपयोगी प्रतीत हुई कि यदि तुर्कों को साहित्य की आवश्यकता हो तो इस पराई भाषा का त्याग करने के अतिरिक्त अन्य कोई पर्याय नहीं है, इस विचार से उसने तुर्कस्थान से इस भाषा को बाहर निकाल दिय। तुर्क खिलाफत का केंद्र था तथा अरबी खिलाफत की धार्मिक भाषा थी। परंतु तुर्कों की प्रगति और स्वाभिमान के लिए वह अनुपयुक्त प्रतीत होने पर तुर्कों ने स्वयं अरबी को निषिद्ध भाषा ठहरा दिया। उस विदेशी तथा शब्दों की दरिद्री अरबी को क्या हिंदुस्थान के स्वाभिमान तथा प्रगति के लिए उपयुक्त तथा सहायक है ऐसा समझना? अर्थात् ये सहस्रावधि पारिभाषिक तथा नए शब्द हम लोगों को हिंदी की प्रकृति से सर्वथा अनुकूल तथा जो हिंदी का मूल है उस शब्द–रत्नाकर एवं सुसंपन्न संस्कृत भाषा से ही प्राप्त करना होगा। शब्द–प्रसव की क्षमता में संस्कृत के तुल्य कोई अन्य भाषा संपूर्ण विश्व में विद्यमान नहीं है। उस संस्कृत भाषा का शब्द–रत्नाकर तथा साहित्य क्षीरसागर हम लोगों को उपलब्ध है, फिर हम लोगों को कृपणता का भिक्षापात्र हाथ में उठाकर मरुभूमि के अरबी मरुस्थल में 'पानी! पानी!' ऐसी आवाजें लगाकर व्यर्थ में क्यों भटकना चाहिए?

भाषा में भी जातीयता है

मुसलमानों को संतुष्ट करने हेतु कुछ शब्द अरबी भाषा से लिये जाएँ तथा शेष संस्कृत भाषा से। परंतु हिंदी में कितने अरबी शब्दों को स्थान देना होगा ताकि उसे मुसलमान संस्था द्वारा अथवा प्रमुख लोगों ने किसी प्रकार की कोई तालिका क्या आपके सामने प्रस्तुत की है? जिस प्रकार विधिमंडलों में जातीयता के आधार पर विशेष प्रतिनिधित्व दिया जाता है उसी प्रकार भाषा के लिए भी जातीय प्रतिनिधित्व मुसलमानों को देना आवश्यक है? तथा इसकी प्रतिशत दर क्या होना चाहिए? पाँच, पचास या पाँच सौ? इतने शब्दों को हिंदी भाषा में सम्मिलित किए जाने से तथा उसे 'हिंदी माने हिंदुस्थानी' इस अभिधान से संबोधित करने पर भी मुसलमानों को संतुष्टि नहीं होगी। क्योंकि एक सौ शब्दों के लिए सौ शब्द अरबी, तुर्की आदि विदेशी भाषाओं से लिये जाने पर ही उन्हें संतोष मिलेगा। अर्थात् हिंदी भाषा को उर्दू में परिवर्तित करने का यह दूसरा नाम है। वे लोग उनकी इस प्रतिज्ञा का स्पष्ट तथा निःसंदिग्ध शब्दों का उच्चारण करते हैं। मुसलमान इतने निर्बुद्धि नहीं हैं कि वे ऐसा मान लेंगे कि हमने उनकी प्रतिज्ञा सुनी ही नहीं है। उन्हें किसी प्रकार का कोई समझौता नहीं करना है। अपने स्वयं के बल पर उर्दू को राष्ट्रभाषा बनाने का उनका संकल्प है। पाठकों को इस विषय की पर्याप्त जानकारी नहीं है, उन्हें इसकी संकलित जानकारी तथा युक्तियुक्त समझ भी नहीं है। इसलिए कुछ कामचलाऊ, परंतु निर्विवाद प्रमाण प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

उर्दू का स्वरूप

जिस उर्दू भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने के बहुत प्रयास कर रहे हैं वह भाषा किस स्तर की है इसका एक छोटा सा नमूना पाठकों को दिखाया जाए तब वे इस बात से सहमत हो जाएँगे कि बहुसंख्यक हिंदुओं को इस प्रस्ताव का विरोध करना चाहिए। आज की प्रचलित सामान्य रचनाओं से निम्न उदाहरण लिये गए हैं–

'गालिब की शायरी में निहायत जवानी भी जगह–जगह भरी है। मजामीन भी उसने नए शामिल किए हैं, जिसे वह मसायले तसव्वुफ कहता है।'

'इतिल्ला दी जाती है कि सब लोक सायलाने मजकूर की जात या जायजाद के खिलाफ मुताल्लिक दावे रखते हों वे जिस इश्तिहार के तारीख्स हाकिम के आगे तहरीर अर्ज पेश करें। ऐसा न करने पर सायले मजकूर जुमला अगराज व मोरक– जात के लिए जरद का मजकूर बाजाब्ता बेवाक मुतसाव्विर होगा।' अब उर्दू कविता का उदाहरण देखिए–

परत बे खुरसे है शबनम को फनाकि तालिम।
हम भी हैं एक इनायत की नजर होने तक।
फिर दिल तवाफ कूये मलामत को जाए है।
पिदारका सनम्कदा वीरा किए हुए है।

अब इस प्रकार की उर्दू भाषा बंगाल, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र से रामेश्वर तक के कोटयावधि हिंदुओं के ही नहीं, लाखों मुसलमानों के लिए भी अत्यंत दुर्बोध है। हिंदुओं की अधिकांश भाषाओं से वह कितनी

विसंगत है। प्रतिकूल तथ अपरिचित है इसे कहने की आवश्यकता अब प्रतीत नहीं होती। उर्दू भाषा के ये उदाहरण हिंदू जनता के लिए मूलतः ही अत्यंत दुर्बोध हैं और उर्दू भाषा के साथ उर्दू लिपि का भी आग्रहपूर्वक हठ मुसलमान कर रहे हैं। परंतु यदि उर्दू लिपि का प्रयोग किया जाता है तो उन्हें समझना तो दूर की बात है, उन्हें पढ़ना भी असंभव होगा। मराठी वाचक भी यह बात समझ चुके होंगे।

यह उर्दू है और यह हिंदी

अब आज के एक लेख का उदाहरण लेते हैं। दोनों भाषाओं में वह कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है। उर्दू में –'अगर बर तकदीर कोई सही मोशरिक मेरा पैदा होकर इस्तेहकाक जाहिर करे या मुनमिकर कब्जा वाकई न देया किती किफालत मवाखजा की वजह से कब्जे मुर्तेहनान मोसुफमे चे खल्ला बाके हो तो मुर्तेहिनकोयखतियार होगा, कि जुज या कुल जरे रहन मयसूद तारीखे तहरीर वासीका हजासे जायदादे मजकुरावाला व दीगर जायजाद व जात मुनमिकर से वसूल कर ले और शर्ते इनफिकाक यह है के जब जरे रहना आदा कर दूँगा तो शै मशहून इमफिकाक करा दूँगा।' हिंदी में– 'समस्त धन उक्त अभिगृहिता से (मूर्तहीन) प्राप्त करा लिया। अब कुछ शेष न रहा। आज से उसका स्वामित्व भूमि पर करा दिया। आज से वह अपने आपको मुक्त भूमि का स्वामी करा लेंगे। तब तक अधिगृहिता को अधिकार होंगे वह स्वयं भूमि जोते। उक्त भूमि से वृक्षों की लकड़ी लेता रहे। जो आर्थिक हानि उसको उठानी पड़े उसको हमसे तथा हमारी समस्त चल या अचल संपत्ति से प्राप्त कर ले।'

इन दो भाषाओं में एक ही प्रकार के लिखे गए लेखों से यह स्पष्ट हो जाता है कि पाठकों को कौन सी भाषा सहजतापूर्वक समझा में आ सकती है। यह बात स्वयंसिद्ध है कि हिंदुस्थान की राष्ट्रभाषा बहुसंख्यकों के लिए अनुकूल तथा सुलभ होना आवश्यक है। इसी कारण हिंदी को ही राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त होनी चाहिए। उर्दू एक भाषा के रूप में कितनी उचित अथवा अनुचित है तथा उसमें क्या दोष है यह न सोचते हुए, वह मुसलमानों की एक पंथीय अथवा प्रांतीय भाषा ही है ऐसा कहना उचित होगा। इस रूप में अन्य प्रांतीय भाषाओं के समान उसका उपयोग सुखपूर्वक किया जाए, परंतु यहाँ जो समस्या है वह है हिंदुस्थान की राष्ट्रभाषा कौन सी होगी। उर्दू इस स्थान के लिए सर्वथा अयोग्य, अप्रगत तथा अकिंचन भाषा है, क्योंकि उसकी सहायक भाषा जो अरबी है वह संस्कृत की तुलना में अत्यधिक दीन दिखाई देती है। उसकी लिपि भी नागरी की तुलना में ज्ञात करने के लिए तथा उसे पढ़ने–लिखने या मुद्रित करने की दृष्टि से एकदम त्याज्य है।

मुसलमानों का (हठ) दुराग्रह

हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि का मुसलमानों द्वारा विरोध किया जाता है। यह केवल इस कारण कि वह हिंदुओं की संस्कृति की द्योतक है। यदि वे मुसलमान संस्कृति की द्योतक अरबीनिष्ठ उर्दू भाषा तथा लिपि का त्याग कर देंगे तो वे मुसलमान कैसे कहलाएँगे! यह वास्तविकता है। राष्ट्रभाषा बनने योग्य तथा सुलभ भाषा है यह आज की समस्या नहीं है। समस्या है दो भिन्न संस्कृतियों में विद्यमान संघर्ष की। यह हम लोगों को समझ लेना इसलिए आवश्यक हो जाता है क्योंकि केवल भाषिक चर्चा करने से मुसलमानों का मन परिवर्तन नहीं होगा तथा इसमें हम लोग जो समय नष्ट कर रहे हैं वह बच जाएगा, यह बात समझ में आ जाने के कारण हमारी शक्ति का अपव्यय नहीं होगा। मुसलमानों द्वारा स्वयं अपने लिए उर्दू का प्रयोग करने में हम लोगों को कोई आपत्ति नहीं है। परंतु उर्दू भाषा एवं लिपि को हिंदुओं पर बलपूर्वक थोपने का जो दुराग्रह मुसलमान प्रदर्शित कर रहे हैं उसे हमें नष्ट कर देना चाहिए।

सीमा प्रांत से प्रारंभ कीजिए। इस प्रांत में मुसलमान बहुसंख्यक हैं। सत्ता प्राप्त होते ही उन्होंने बोर्ड द्वारा संचालित सभी पाठशालाओं में हिंदी तथा गुरुमुखी पढ़ाना निषिद्ध करके वैदिक तथा सिख पंथ के हिंदू बच्चों को उर्दू भाषा व लिपि में पढ़ाई करना अनिवार्य कर दिया। शासकीय कार्य भी इसी भाषा में होने लगा। (हिंदू–सिख तथा दूसरे लोग दो बार इस प्रस्ताव का विरोध करते हुए बहिर्गमन कर गए, परंतु इस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।) मुसलमानों की संख्या अधिक होने के कारण उनके प्रांत में उनकी उर्दू भाषा व लिपि राष्ट्रभाषा तथा राष्ट्र लिपि को मान्यता देना उचित है। फिर गांधी और उनके अनुयायी इस बात का विरोध क्यों नहीं करते थे? फिर उसी न्याय से निजाम के राज में बहुसंख्यक हिंदुओं को उर्दू माध्यम में शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है इस बात का निषेध गांधीजी और उनके अनुयायियों द्वारा किया जाना चाहिए था।

इससे विपरीत जब मराठी लोगों ने निजाम का निषेध करने हेतु एक प्रस्ताव रखा तब गांधीजी तथा उनके अनुयायियों ने उसे दबा दिया। कश्मीर में बहुसंख्यक मुसलमानों के कारण वहाँ के हिंदू राजा ने अपना राज त्याग देने के लिए एक परप्रशंसापूर्ण निवेदन गांधीजी ने किया था। परंतु वही न्याय लगाकर निजाम अथवा भोपाल संस्थानों में हिंदू बहुसंख्यक होने के कारण वहाँ के नवाब को (मुसलमान) राज गद्दी को त्याग देना चाहिए, ऐसा कहने का साहस उनमें नहीं था। भोपाल राम राज्य है। ऐसा स्पष्ट मिथ्या तथा विद्वेषपूर्ण बहाना बनाने में गांधीजी को किसी प्रकार का संकोच नहीं हुआ था।

एक ध्यान देने योग्य भाषण

सीमा प्रांत में हिंदी को निषिद्ध किए जाने संबंधी प्रस्ताव पर विधिमंडल में भाषण देते हुए किसी हिंदू सदस्य ने मुसलमानों से कहा, 'इस प्रांत में आप मुसलमान लोग बहुसंख्यक हैं। अतः यहाँ उर्दू की राष्ट्रभाषा होगी और हिंदू बच्चों को भी उसी माध्यम में शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए, ऐसा यदि आप लोग कहेंगे तो जिन प्रांतों में हिंदुओं की संख्या अधिक है, वहाँ वे लोग उर्दू भाषा में शिक्षा ग्रहण करना निषिद्ध कर देंगे। वहाँ के मुसलमान बच्चों को हिंदी माध्यम में शिक्षा लेने को बाध्य करेंगे। अब आप लोग सोचिए।' उस हिंदू सदस्य की इस चेतावनी का उत्तर देते हुए एक मुसलमान नेता ने कहा, 'जिन प्रांतों में हिंदू बहुसंख्यक हैं वहाँ उर्दू को

निषिद्ध करने का साहस हिंदुओ में नहीं है। हिंदी को निषिद्ध करने की ताकत मुसलमानों में है।' उस मुसलमान नेता के इस मनोगत का प्रत्येक हिंदू को सदैव स्मरण रखना चाहिए। यही हम लोगों की दुर्बलता है। उस नेता के शब्द कटु अवश्य हैं, परंतु उसने जो कहा है वह सत्य है। बिहार में ८० प्रतिशत लोग हिंदू हैं। वहाँ मुसलमानों द्वारा एक प्रस्ताव रखा गया। 'शासकीय कार्य उर्दू भाषा में तथा लिपि में ही किया जाना चाहिए।' मुसलमान रुष्ट हो जाएँगे–इस भय से हिंदुओं ने उसका विरोध नहीं किया। आज बंगाल की स्थिति भी इस प्रकार की है।

बंगाल में उर्दू का विद्रोह

हम लोगों के कुछ अल्पबुद्धि बंधु भाषाशुद्धि का विरोध करते समय यह लिखते हैं कि मुसलमान जनता द्वारा उर्दू का आक्रमण किया जा रहा है यह सत्य नहीं है। बंगाल में सारी मुसलमान जनता बंगाली भाषा को ही अपनी मातृभाषा मानती है। इस बात से वे पूर्णतः अनभिज्ञ हैं कि खिलाफत आंदोलन के समय से, बंगाल के बहुसंख्य मुसलमानों की भाषा उर्दू ही होनी चाहिए, इसलिए कितना बड़ा आंदोलन चलाया जा रहा है। ढाका विश्वविद्यालय के मुसलमानों ने कहना प्रारंभ किया कि बंगाली पाठ्य पुस्तको के बहुसंख्य बंगाली शब्दों के स्थान पर उर्दू शब्दों का उपयोग किया जाना चाहिए तथा इस प्रकार की पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित की जा रही हैं। इतिहास के स्थान पर तवारीख। विकास के लिए तरक्की। देश, राष्ट्र बहुत जैसे शब्दों के लिए मुल्क, कौम, निहायत शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिएं। इसके आगे जाकर शब्दों के अतिरिक्त अर्थ के बारे में भी विवाद प्रारंभ हुआ। रवींद्र के साहित्य पर मुसलमानों ने आघात किए हैं। उपमाओं में भी मुसलमान संस्कृति का दर्शन होना चाहिए। सदैव 'भीम जैसा बलवान' ऐसा ही क्यों कहा जाता है? रुस्तुम जैसा शक्तिशाली क्यों नहीं कहा जाता? विक्रम, चंद्रगुप्त आदि के पाठ क्यों दिए जाते हैं? स्पेन पर विजय पाने वाले तारीक का पाठ दीजिए। गत माह कलकत्ता विश्वविद्यालय का महोत्सव हुआ। वंदेमातरम् राष्ट्रगीत प्रारंभ होते ही मुसलमान छात्रों ने उत्पात मचाना शुरू किया। विद्या को अधिष्ठात्री देवी सरस्वती का चित्र ध्वज पर देखते ही वे लोग आक्रोश करते हुए बोले, 'मूर्तिपूजा! बुतपरस्ती!' वह चित्र तथा ध्वज को हटाए जाने का दुराग्रह करने लगे।

भूषण कवि पर संकट के बादल

संपूर्ण बंगाली साहित्य पर मुसलमान संस्कृति की छाप लगाने के लिए आतुर बंगाली मुसलमानों को, सरसीमा प्रांत में हिंदू संस्कृति की छाप कम–से–कम हिंदुओं के लिए रखिए, ऐसी वहाँ रहने वाले हिंदुओं की माँग असह्य हो जाती है। भोपाल तथा हैदराबाद संस्थानों में हिंदू बहुसंख्यक हैं, परंतु वहाँ के हिंदू बच्चों को उर्दू भाषा तथा लिपि पढ़ाई जाती है। मुसलमानों के इस दुराग्रह के परिप्रेक्ष्य में कुछ हिंदुओं की पक्षपाती तथा भीरु वृत्ति देखिए। किसी मुसलमान ने गांधी जी को एक पत्र लिखा, ' भूषण के काव्य में मुसलमानों की निंदा की गई है।' गांधीजी ने तत्काल क्या किया? भूषण का काव्य पढ़ा? नहीं पढ़ा। वे कहते हैं, 'मैंने स्वयं भूषण का काव्य पढ़ा नहीं है, उन्हें शिवचरित्र का कोई ज्ञान नहीं था। उस विषय की हास्यास्पद अनभिज्ञता होते हुए भी किसी मुसलमान के पत्र के कारण भूषण जैसे ख्यातनाम कवि का प्रख्यात काव्य निषिद्ध ठहरा दिया तथा हिंदुओं के पाठ्य पुस्तकों में उनके काव्य के अंश नहीं सम्मिलित किए जाने चाहिए, ऐसा फतवा निकाला। इंदौर एक हिंदू संस्थान है, परंतु वहाँ के शासकीय न्यायालयों का कार्य आज भी उर्दू भाषा एवं लिपि में ही होता है।

मिथ्या आत्मश्लाघा

सबसे दुर्बल तथा पागलपन का युक्तिवाद तो यह है कि हम लोगों के शब्दों को हटाकर जो उर्दू शब्द मराठी तथा हिंदी भाषा में बलपूर्वक डाले गए हैं उन्हें अपनी मानहानि का द्योतक न मानकर, वे हम लोगों के पराक्रम के विजयध्वज हैं, इस प्रकार की आत्मश्लाघा कुछ हिंदू रचनाकार प्रदर्शित कर रहे हैं। चित हो जाने पर भी मेरी ही नाक ऊपर है ऐसा कहने जैसा ही यह कहना भी निर्लज्जता का प्रतीक है। वास्तविकतः कबूल, हजर, कायदा आदि उर्दू शब्द अपने शब्दों को हटाकर अपनी भाषा में घुसे हुए शब्द किसी समय की हम लोगों की पराजय के अवशेष हैं। पराजय के इन अवशेषों को, पराजय के उन स्मारकों को नष्ट करना ही हमारा कर्त्तव्य है। परंतु उर्दू शब्दों का बहिष्कार करना चाहिए ऐसा कहने पर मुसलमान क्रोधित होंगे इस भय से उन्हें निकालने में भय होता है तथा इस भय को अपने युक्तिवाद से छिपाना चाहते हैं। उनका पागलपन का युक्तिवाद कुछ इस प्रकार का है कि हम लोगों की भाषा में घुसे हुए ये मुसलमानी शब्द हम लोगों ने जीतकर लाए हुए मुसलमान बंदीवान, मुसलमानों पर प्राप्त की गई विजयों के द्योतक हैं, छीनकर लाए हुए शत्रु के ध्वज हैं, उर्दू को उपयोग में लाना ही स्वाभिमान का चिन्ह है। उन उर्दू शब्दों का प्रयोग करना ही स्वाभिमान है ऐसा हमें मानना होगा। आज माता, भाई, बहन, पत्नी आदि शब्दों का उपयोग कुछ शिक्षित नहीं करते। मेरी मदर सिक है, वाईफ मायके गई हुई है तथा घर में कुक करने वाला कोई नहीं है, इस प्रकार की अंग्रेजी शब्दों से बिगाड़ी गई बटलरों की भाषा बोलते हैं। वे सारे छचोर लोग अंग्रेजी भाषा पर भी बड़ी विजय प्राप्त कर रहे हैं, क्योंकि ये लोग अंग्रेजी भाषा के अनेक शब्दें को मराठी भाषा में ला रहे हैं। ये चिन्ह अंग्रेजों के राजकीय वर्चस्व के कारण पैदा हुई दास्यवृत्ति के हैं। अंग्रेजी के हिंदी, मराठी भाषाओं पर अधिकार पा लेने का यह प्रमाण है अथवा इन्हें अंग्रेजी भाषा से बलपूर्वक प्राप्त किए गए ध्वज कहना चाहिए?

इतिहासकालीन उदाहरण

यही स्थिति मुसलमानों के कार्यकाल में बलशाली बने हुए उर्दू शब्दों की भी है। पुणे के सभी नागरिक बस्तियों के नाम मुसलमानी नाम थे। पुणे जलाकर जब पुनः बसाया गया तब पेशवाओं ने इन बस्तियों को शुक्रवार, शनिवार आदि स्वकीय अभिधान दिए। इसे क्या आप लोग पेशवाओं की पराजय समझेंगे? यदि वे मुस्लिम नाम ही पुनः दिए जाते तो क्या उन्हें मराठी के विजय–चिह समझा जाता? औरंगजेब ने जब सिंहगढ़ पर अधि ाकार किया तब उसका नाम बदलकर बक्षिदाबक्ष कर दिया गया। मराठों ने केव ल

उस गढ़ पर पुनः अधिकार नहीं किया; उसका नाम भी, सिंहगढ़ कर दिया। आज भी वह इसी नाम से जाना जाता है। क्या यह मराठी की पराजय थी? यदि सिंहगढ़ की आज भी 'बक्षिदाबक्ष' नाम से ही पहचान होती, तो क्या उसे मुसलमानों से बलपूर्वक प्राप्त किया हुआ विजय ध्वज कहा जाता? मुसलमानों ने अपने शासकीय प्रलेखों में नासिक को गुलशनाबाद का नाम दिया। काशी, नालंदा को इस्लामाबाद आदि नाम दिए। हिंदुओं ने इन नामों को स्वीकार नहीं किया। काशी, प्रयाग आदि स्वकीय नाम ही निर्धारित किए। परंतु देवगिरि का परिवर्तित नाम दौलताबाद आज भी बदला नहीं है। यह क्या हिंदू संस्कृति की पराजय है? क्या दौलताबाद नाम में हिंदू संस्कृति की विजय दिखाई देती है? दौलताबाद शब्द का उपयोग करना क्या देवगिरि शब्द की पराजय कहा जाएगा? क्या यह प्रश्न प्रमाणित करने योग्य तथा रहस्यमय है? आज हम लोग हजर सिवाय इन मुस्लिम शब्दों का उपयोग करने के आदि हो चुके हैं, इन्हें त्यागे बिना ये शब्द प्रयोग में लाने लगे तो क्या यह मराठी भाषा की तथा उसके विजय की अवहेलना करना कहलाएगा? म्लेच्छ शब्दों का बहिष्कार करने की प्रवृत्ति का शिवाजी महाराज द्वारा पुरस्कार किया जाने के कारण सैकड़ों उर्दू शब्द मराठी भाषा से अस्पष्ट किए गए। शिवाजी महाराज ने मराठी भाषा पर मुसलमानों का अधिकार होने दिया तथा उसे पराजित होने दिया ऐसा अर्थ तो इससे ध्वनित नहीं होता है। इससे विपरीत स्थिति सिंध की है। वहाँ के हिंदू अपनी लिपि का भी उपयोग नहीं कर सकते। आज इन्हें 'रामायण', 'महाभारत' आदि ग्रंथों के अतिरिक्त गायत्री मंत्र छापने के लिपि उर्दू लिपि का उपयोग करना पड़ता है। इसका अर्थ क्या यह होगा कि इन कामों के लिए उर्दू लिपि पर विजय पाकर उसे यह कार्य करने पर बाध्य किया गया है? तथा सिंध के हिंदुओं द्वारा प्रचंड मुसलमान संस्कृति पर फहराए गए ध्वज के रूप में इस घटना का गौरव किया जाना चाहिए? इसे कहते हैं 'उलटी खोपड़ी'।

चर्चा का सारांश

१. एक पक्ष है उन मुसलमानों का, जो उर्दू को राष्ट्रभाषा तथा राष्ट्रलिपि बनाने के अपने दुराग्रह पर अडिग है। दूसरा पक्ष है उन लोगों का, जो मुसलमान क्रोधित हो जाएँगे इस भय से तथा मूल मुसलमानों की पक्षपाती प्रवृत्ति के कारण उर्दू को खुले रूप से तथा कट्टरतापूर्वक विरोध न करने की नीति का पालन करने वाले भीरु हिंदू हैं। इस कारण हिंदुस्थान में बंगाल, भोपाल, हैदराबाद, बिहार आदि अनेक प्रांतों में उर्दू लिपि तथा भाषा राष्ट्रभाषा–लिपि बन जाएगी। इन विभिन्न प्रांतों में शासकीय कार्य के लिए उर्दू का ही उपयोग किया जाता है। यदि हिंदुओं ने उर्दू का कट्टरतापूर्वक विरोध न किया तो कट्टर मुसलमानों की निश्चित रूप से विजय होगी।

२. मुसलमानों द्वारा नागरी का, राष्ट्रभाषा–लिपि का विरोध किया जाना केवल भाषिक समस्या से ही जुड़ा नहीं है। उन्हें हिंदुस्थान को पाकस्थान बनाना है तथा इस मतिभ्रष्ट ध्येय से उर्दू को राष्ट्रभाषा–लिपि बनाकर मुस्लिम संस्कृति की श्रेष्ठता प्रस्थापित कर हिंदू संस्कृति की पराजय करना, यह उनका एक आनुवांशिक तथा अपरिहार्य कार्यक्रम है। यह दो भिन्न संस्कृतियों का संघर्ष है। वहाँ 'हम लोग हिंदी भाषा में सौ–पचास शब्द लेते हैं, अतः आइए,' इस प्रकार की जड़ी–बूटी या औषधियों से यह रोग ठीक नहीं होने वाला। अथवा केवल 'हिंदी माने हिंदुस्थानी' कहने से भी कोई प्रभाव नहीं होगा।

३. अतः इस संघर्ष के लिए हिंदुओं को प्रकट रूप में तथा संपूर्ण शक्ति के साथ तैयार रहना आवश्यक है। एकता लंपट वर्ग ने भी यह स्वीकार कर लिया है कि लिपि के विषय में एकमत होना संभव नहीं है तथा दो लिपियों–उर्दू व नागरी का प्रयोग किया जाएगा, यह मानते हुए केवल हम लोगों के लिए नागरी को राष्ट्र लिपि बनाने हेतु प्रयास किए जा रहे हैं। यही नीति इष्ट तथा संभव है। इसी नीति के अनुसार राष्ट्रभाषा की समस्या का समाधान किया जाना भी आवश्यक है। मुसलमानों को सुखपूर्वक उर्दू भाषा का प्रयोग करने दीजिए। हम हिंदू लोगों को स्पष्ट रूप से यह घोषित करना चाहिए कि हम हिंदुओं की राष्ट्रभाषा हिंदी ही रहेगी तथा हिंदुओं के संदर्भ में इस समस्या का समाधान हो चुका है। हम लोगों को मुसलमानों का स्तुति पाठ नहीं करना चाहिए। इस देश की बहुसंख्यक अर्थात् बाईस करोड़ जनता हिंदू है। इनकी जो भाषा है वही अर्थात् हिंदी ही राष्ट्रभाषा है। बहुसंख्यकों से भाषिक व्यवहार –संबंध बनाए रखने की आवश्यकता अल्पसंख्यकों को ही अधिक है इसलिए एकता के लिए उन्हें ही प्रयास करने होंगे। इसका उद्देश हम लोगों पर उपकार करना नहीं होना चाहिए। यदि उनकी आवश्यकता हो तो वे एकता कर सकते हैं। साथ दोगे तो तुम्हारे साथ, न ही दोगे तो तुम्हारे बिना तथा विरोध करने पर तुम्हारे विरोध का सामना करते हुए हिंदुओं का भवितव्य अपनी शक्ति के अनुसार बनकर रहेगा। हिंदू–मुस्लिम एकता के सभी प्रकरणों में इसी सूत्र का उपयोग करना चाहिए। जब तक बहुसंख्यक हिंदू अल्पसंख्यक मुसलमानों से एकता करने हेतु उन्हें साष्टांग दंडवत कर रहे हैं,तब तक हिंदुस्थान को पाकस्थान बनाने की एक ही शर्त पर मुसलमान एकता बनाने की बात मान जाने की संभावना है। भाषिक प्रश्न के विषय में भी यह प्रकट तथा अपरिहार्य वास्तविकता है।

४. अब हिंदुओं की राष्ट्रभाषा हिंदी है यह निश्चित करने के बाद मुसलमानों की सम्मति का भारी लंगर, जो उनके गले में डाला जा रहा है, उसे एक बार तोड़ देने से सभी चिंताएँ समाप्त हो जाएँगी। हम हिंदुओं के राष्ट्रभाषा के विश्वविद्यालयों पर हम लोगों की विद्या की अधिष्ठात्री देवी, सरस्वती का ध्वज निःसंकोच तथा मुक्त रूप से लहराता रहेगा। संस्कृत शब्द रत्नाकर से नए–नए तथा आवश्यक पारिभाषिक शब्द उसे अनिरुद्धतापूर्वक प्राप्त हो सकेंगे। उनकी मूल प्रकृति का विकास उसकी रुचि अनुसार तथा उसके लिए योग्य ऐसे सुश्रीक तथा सुश्लिष्ट मात्रा में हो सकेगा। हम लोगों की हिंदू संस्कृति के ह्रद्गत वह निर्भयतापूर्वक प्रकट कर शेष पृष्ठ 37 पर

शेष पृष्ठ 56 का सावरकर का अध्यक्षीय काल....

स्वतन्त्र हिन्दू राज्य नेपाल को सम्मान

श्री सावरकर ने अपने अध्यक्षीय भाषण में महाराजा नेपाल एवं उनके प्रधानमंत्री श्री युद्धासमाशर राजा जी को बधाई देते हुए कहा कि इतिहास के सबसे अंधकारमय समय में भी नेपाल राज्य एक हिन्दू शासन के रूप में सुरक्षित रहने में सफल हुआ और स्वतन्त्र हिन्दू ध्वज हिमालय की चोटी पर फहरा रहा है। आज सम्पूर्ण विश्व में नेपाल राज्य एक हिन्दू राज्य के रूप में स्थिर है जो इंग्लैण्ड, फ्रांस, इटली तथा महान शक्तियों द्वारा मान्यता प्राप्त है।

हिन्दू शब्द की परिभाषा

हिन्दू महासभा के इस अधिवेशन में सावरकर जी द्वारा लिखित 'हिन्दुत्व' नामक पुस्तक में 'हिन्दू' की परिभाषा स्वीकार की गयी।

आसिंधु सिंधुपर्यन्ता यस्य भारतं भूमिका।।
पितृ भूः पूण्यभूश्चैव स वै हिन्दुरितिस्मृतः।।

अर्थात् वह प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू कहलाने का अधिकारी है जो भारतवर्ष को मातृभूमि, पितृभूमि और पुण्य भूमि मानता और दावा करता है।

दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि भारतवर्ष से प्रादुर्भूत विभिन्न पंथ के लोग हिन्दू हैं क्योंकि उनके पंथ के संस्थापकों का जन्म भारत की इसी पुण्य भूमि पर हुआ था। उक्त परिभाषा के अनुसार मुसलमान, ईसाई, यहूदी एवं पारसी हिन्दू नहीं हैं क्योंकि उनकी पितृभूमि भारत नहीं हो सकती है।

हिन्दू महासभा एक धार्मिक संस्था नहीं बल्कि यह एक राष्ट्रीय संस्था है

सावरकर जी ने हिन्दू महासभा को राष्ट्रीय संस्था बतलाते हुए कहा–

The Maha Sabha is not in the main a Hindu Dharma-Sabha but is pre-eminently a Hindu Rashtra-Sabha and is a pan-Hindu organization shaping the destiny of the Hindu nation in all of its social, political and cultural aspects.

जो यह टिप्पणी करते हैं कि हिन्दू महासभा एक धार्मिक संस्था है वे भयंकर भूल कर रहे हैं। अतः उन्हें यह बात अपने मस्तिष्क से पृथक् कर देनी चाहिए।

हिन्दू महासभा को एक संकीर्ण, भारत विरोधी संस्था होने का प्रचार कराया गया

सावरकर जी ने कहा कि कुछ हमारे सच्चे लोग भी जो देशभक्त हैं बिना सोचे–समझे हिन्दू महासभा को एक साम्प्रदायिक संस्था होने का झूठा प्रचार करते हैं। क्योंकि यह केवल हिन्दूवाद को प्रतिनिधित्व करती है और साथ ही हिन्दू अधिकारों की रक्षा करती है। अगर हिन्दू महासभा हिन्दू राष्ट्र का ही प्रतिनिधित्व करती है तो वे भारतीय राष्ट्र का दावा करते हैं... ....यह सत्य है कि पृथ्वी हमारी मातृभूमि तो मानवता हमारा राष्ट्र है। इसके अलावा वेदांती कहते हैं पूरा संसार ही उनका देश है और सभी व्यक्त जगत की वस्तुएं नक्षत्र से पत्थर तक सब अपना ही है। 'आमचा स्वदेश। भूवन त्रयामध्येवास' ऐसा तुकाराम कहते हैं।

The fact is that all patriotism i smore or less parochial and communal and is responsible for dreadful wars throughout human history. Thus the Indian patriots who instead of starting and joining some movement of a universal state, stop short of it, join an Indian movement and yet continue to mock at Hindu sanghatan as narrow and communal and parochial succeed only mocking at themselves.

लेकिन सही मायनों में अगर भारतीय देशभक्तों के लिए यदि कोई न्यायसंगत है तो वह यह कि सभी भारतीयों को समान वंशावली, समान भाषा, समान संस्कृति और समान इतिहास के सूत्र में बांधने का प्रयास करे। भारत तभी एक सूत्र में बँधेगा जब उक्त सभी शर्तों का विस्तार हो।

हिन्दू महासभा अपने दृष्टिकोण में पूर्णरूप से राष्ट्रीय है

हिन्दू महासभा को राष्ट्रीय संस्था प्रमाणित करने के लिए सावरकर जी ने निम्न तर्क प्रस्तुत किये। हिन्दूवाद का प्रतिनिधित्व करने वाली एक राष्ट्रीय संस्था होने के कारण इसका उद्देश्य हिन्दुओं का सर्वांगीण प्रतिनिधित्व करना लेकिन हिन्दूवाद का सर्वांगीण प्रतिनिधित्व करने की हैसियत से हिन्दुस्तान की पूर्ण राजनैतिक स्वतन्त्रता का दावा करता है। सौभाग्य से हिन्दू लोग भारत के इतिहास से अधिक निकट जुड़े हुए हैं अपेक्षाकृत अन्य अहिन्दू देशवासियों से... उन्होंने मुसलमानों के सम्बन्ध में कहा वे भारत को मातृभूमि की तरह मानते हैं। परन्तु उनकी पुण्यभूमि भारत के बाहर मक्का और मदीना है।

It is the Hindu who went to the gallows, faced transportation to the Andemans by the hundreds and got imprisoned by the thousands in the fight for the liberation of Hindustan.

एक संघीय भारतीय राज और अल्पसंख्यक सहयोग

सावरकर जी ने कहा कि भारतीय राज्य पूर्णरूपेण भारतीय होना चाहिए। फ्रांसिसियों की तरह द्वेषकारी नही होनी चाहिए कि सरकारी नौकरियां, कार्यालय, कर भुगतान, धर्म एवं समुदाय पर आधारित हो। किसी विशेष समुदाय को चाहे वह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई एवं यहूदी हो, को नागरिक लाभों में भेद नहीं होना चाहिए। भारतीय राज्य में सभी नागरिकों की धार्मिक सुरक्षा का पूरा अधिकार होना चाहिए, भारत में वही भाषा भारत की राष्ट्रभाषा बने जिसे भारत के बहुसंख्यक समुदाय बोलते एवं समझते हैं।

Let one man one vote be general rule irrespective of caste or creed] race or religion.

वास्तविक एकता तभी आ सकती है जब मुसलमान स्वयं इसे चाहें

यह बात हिन्दुओं को अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए, कि मुसलमानों की इस कुचाल का कारण केवल यही है कि हिन्दुओं को ही हिन्दू–मुस्लिम एकता रूपी विचार दीपिका के पीछे की लगन लगी हुई है। जिस दिन हमने उनके मन भ्रम पैदा कर दिया कि हिन्दुओं के साथ सहयोग करने का उपकार जब तक वे नहीं करते, तब तक स्वराज्य मिलना असम्भव है, उसी दिन से हमारे सम्मानीय समझौते को सर्वथा असम्भवनीय कर बैठे हैं। हमें हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिए मुसलमानों के पीछे नहीं

भागना चाहिए। बल्कि–आओगे तो तुम्हारे साथ, न आओगे तो तुम्हारे बिना, विरोध करोगे तो तुम्हारे खिलाफ भी जैसे पड़े हिन्दू राष्ट्र तो अपना भविष्य निर्माण करेगा ही।

If you come, with you, if you do not without you, and if you oppose in spite of you , the Hindu will continue to fight for their national freedom as best as they can.

भारत की मुसलमानेतर अन्य अल्पसंख्यक जातियां

सावरकर जी ने कहा कि भारत की अन्य अल्पसंख्यक जातियों के सम्बन्ध में हिन्दू राष्ट्र के दृढ़ीकरण के कार्य में, कोई विशेष कठिनाइयां नहीं उपस्थित होने पायेंगी। पारसी लोग लगातार अंग्रेजी अधिराज्य के विरुद्ध हिन्दुओं के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते आए हैं। वे धर्मान्ध नहीं हैं। महात्मा दादा भाई नौरोजी से लेकर सुविख्यात क्रांतिकारी महिला कामाबाई तक के पारसियों ने अपने हिन्दी देश भक्तों के साथ हाथ बढ़ाया है।....हमारे सभी अल्पसंख्यक स्वदेश बांधव हिन्दी राज्य में विश्वासपात्र तथा देशाभिमान नागरिक बनें।

अपने मत का सदुपयोग उन्हीं के लिए किया जाना चाहिए जो हिन्दुत्व की रक्षा का प्रण करें

सावरकर जी ने आगे कहा कि मुसलमान केवल उन्हीं को वोट देते हैं जो मुस्लिम लोगों के हितों की रक्षा का दावा करते हैं परन्तु हिन्दू लोग ऐसे लोगों को अपना मत देकर भारी भूल कर रहे हैं जो न हिन्दुओं के प्रतिनिधित्व का दावा करते हैं और न ही मुसलमानों के। अपने ओजस्वी भाषण में सबसे अन्त में वीर सावरकर ने कहा–"कौन जानता है? सम्भव है कि कुछ अधिक समय बीत जाने के बाद भविष्यत् काल में यदि उस पीढ़ी में नहीं, तो हमारे बाल बच्चों की अगली पीढ़ी में अपनी इसी हिन्दू महासभा का कोई अधिक भाग्यशाली अध्यक्ष उस समय के भावी अधिवेशन के सम्मुख इसी स्थान पर खड़ा होकर इस तरह की विजय वार्ता उच्च स्तर से घोषित करने में समर्थ होगा कि–हूण, ग्रीक और शक आक्रमणकारियों की गत काल में जो गति हुई थी, उसी प्रकार अब इस देश में ब्रिटिश वर्चस्व का कोई चिन्ह नहीं रह गया है। हिन्दू जगत का ध्वज हिमालय के उत्तुंग शिखरों पर ऊंचा उठा फहरा रहा है और अब हिन्दुस्तान पुनः स्वाधीन तथा हिन्दू जगत विजयशाली बन गया है। कर्णावती (अहमदाबाद) का यह अधिवेशन एक ऐतिहासिक एवं प्रभावशाली अधिवेशन था। सावरकर जी ने महासभा की बागडौर अपने हाथ में लेकर भ्रमित हिन्दुओं को उचित रास्ता दिखाने का प्रयास किया। अधिसंख्य मुसलमान अंग्रेजों के भड़काने के कारण अराष्ट्रवादी हो रहे थे और मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों में राष्ट्रविरोधी तत्व प्रबल रूप में पनप रहे थे। कांग्रेस इस बढ़ती हुई मुस्लिम साम्प्रदायिकता का विरोध करने की जगह मुस्लिम लीगी नेताओं के प्रति और उदार हो रही थी। इसका लाभ मिस्टर जिन्नाह और अन्य मुस्लिम लीगी नेताओं को मिल रहा था। यही कारण था कि जिन्नाह की मांगे कांग्रेस के कमजोर विरोध के कारण ब्रिटिश शासकों ने एक–एक करके मान लीं। यह बात सावरकर जी एवं हिन्दू सभाई नेताओं के लिए असह्य थी। महासभा के इस अधिवेशन में सावरकर जी ने हिन्दू सभाई नेताओं को संगठन के लिए कहा था। महासभा के इस अधिवेशन में सावरकर ने घोषणा की कि हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिए हिन्दुओं को मुसलमानों के पीछे नहीं दौड़ना चाहिए। मुसलमान जब स्वयं इस बात की आवश्यकता समझें कि हिन्दू–मुस्लिम एकता आवश्यक है, तभी एकता सम्भव हो सकेगी। उन्होंने प्रकृति के मूलभूत सिद्धांत का उल्लेख किया कि हमेशा अल्पसंख्यक समुदाय ने बहुसंख्यकों से मैत्री की है। इस बात में सच्चाई भी थी। यही कारण है कि कांग्रेस पार्टी एवं गांधी जी के भगीरथ प्रयास के बावजूद भी हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित न हो सकी और मुसलमान ब्रिटिश शासकों की कूटनीति के फल बन गये।

प्रथम प्रातः स्मरणीय

वीर सावरकर आधुनिक भारत के निर्माताओं की अग्रणी पंक्ति के नक्षत्र हैं। 'वीर सावरकर' भारत के प्रथम छात्र थे, जिन्हें देशभक्ति के आरोप में कालेज से निष्कासित किया गया। वे प्रथम युवक थे, जिन्होंने विदेशी वस्त्रों की होली जलाने का साहस दिखाया। वे प्रथम बैरिस्टर थे, जिन्हें परीक्षा पास करने पर भी प्रमाण पत्र नहीं दिया गया। वे पहले भारतीय हैं, जिन्होंने लंदन में १८५७ के तथाकथित गदर को भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम का नाम दिया। वे विश्व के प्रथम लेखक हैं जिनकी पुस्तक '१८५७ का स्वातंत्र्य समर' प्रकाशन के पूर्व ही जब्त कर ली गयी। वे प्रथम भारतीय हैं जिनका अभियोग हेग के अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में चला। संसार के इतिहास में वे प्रथम महापुरुश हैं, जिनके बंदी विवाद के कारण फ्रांस के प्रधानमंत्री एम बायन को त्याग–पत्र देना पड़ा। वे पहले कैदी थे, जिन्होंने अण्डमान में जेल की दीवारों पर कील की लेखनी से साहित्य सृजन किया। वे प्रथम मेधावी हैं, जिन्होंने काले पाली की सजा काटते हुए (कोल्हू में बैल की जगह जुतना, चूने की चक्की चलाना, रामबांस कूटना, कोड़ों की मार सहकर भी दश–सहस्र पंक्तियों को कंठस्थ करके यह सिद्ध किया कि सृष्टि के आदि काल में आर्यों ने वाणी (कण्ठ) द्वारा वेदों को किस प्रकार जीवित रखा। वे प्रथम राजनीतक नेता थे, जिन्होंने समस्त संसार के समक्ष भारत देश को हिन्दू राष्ट्र सिद्ध करके गांधी जी को चुनौती दी थी। वे प्रथम क्रांतिकारी थे, जिन पर स्वतंत्र भारत की सरकार ने झूठा मुकदमा चलाया और बाद में निर्दोष साबित होने पर माफी मांगी।

अमर सेनानी वीर सावरकर

शिवकुमार गोयल

विदेशी वस्त्रों की होली

सन् ,१६०१ में सावरकर ने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके पश्चात् उन्हें पूना के फर्ग्युसन कालेज में दाखिल करा दिया गया। फर्ग्युसन कालेज में सावरकर ने राष्ट्रभक्त छात्रों का एक दल बनाया। उन्होंने कविताएं एवं लेख लिखकर युवकों में राष्ट्रीय भावनाएं भरनी प्रारम्भ कर दीं। उनकी रचनाएं अनेक मराठी पत्रों में प्रकाशित हुईं एवं अनेक कविताओं पर पुरस्कार भी मिले। 'काल' के सम्पादक श्री परांजपे

सावरकर की रचनाओं से अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने सावरकर जी का परिचय राष्ट्रभक्त श्री बाल गंगाधर तिलक जी से करा दिया। लोकमान्य तिलक सावरकर की रचनाओं से भी अधिक उनके आकर्षक व तेजस्वी व्यक्तित्व से प्रभावित हुए। परिणामस्वरूप सावरकर श्री तिलक एवं श्री परांजपे के निकट संपर्क में आने लगे। उनकी मानसभूमि में राष्ट्रभक्ति के बीज तो पहले से विद्यमान थे ही, अब वे इन व्यक्तियों की तेजस्वी वाणी से अपने अनुकूल जलवायु पाकर अंकुरित एवं पुष्पित हो उठे। उनकी रचनाओं में युवकों के लिए देश पर मर–मिटने का आह्वान प्रति–ध्वनित होने लगा।

सन् १६०५ में सावरकर बी. ए. की तैयारी कर रहे थे। इसी बीच उन्होंने विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का जोरदार आंदोलन चला दिया। उन्होंने सबसे पहले पुणे के बीच बाजार में सार्वजनिक रूप से विदेशी वस्त्रों की होली जलाई। विदेशी वस्त्रों की होली जलाने के कार्यक्रम की अध्यक्षता स्वयं श्री लोकमान्य तिलक ने की। तिलक जी सावरकर जी की इस सफलता पर भारी प्रसन्न हुए। विदेशी वस्त्रों की होली जलाने की घटना बिजली की तरह समस्त विश्व में फैल गयी। समाचर पत्रों में इस घटना की काफी आलोचना–प्रत्यालोचनाएं हुई। परिणामस्वरूप फर्ग्युसन कालेज के अधिकारियों ने सावरकर को कालेज से निष्कासित कर दिया। इस पर भी उनको मुंबई विश्वविद्यालय से बी. ए. की परीक्षा देने की अनुमति मिल गयी और उन्होंने बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली।

बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् सावरकर जी ने अपने विश्वस्त साथियों को एकत्रित करके एक गुप्त बैठक में भारत की स्वाधीनता के लिए सशस्त्र क्रांति को मूर्त रूप देने के लिए 'अभिनव भारत' नामक एक संस्था की स्थापना की।

'अभिनव भारत' का प्रत्येक सदस्य निम्न प्रतिज्ञा लेता था–

"छत्रपति शिवाजी के नाम पर, अपने पवित्र धर्म के नाम पर और अपने प्यारे देश के लिए हम पूर्व पुरुषों की शपथ लेते हुए मैं यह प्रतिज्ञा करता हूं कि अपने राष्ट्र की पूर्ण स्वतंत्रता के लिए अंतिम सांस तक संघर्ष करता रहूंगा। मैं न तो आलस्य करूंगा और न अपने उद्देश्य से हटूंगा। मैं 'अभिनव भारत' के नियमों का पूर्ण पालन करूंगा और संस्था के कार्यक्रम बिल्कुल गुप्त रखूंगा।" सावरकर ने स्थान–स्थान पर जाकर युवकों को संगठित किया और उनमें देशभक्ति की भावना भरी। सावरकर के ओजस्वी भाषणों ने महाराष्ट्र में तहलका मचा दिया।

उन्होंने पुणे की एक सभा में भाषण देते हुए कहा– "छत्रपति शिवाजी की संतानों! जिस प्रकार शिवाजी ने मुगल साम्राज्य को ध्वंस किया, सदाशिव राव भाऊ ने मुगल–तख्त को चकनाचूर किया, उसी प्रकार तुम्हें अब भारत माँ को दासता की बेड़ियों में जकड़ने वाले अंग्रेजों के अत्याचारी साम्राज्य को चकनाचूर करके स्वाधीन राष्ट्र की स्थापना करनी है। सशस्त्र क्रांति के बल पर इस विदेशी साम्राज्य का तख्ता पलटना है।"

लन्दन को प्रस्थान

सुप्रसिद्ध देशभक्त प. श्यामजी कृष्ण वर्मा लंदन में 'इंडियन सोशियालाजिस्ट' नामक पत्र निकालते थे। उन्होंने अपने पत्र में प्रतिभाशाली छात्रों को इंग्लैंड में पढ़ाई के लिए छात्रवृत्तियां देने की घोषणा प्रकाशित की। श्री लोकमान्य तिलक ने श्यामजी कृष्ण वर्मा को पत्र लिखकर 'शिबाजी छात्रवृत्ति' सावरकर को देने की सिफारिश की। इस प्रकार विनायक दामोदर सावरकर कानून का अध्ययन करने के लिए इंग्लैंड जाने की तैयारी करने लगे। उनके श्वसुर श्री भाऊराव चिपलूणकर ने दो हजार रुपये की राशि उन्हें खर्च के लिए दी। इंग्लैंड के लिए ६ जून, १६०६ को बम्बई बंदरगाह से रवाना हुए। इंग्लैंड में पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा 'इंडिया हाउस' का संचालन करते थे। वे आर्य समाजी व कट्टर हिन्दुत्वनिष्ठ राष्ट्रीय विचारों के व्यक्ति थे। इंग्लैड में रहकर भारत की स्वाधीनता के लिए वे प्रयत्नशील थे। इंडियन सोशियालाजिस्ट के माध्यम से भारतीयों में राष्ट्रीय भावनाओं का प्रचार कर रहे थे। उन्होंने इंग्लैंड में 'होमरूल' का आंदोलन भी चलाया था। सावरकर जी इंग्लैंड में उनके इंडिया हाउस में ही ठहरे।

सन् १६०६ में सावरकर ने 'फ्री इंडिया सोसायटी' की स्थापना की। भाई परमानंद,

सेनापति बापट, मदनलाल ढींगरा, लाला हरदयाल, बाबा जोशी, महेशचरण सिन्हा, कोरगांवकर, हरनाम सिंह आदि भारतीय देशभक्त युवक इसके सदस्य बन गये। 'फ्री इंडिया सोसायटी' के तत्वावधान में बैठकों का आयोजन करके भारत की स्वाधीनता के लिए योजनाएं बनाई जाने लगीं। सावरकर ने सोसायटी की पहली बैठक में अपना ओजस्वी भाषण देते हुए कहा– "अंग्रेजी साम्राज्य को भारत से तभी समाप्त किया जा सकता है, जब भारतीय युवक हाथों में शस्त्र लेकर मरने–मारने को कटिबद्ध हो जाएं। सशस्त्र क्रांति के द्वारा ही भारत की स्वाधीनता संभव है। अतः हमें भारतीयों को इसके लिए तैयार करना है, उनकी शस्त्रास्त्रों से सहायता करनी है।"

सावरकर ने लंदन विश्वविद्यालय में

कानून के अध्ययन के लिए प्रवेश लिया हुआ था। वे विश्वविद्यालय में नाममात्र को जाते थे। अपना अधिकतकर समय वे ब्रिटिश लाइब्रेरी में बैठकर विभिन्न देशों की राजनीतिक स्थिति के अध्यन में लगाने लगे। इटली के क्रांतिवीर मैजिनी के जीवन से वह बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने मैजिनी का जीवन चरित्र लिखा। सन् १९०६ में उन्होंने विभिन्न ग्रंथों का अध्ययन करने के पश्चात् 'सिखों का स्फूर्तिदायक इतिहास' नामक ग्रंथ लिखा। इसी समय उन्होंने इंग्लैंड की विशाल 'लायब्रेरी' में अथक अध्ययन करने के पश्चात् '१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य समर' नामक ऐतिहासिक ग्रंथ लिखा। अंग्रेज इतिहाकारों और अधिकारियों ने १८५७ के प्रथम स्वातन्त्र्य समर को 'गदर', 'लूट' और 'विद्रोह' जैसे नाम देकर बदनाम किया हुआ था। सावरकर ने सबसे पहले अपने इस ग्रंथ में पूर्ण तथ्य देकर यह सिद्ध किया कि १८५७ की क्रांति गदर या लूट नहीं अपितु वीर मंगलपांडे, वीरांगना लक्ष्मीबाई, बिहार केसरी बाबू कुंवरसिंह, तात्या टोपे आदि सैकड़ों राष्ट्र वीरों द्वारा बलिदान देकर भारतीय स्वाधीनता के लिए किया गया पहला महान् युद्ध था।

'१८४७ का प्रथम स्वातन्त्र्य समर' सन् १९०८ में सबसे पहले मराठी में लिखा गया। सावरकर ने इस ग्रंथ के कुछ महत्वपूर्ण परिच्छेद अंग्रेजी में अनुवाद करके फ्री इंडिया सोसायटी की सभा में सुनाये। गुप्तचर पुलिस को जब इस पुस्तक का पता चला तो पुस्तक जब्त करने के आदेश दे दिये गये। बड़ी सावधानी से पुस्तक की पाण्डुलिपि भारत भेज दी गयी। भारत में इसे गुप्त रूप से प्रकाशित करने का प्रयास किया गया, किन्तु पुलिस ने मद्रणालयों पर छापे मारे, जिससे पुस्तक प्रकाशित न हो सकी। मराठी से अंग्रेजी में अनुवाद करके उसे सबसे पहले हालैंड में प्रकाशित किया गया। पुस्तक की हजारों प्रतियां फ्रांस भेज दी गयीं। ब्रिटिश सरकार ने इस महान ऐतिहासिक पुस्तक को गैर कानूनी घोषित करके प्रकाशित होने से पूर्व ही जब्त कर लिया था। पुस्तक प्रकाशित हुई तो इसकी कुछ प्रतियां सभी देशों में पहुंच गयीं। भारत में भी कुछ प्रतियां गुप्त रूप से पहुंचा दी गयीं।

इस महान ऐतिहासिक ग्रंथ का दूसरा संस्करण मैडम कामा, लाला हरदयाल आदि क्रांतिकारियों ने प्रकाशित कराया। उर्दू, हिन्दी, पंजाबी आदि भाषाओं में भी अनुवाद प्रकाशित किये गये। लाला हरदयाल ने अमेरिका से प्रकाशित होने वाले 'गदर' पत्र में इस ग्रंथ को धारावाहिक प्रकाशित किया। '१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य समर' इतना प्रसिद्ध हुआ कि क्रांतिकारी इसे सशस्त्र क्रांति के तत्वज्ञान की गीता कहकर पुकारने लगे। इस महान् क्रांतिकारी ग्रंथ का तीसरा संस्करण आगे चलकर सरदार भगतसिंह ने गुप्त रूप से प्रकाशित कराया। क्रांतिकारियों को इसके अध्ययन से भारी प्रेरणा प्राप्त हुई। यह ग्रंथ इतना लोकप्रिय हुआ कि इसकी एक–एक प्रति तीन–तीन सौ रुपये तक में बिकी।

यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने '१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य समर' ग्रंथ से ही प्रेरणा पाकर वीर सावरकर से भेंट की और उनकी प्रेरणा से ही विदेश जाकर 'आजाद हिन्द फौज' का निर्माण किया। आजाद हिन्द फौज का प्रत्येक सैनिक इस महान् ग्रंथ से प्रेरणा लेता था। सैनिक छावनियों में इस ग्रंथ की प्रतियां वितरित की जाती थीं।

'१८५७ का प्रथम स्वातन्त्र्य समा' के प्रचार से भारतीय यौवन स्वाधीनता के लिए मचल उठा। वीर सावरकर ब्रिटिश शासन की आँखों में खटकने लगे। श्यामजी कृष्ण वर्मा 'इंडिया हाउस' का नेतृत्व सावरकर पर छोड़ फ्रांस चले गये। सावरकर ने खुनकर लेखों, कविताओं एवं भाषणों द्वारा इंग्लैंड में भारत की स्वाधीनता के लिए सशस्त्र क्रांति की योजना का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। आयरलैंड, अमेरिका आदि देशों के क्रांतिकारियों से सावरकर ने सक्रिय संबंध स्थापित किये और उनके अनुभवों का उपयोग किया। जर्मनी में अंतर्राष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस हुई तो उसमें सावरकर ने सरदार सिंह राणा व श्रीमती रुस्तम भीखाजी काम को भारत के प्रतिनिधि के रूप में भेजा। वीर सावरकर द्वारा निर्मित आठ कमलों और वन्देमातरम् मन्त्र से अंकित भारत का पहला तिरंगा झंडा कामा ने जर्मनी कांग्रेस में फहराया था। सावरकर ने रूसी क्रांतिकारियों से बम बनाने की विधि सिखवाकर दो युवक गुप्त रूप से भारत भेजे थे। उन युवकों के पास बम बनाने की विधि की रूसी से अनुदित पुस्तक की प्रतियां और पिस्तौलों का संग्रह था।

सावरकर ने बड़े–बड़े ग्रंथों को बीच से खोखला करके उनमें पिस्तौल, रिवाल्वर छिपाकर भारत भेजे। वह भारत के क्रांतिकारियों को शस्त्रों से सुसज्जित कर देना चहाते थे। ब्रिटिश गुप्तचरों को संदेह हुआ और पिस्तौलों के एक–दो पार्सल पकड़े गये। सन् १९०७ में '१८५७ के प्रथम स्वान्तत्र्य समर' की अर्धशताब्दी शब्दांकित बैज बनवाये गये। देशभक्त भारतीय विद्यार्थी १० मई को बैज लगाकर इंग्लैंउ के बाजारों में निकले, यूनिवर्सिटी गये। अंग्रेजों प्रोफेसर ने क्रुद्ध

होकर अब १८५७ के शहीदों को 'डाकू' और 'लुटेरे' कहा तो भारतीय छात्र उनसे भिड़ गये। इस घटना ने एक आंदोलन का रूप ले लिया और भारतीय देशभक्त छात्रों ने लंदन यूनिवर्सिटी का बहिष्कार कर दिया। विश्व के सभी समाचार–पत्रों ने इस आंदोलन पर सम्पादकीय लेख तक लिखे।

इंग्लैंड में अभिनव भारत के तत्वावधान में आयोजित सभा में तात्या टोपे, झांसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई, बिहार केसरी वीर कुंवरसिंह आदि देशभक्तों को श्रद्धांजलियां अर्पित की गयी। सावरकर जी ने सभा में भाषण देते हुए कहा–"आज १८५७ के महान् स्वातन्त्र्य समर की अर्द्धशताब्दी के ऐतिहासिक दिन हमें, छत्रपति शिवाजी महाराज की प्रतिमा के सम्मुख, क्रांतिवीर तात्या टोपे, लक्ष्मीबाई, वीर कुंवर सिंह, मंगल पाण्डे आदि हुतात्माओं के मार्ग का अनुसरण करके, अंग्रेजी साम्राज्य को ध्वस्त करने की प्रतिज्ञा लेनी चाहिए। अंग्रेजी साम्राज्य को भारत से ध्वस्त किये बिना हम चैन से नहीं बैठेंगे।" इंग्लैंड के ब्रिटिश अधिकारियों को जब इस समारोह की रिपोर्ट मिली तो उन्होंने पुलिस विभाग से सिफारिश की कि सावरकर की प्रत्येक गतिविधि पर अत्यंत सावधानीपूर्वक निगरानी रखी जाये। यह भारतीय युवक ब्रिटिश शासन के विरुद्ध भयंकर षड्यंत्र रच रहा है। सावरकर ने रूस, फ्रांस, स्पेन, चीन, अमेरिका, जर्मनी आदि के समाचार–पत्रों में भारत की स्वाधीनता के पक्ष में तर्क संगत लेख लिखे। वे कलकत्ता के युगान्तर एवं मुंबई के कुछ मराठी पत्रों को भी नियमित अपने लेख भेजते थे। उनके लेखों को पढ़कर विदेशों के अनेक समाचार पत्रों ने स्पष्ट लिखा–"भारतीयों की स्वाधीन होने की मांग बिल्कुल न्यायोचित है। अब उन्हें अधिक समय तक पराधीन नहीं रखा जा सकता।"

करजन वायली का वध

इंडिया हाउस के कमरे में सावरकर के सम्मुख एक पंजाबी युवक मदनलाल ढींगरा बैठा हुआ था। युवक ढींगरा पंजाब से अध्ययन के लिए इंग्लैंड आया था। युवक ढींगरा ने सावरकर से भारत की स्वाधीनता के महान् कार्य में योग देने की इच्छा प्रकट की। सावरकर ने कहा कि क्रांति के मार्ग पर चलना अत्यंत कठिन है। बड़े–बड़े साहसी व्यक्ति भी इस मार्ग से फिसल जाते हैं। यदि तुम कुछ करना ही चाहते हो तो परीक्षा दो।

मदनलाल ढींगरा बलि–पथ का वास्तविक राही था। अंग्रेजों द्वारा किये गये भारतीयों पर अत्याचारों ने उसके हृदय को झकझोर डाला था। वह अपना बलिदान देकर अत्याचारी अंग्रेजों से बदला लेने के लिए उतावला हो रहा था। उसने सावरकर से कहा–"मैं मातृभूमि के चरणों में अपना सर्वस्व ही निछावर करना चाहता हूं। आप मेरी कठोर परीक्षा ले सकते हैं।"

सावरकर ने युवक ढींगरा को आजमाने के लिए उसकी हथेली में पैना सुआ घुसेड़ दिया। वीर ढींगरा के माथे पर शिकन तक न आयी। वह धैर्य से मुस्कराता रहा। सावरकर उसकी दृढ़ता से बहुत प्रभावित हुए और उसे अपने दल में सम्मिलित कर लिया। १ जुलाई, १६०६ को लंदन के इम्पीरियल इंस्टीट्यूट के जहांगीर हाल में

मदनलाल ढींगरा ने सर करजन वायली नामक एक अंग्रेज अधिकारी को गोली का निशाना बना दिया। अंग्रेजों की भरी सभा में एक भारतीय युवक के इतने साहस को देखकर अंग्रेज कांप उठे। सभा में सन्नाटा छा गया और भगदड़ मच गयी। मदनलाल ढींगरा को गिरफ्तार कर लिया गया।

अंग्रेज भक्त कुछ भारतीयों ने अंग्रेजों की सहानुभूति अर्जित करने के लिए वायली की हत्या की निंदा करने के लिए एक सार्वजनिक शोक सभा का आयोजन किया। सभा के अध्यक्ष सर आगा खां थे। सभा की समाप्ति पर सभाध्यक्ष आगा खां ने शोक प्रस्ताव पढ़ते हुए कहा–"इस हिंसक व निंदनीय कार्य की सर्व सम्मति से कड़ी भर्त्सना की जाती है।" इसी बीच सभा में खड़े होकर सावरकर गरज उठे–"सर्व सम्मति से नहीं, मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूँ।"

उपस्थित व्यक्तियो ने देखा कि पीछे सावरकर निर्भीकतापूर्वक खड़े हुए इस प्रस्ताव का विरोध कर रहे थे। अंग्रेज एक भारतीय युवक का इतना अनुपम साहस देखकर जल–भुन उठे। पामर नाम के एक अंग्रेज ने सावरकर को घूंसा मारा। प्रत्युत्तर में सावरकर के एक भारतीय साथी ने अपनी छड़ी से उस अंग्रेज का सिर फोड़ दिया। शोक प्रस्ताव बीच में ही अधूरा रह गया। ब्रिटिश अधिकारियों को यह निश्चय हो गया कि मदनलाल ढींगरा ने सावरकर की प्रेरणा से ही वायली की हत्या की है। सावरकर ने 'टाइम्स' में एक लेख लिखकर शोक सभा की वैधता को चुनौती देते हुए कहा–"जब तक मिस्टर ढींगरा के अभियोग का अदालती निर्णय न हो, तब तक इस प्रकार की निंदा का कोई भी प्रस्ताव पास करना गैर कानूनी है। इस प्रस्ताव से अभियोग पर प्रभाव पड़ सकता है, इसीलिए मैंने इसका विरोध किया।" वीर सावरकर की तर्क बुद्धि देखकर अंग्रेज चकित हो उठे। मदनलाल ढींगरा पर मुकदमा चलाया गया और १७ अगस्त, सन् १६०६ को उन्हें फाँसी दे दी गयी। फाँसी से पूर्व शहीद ढींगरा ने अपना विस्तृत वक्तव्य देते हुए कहा–"एक हिन्दू के नाते मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि मेरे देश का अपमान साक्षात् ईश्वर का अपमान है और मैं देश का अपमान करने तथा हिन्दू युवकों को गोलियों से भूनने के जिम्मेदार अंग्रेज अधिकारी का वध करना अपना परम कर्तव्य समझता हूँ।"

ऐतिहासिक मृत्यु पत्र

वीर सावरकर को ब्रिस्टन जेल में बंद कर दिया गया। उन्होंने मन में विचार किया कि उन्हें अनेक भयंकर आरोपों के कारण फाँसी पर निश्चित लटकाया जायेगा। उन्होंने अपनी पूज्या भावज को अपने अन्तिम पत्र के रूप में मृत्यु पत्र लिखा। वह ऐतिहासिक मृत्यु पत्र मराठी काव्य में लिखा गया। उन्होंने इसमें निम्न भावनाएं व्यक्त कीं–

"आकाश पर वैशाख मास का चन्द्रमा हास्य कर रहा था। उसकी चांदनी चहुं ओर छिटकी हुई थी। जिस माँ की लता को बाल ने जल सिंचन किया था वह अपने छोटे फूलों की महक से फूल रही थी। गोकुल की

तरह घर में आनंद मंगल हो रहा था, क्योंकि सभी आदरणीय संबंधी आये हुए थे। उन नवयुवकों की आदर्श दीप्ति, तेज और धैर्य देखकर स्वयं कीर्ति भी नाचती थी। नवयौवन के प्रेम से हम लोगों के हृदय पुष्प खिल रहे थे और सच्चरित्रता की सुगन्ध से सुगन्धित हो रहे थे। दिव्य लता और वृक्षों से हमारा घर उद्यान की तरह शोभा पाता था। ऐसे समय प्रिय भाभी! तुम्हारी कुशलता के कारण भोजन और भी स्वादिष्ट बनता था। हम लोग वार्तालाप करते हुए चांदनी में भोजन करने बैठते थे। उस समय कभी–कभी श्री रामचन्द्र जी के बनवास की कथा, इटली देश के स्वतंत्र होने का इतिहास कोई कहने लगता, वीरवर तानाजी के वीर गीत हम लोग गाने लगते। कभी –कभी चित्तौड़गढ़ और पुणे के शनिवार वाड़े की वार्तालाप होने लगती। ऐसे समय जब भारत माता का स्मरण आता तो शत्रुओं को छिन्न–भिन्न करने हेतु अत्यन्त द्रवित हृदय होकर मैं सपना संजोने लगता। प्यारी भावज! वह रमणीक अवसर, वह प्रिय जनों का मधुर सहवास, वह चंद्रप्रकाश, वे नवकथाएं, वे स्मरणीय रातें, राष्ट्र को बंधनमुक्त कराने का वह दिव्य लक्ष्य, उनकी पूर्ति हेतु किये गये दृढ़ निश्चय आदि बातों का तुझे स्मरण है। तुझे स्मरण है देवि बहिनी! उस समय युवक संघ ने कहा था– "हम बाजीप्रभु बनेंगे और युवतियों ने भी गर्व के साथ कहा था हम भी चित्तौड़गढ़ की वीरांगनाएं बनेंगी।" बहिनी! हमने व्रत अंधेपन में स्वीकार नहीं किया है। आज तक का इतिहास जिसको प्रकट रूप से दिव्य दाहक कहता है उसी सतीव्रत को प्यारी भावज, हमने सोच–समझकर ही धारण किया है। 'देवि बहिनी! उस समय प्रियजनों के साथ की हुई प्रतिज्ञाएं स्मरण करो तथा आज की अवस्था देखो। तुम देखोगी कि पूरे आठ साल भी नहीं होने पाए और हमारा उद्देश्य इतना अधिक सफल हो गया है। ऐसे समय, बताओ, मन में उल्लास क्यों न हो? देखो कन्याकुमारी से लेकर हिमालय तक इस देश में हलचल मच गयी है और यह राष्ट्र दीनता को त्याग वीरता को ग्रहण कर रहा है। रघुवीर के चरणों में भक्तों की अपार भीड़ लगी हुई है और उधर यज्ञ–कुण्ड में हुताशन भी प्रदीप्त हो रहा है। उस यज्ञ को करने के लिए जो लोग दीक्षा ले चुके हैं उनकी परीक्षा का समय आने पर पूछा जाता है– "समग्र विश्व की मंगल कामना हेतु कौन आहुति डालने के लिए तैयार है?" साध्वी भाभी! इस दिव्यार्थ निमंत्रण को पाकर हमने गर्ज कर कहा–'हमारा कुल प्रस्तुत है'। यह कहकर हमने ईश्वरीय सम्मान प्राप्त किया है। हम लोग कह चुके हैं कि हमारे शरीर धर्म के लिए निछावर किये जायेंगे। भाभी! वह कहना अर्थहीन नहीं था। अनन्त यातनाओं को सहकर भी हमारा धैर्य नहीं टूटा और हमारा निष्काम कर्मयोग भी खंडित नहीं हुआ! उस समय प्रियजनों के साथ की हुई प्रतिज्ञाएं सत्य सिद्ध हो रही हैं। अपनी माँ को बंधनमुक्त करने के लिए प्रज्जवलित अग्निकुंड में अपना सर्वस्व जलाकर हम आज कृतार्थ हो गये हैं।

"मातृभूमि! तेरे चरणों पर मैं अपना मन अर्पण कर चुका हूं। मेरा वक्तृत्व, वाग्वैभव, मेरी नयी कविता सभी तेरे चरणों में अर्पित करता हूं। मेरे लेखों में भी कोई अन्य विषय नहीं! तेरे स्थंडिल पर प्यारे मित्र संघ को डाल चुका हूं, अपना तन, मन, धन और यौवन सभी दे चुका हूं। तेरा कार्य ईश्वरीय कार्य है, इसलिए तेरी सेवा में भगवान की सेवा दिखायी दी। प्रज्जवलित अग्नि में अपनी भावज, पुत्र, कान्ता और अग्रज को भेंट कर चुका हूं और मैं स्वयं अपना शरीर भेंट चढ़ाने के लिए प्रस्तुत हूं। यही क्या! यदि हम सात भाई भी होते, तो उनका बलिदान तेरे चरणों में होता। इस भारत भूमि की तीस करोड़ संतान हैं। जो मातृभूमि में लगे हुए हैं वे धन्य हैं। हमारा कुल भी उनमें ईश्वरीय अंश के समान है। निर्वंश होकर भी हमारा वंश अखंड हो गया। वंश चाहे अखंड हो चाहे न हो, पर मातृभूमि! हमारे उद्देश्य पूरित हों। प्रज्जवलित अग्नि में माता के बंधन तोड़ने के लिए सर्वस्व जलाकर हम कृतार्थ हो गये हैं। प्यारी भावज! इस तरह सोचकर अपने कुल की सार्थकता समझिये! श्री पार्वती जी ने हिम गिरि की चोटियों पर तप किया है और कई राजपूतनियाँ हँसते–हँसते प्राणों की आहुति दे चुकी हैं। प्यारी भावज! भारतीय ललनाओं में वह तेज बल आज भी नष्ट नहीं हुआ है, इस बात को प्रमाणित करने के लिए, भावज! तुम्हारा समस्त व्यवहार वीरांगना की तरह होना चाहिए। देवि, यहाँ से तुझे यही संदेश है, तेरे वत्सल चरणों को यहीं से मैं प्रणाम करता हूं। मेरा प्रेम पूर्वक प्रणाम स्वीकार करो। मेरी प्यारी पत्नी को आलिंगन कह देना। आज तक का इतिहास जिसको प्रकट रूप से दिव्य–दाहक कहता है, उसी सतीव्रत को, प्यारी भावज! हमने सोच–समझकर स्वीकार किया है।"

समुद्र-तरण

लंदन में मजिस्ट्रेट ने सावरकर पर भारत ले जाकर मुकदमा चलाने का निर्णय दिया। सावरकर को इंग्लैंड से मोरिया जलयान द्वारा भारत लाया जा रहा था। जहाज पर गोरों का बड़ा सख्त पहरा था। पिंजड़े में बंद सिंह लाल मुंह के फिरंगियों के चंगुल से मुक्त होने की योजना में तल्लीन था।

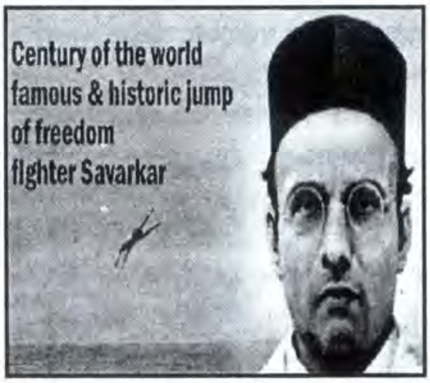

वीर सावरकर के मस्तिष्क में छत्रपति शिवाजी द्वारा औरंगजेब के कारागार से मुक्त होने की योजना घूम गयी। उन्होंने विचार किया कि अंग्रेजी साम्राज्य की जेलों में यातनाएं सहन करने की अपेक्षा मुक्त होकर मातृभूमि को स्वाधीन कराने में योग देना कहीं अच्छा है। फाँसी पर चढ़ने की अपेक्षा अंग्रेज अधिकारियों से दो–दो हाथ करते हुए शहीद हो जाना कहीं अधिक सार्थक है। उन्होंने गोरों के चंगुल से मुक्त होने का निर्णय लिया।

८ जुलाई सन् १९१० को मार्सेल बन्दरगाह के निकट जहाज पहुंचने ही वाला था कि सावरकर शौच के बहाने जहाज के पाखाने में जा घुसे। बड़ी स्फूर्ति के साथ वे उछलकर पोर्टहोल को पकड़कर छेद से 'जय स्वातन्त्र्य लक्ष्मी' का उद्घोष शेष पृष्ठ 18 पर

सावरकर का अध्यक्षीय काल (१६३७-१६४२)

वीरेश त्यागी

वर्ष १६३७ का शुभारम्भ हिन्दू महासभा के इतिहास के एक क्रांतिकारी युग के रूप में हुआ। अभी तक उसे कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग की नीतियों का सामना करने के लिये कोई प्रभावशाली व्यक्तित्व नहीं मिला था कि उत्तर में प्रतिक्रिया की आवाज ब्रिटिश शासन के कानों तक पहुंच सके। यही कारण था कि "साम्प्रदायिक निर्णय" को हिन्दू महासभा के विरोध के बावजूद ब्रिटिश शासन के प्रधान मंत्री मैकडानल को घोषणा करने में कोई हिचक नहीं हुई। क्योंकि ब्रिटिश शासन की दृष्टि में सबसे बड़ा संगठन कांग्रेस था परन्तु उसने इस सम्बन्ध में उदासीन नीति का परिचय दिया। कांग्रेस की इस उदारवादी नीति एवं ब्रिटिश शासन की पक्षपात पूर्ण नीतियों के कारण मुस्लिम साम्प्रदायिकता को बढ़ावा मिल रहा था। परिणामस्वरूप मुस्लिम लीग की पाकिस्तानी योजना को बल मिल रहा था। इस समय मुस्लिम लीग की राष्ट्र विरोधी नीतियों के प्रबल विरोध की आवश्यकता थी। अभी तक न तो हिन्दू महासभा ने कोई प्रभावशाली राष्ट्रव्यापी आंदोलन किया और न ही कोई उसके पास सुदृढ़ आधार ही था। क्षीण धुरी पर चल रही हिन्दू महासभा में गति देने के लिए मजबूती की आवश्यकता थी। साथ ही सबल आंदोलन को चलाने के लिए सबल व्यक्तित्व वाले एक प्रभावशाली नेता की आवश्यकता थी।

ऐसे समय में हिन्दू महासभा की बागडोर एक ऐसे प्रतिभा सम्पन्न, प्रभावशाली वक्ता, साहित्यकार, लेखक, दार्शनिक, राजनैतिक नेता के हाथ में सौंपी गयी जो मंच पर पहुंचते ही ज्वार उत्पन्न कर दे। ऐसे प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति का नाम था विनायक दामोदर सावरकर।

स्वातन्त्र्य वीर सावरकर जिन्होंने अण्डमान की कठोर से कठोर यातनाएं सहीं। उन्हें २३ दिसम्बर १६१० को काला पानी एवं नजरबन्दी मिलाकर ५५ वर्षों का (दो जन्मों का) कारावास का दण्ड सुना दिया गया। स्थिर चित्त एवं महान देशभक्त को यह कठोर सजा डिगा न सकी। रत्नागिरि में नजरबन्दी के बाद १६३७ में उन्हें बिना शर्त मुक्त कर दिया गया।

इस महान देशभक्त के जेल से छूटते ही विभिन्न राजनैतिक दलों ने उन्हें शामिल होने के लिये प्रस्ताव भेजे। समस्त जनमत ने आपका हृदय से अभिनन्दन किया। इस क्रान्तिकारी नेता के स्वागत के लिये कांग्रेस के नेता भी बैठे थे। उनकी रिहाई पर एक ओर पं० जवाहरलाल नेहरू तथा श्री राजगोपालाचारी और दूसरी तरफ शुद्ध राष्ट्रवादी विचारधारा के पोषक और अण्डमान में एक साथ मातृभूमि की स्वतन्त्रता हेतु कारावास सहने वाले भाई परमानन्द जी ने उनसे सम्बन्ध स्थापित कर हिन्दू महासभा में प्रवेश लेने का अनुरोध किया। महान दार्शनिक एवं राजनैतिक के हृदय में हिन्दुत्व भाव कूट–कूट कर भरा हुआ था। उन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों में हिन्दुत्व की रक्षा करना अपना परम कर्तव्य समझा और कांग्रेस के आमंत्रण को अस्वीकार करते हुए, हिन्दू महासभा में प्रवेश करते हुए यह उद्घोष किया, "जब तक मेरे देह में रक्त की एक बूंद भी शेष है मैं अपने को हिन्दू कहूंगा और हिन्दुत्व के लिये लड़ता रहूंगा।"

सावरकर जी के हिन्दू महासभा में आगमन से हिन्दू महासभा में एक भूचाल आ गया। सुप्त गति से चलने वाली महासभा अब कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग के समानान्तर का दावा करने लगी और यह दावा मात्र दिखावा न था। बल्कि अभी तक ब्रिटिश सरकार महासभा के संगठन को जो निष्क्रिय समझती रही अब बड़े ही गम्भीरता की दृष्टि से देखने लगी। मुस्लिम लीग की दृष्टि में हिन्दू महासभा जैसी कोई संगठन ही नहीं था। अब सावरकर जी के आने पर वह भी आशंकित थी। सावरकर जी ने महासभा मंच पर आते ही बढ़ती हुई मुस्लिम साम्प्रदायिकता पर नकेल लगाने के लिए हिन्दू राष्ट्रवाद का प्रचार करने पर बल दिया। हिन्दू महासभा के आन्दोलन में द्रुतगति से परिवर्तन आया। अभी तक महासभा केवल राजनैतिक भाषा ही बोलती थी और चुनावों में इक्के–दुक्के प्रत्याशी खड़े करती थी। सावरकर जी के आने से महासभा ने पूर्णरूपेण राजनैतिक भेष धारण कर लिया और आम चुनावों में कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग का मुकाबला करने के लिए तैयार हो गयी। रत्नागिरि ज़िले की नजरबन्दी से मुक्त होने के पश्चात् सावरकर जी ने सर्वप्रथम महाराष्ट्र में हिन्दू संगठन के हेतु दौरे लगाने प्रारम्भ कर दिये। दौरे का मुख्य उद्देश्य हिन्दू संगठन था।

हिन्दू महासभा का १६ वां अधिवेशन ३० दिसम्बर १६३७

कर्णावती (अहमदाबाद) महासभा के इस अधिवेशन की अध्यक्षता करने के लिए भाई परमानन्द जी ने सावरकर जी का नाम प्रस्तावित करते हुए उनका परिचय देशभक्त के साथ राजा के रूप में कराया। तालियों की गड़गड़ाहट के साथ इस प्रस्ताव का लोगों ने स्वागत किया। प्रारम्भ में आभार प्रदर्शन और स्वतन्त्र हिन्दू साम्राज्य नेपाल का अभिवादन करते हुए वीर सावरकर ने अपना भाषण इस प्रकार आरम्भ किया।

शेष पृष्ठ 50 पर

वीर विनायक दामोदर सावरकर 135वीं जयंती की चित्रावली

विज्ञापन हेतु भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त डी.ए.वी. नं.-124778
नई दिल्ली पी.एस.ओ. में पोस्ट करने का दिन बुधवार-बृहस्पतिवार
डाक पंजीकरण संख्या D.L. (N.D.)-11/6129/2016-17-18
रजि सं. 29007/77

वीर विनायक दामोदर सावरकर 135वीं जयंती की चित्रावली

-: तत्काल ग्राहक बनें :-

सदस्यता शुल्क

वार्षिक..150/- रुपये

आजीवन सदस्य..................................1500/- रूपये

ड्राफ्ट या मनीआर्डर : "हिन्दू सभा वार्ता" के नाम भेजें।

कार्यालय :- हिन्दू महासभा भवन, मंदिर मार्ग, नई दिल्ली-110001

नई दिल्ली पी.एस.ओ. में पोस्ट की गई डाक पंजीकरण संख्या D.L. (N.D.)-11/6129/2016-17-18
रजि सं. 29007/77

साप्ताहिक
हिन्दू सभा वार्ता

दिनांक 30 मई से 12 जून 2018 तक (संयुक्तांक)

प्राप्तेषु

स्वत्वाधिकारी अखिल भारत हिन्दू महासभा के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक मुन्ना कुमार शर्मा द्वारा स्कैन 'एन' प्रिन्ट, 115, कीर्ति नगर इन्डस्ट्रीयल एरिया, दिल्ली मुद्रित तथा हिन्दू महासभा भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित। दूरभाष 011-23365138, 23365354
E-mail : akhilbharat_hindumahasabha@yahoo.com, editor.hindusabhavarta@akhilbharathindumahasabha.org
सम्पादक : मुन्ना कुमार शर्मा, प्रबंध सम्पादक : वीरेश कुमार त्यागी

इस पत्र में प्रकाशित लेख व समाचारों की सहभागिता, संपादक-प्रकाशक की नहीं है। सम्पूर्ण विवादों का न्यायिक क्षेत्र नई दिल्ली है।